https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.) द्वारा प्रकाशित

संस्थापक संपादक
स्व. फतेहचंद

SHODH SAMALOCHAN

शोध-समालोचन (त्रैमासिक)

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REREREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES QUARTTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

वर्ष-13, अंक-2 अप्रैल-जून / 2026 (भाग-3) आईएसएसएन : 2348-5639

संरक्षक
• डॉ. इस्पाक अली, बैंगलुरु

संपादक
• डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल' एडवोकेट

कार्यकारी संपादक
• डॉ. वर्षा रानी

प्रबंध संपादक
• डॉ. मुकेश 'ऋषिवर्मा'

सह-संपादक
• डॉ. लता एस. पाटिल,
• डॉ. सुलक्षणा अहलावत

अक्षर संयोजन
• मो. सलीम

कानूनी सलाहाकार
• डॉ. रामफल दलाल, एडवोकेट
• अजीत सिहाग, एडवोकेट

अंतरराष्ट्रीय सम्पादक मंडल

• आशीष कुमार, गाजियाबाद
• डॉ. कुमारी लक्ष्मी जोशी, नेपाल
• डॉ. निशीथ गौड, आगरा
• डॉ. राजेश शर्मा, श्रीगंगानगर
• श्री शियोन छन श्यू, चीन
• डॉ. ऋतु शर्मा ननंन पांडे, नीदरलैंड
• डॉ. मुदस्सिर अहमद भट्ट, श्रीनगर
• डॉ. दीपशिखा, पटियाला
• डॉ. सुनीता शर्मा, ऑस्ट्रेलिया
• श्री राकेश शंकर भारती, युक्रेन
• डॉ. के.के. मल्होत्रा, कैनेडा
• डॉ. आशीष कुमार दीपांकर, मेरठ
• डॉ. कामिनी कौशल, गाजियाबाद
• डॉ. रवि शंकर सिंह, आरा

1. 'शोध-समालोचन' का प्रबंधन और संपादन पूर्णतः अवैतनिक है।
2. 'शोध-समालोचन' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखकों के अपने हैं। उनके प्रति वे स्वयं उत्तरदायी है।
3. पत्रिका से संबंधित प्रत्येक विवाद का न्याय क्षेत्र भिवानी न्यायालय ही मान्य होगा।
4. प्रकाशक/ स्वामी डॉ. नरेश सिहाग, एडवोकेट ने सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094 से मुद्रित करवाया।

'शोध समालोचन' की सदस्यता का शुल्क भुगतान राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा सीधे ट्रांसफर या जमा किया जा सकता है। बैंक का विवरण निम्नानुसार है–**बैंक :** PUNJAB NATIONAL BANK **Branch :** Yamuna Vihar, Delhi-110053 **IFSC :** PUNB0225600 **Account Holder :** SANIA PUBLICATION **Current Account No.** 2256002100405546 भुगतान की मूल रसीद, शोध-पत्र पत्रिका की ई-मेल पर भेजना अनिवार्य है।

नोट :- इस अंक की प्रिंट कॉपी खरीदने के लिए सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094 से सम्पर्क करें मो. 9818128487

मूल्य : 650/- रु. एक प्रिंट प्रति वार्षिक 2500/- रु.

विषय विशेषज्ञ सलाहकार समिति/ संपादकीय मंडल :

- **Dr. Mudita Popli**
  Principal, Maa Karni B Ed College Nal, Bikaner
- **Dr. Tapasya Chauhan**
  Assistant Professor, Dr. Bhimrao Ambedkar University, Agra (Utter Pradesh)
- **Dr. Om Prakash Mehrara**
  Director, Shri Ramnarayan Dixit PG College, Srivijaynagar, Distt. Anupgarh (Rajasthan)
- **PRINCE KUMAR**
  UGC NET-JRF, History, Senior Researcher, University History Department, B.R.A.Bihar University Muzaffarpur, Bihar
- **Dr Kanta Verma**
  Assistant professor, Political science, Govt College Lanji Balaghat, District Balaghat, M.P.
- **Dr. Sainath Kabade**
  Assistant Professor, Department of Educational Social Sciences, NIE, NCERT, New Delhi.
- **Mr. Sagar Gopal Rathod**
  Assistant professor, School of Social Science, Punyashlok Ahilyadevi Holkar Solapur University, Maharashtra.
- **Dr (Smt.) Manjulata Kashyap**
  Professor (Economics),Govt.T.C.L.P.G. College Janjgir, Chhattisgarh
- **Dr. AMBILI V. S.**
  Assistant Professor, Department of Hindi,
  N.S.S. College, Pandalam, Pathanamthitta Distt. University of Kerala.
- **Dr. Anju Bala**
  Assistant Professor Hindi, Guru Nanak Girls College, Yamunanagar-135001
- **Dr. Tikaram Sarthi**
  Hasmukh, Lecturer, Govt H.S.S.Churteli, Dist. Sakti (Chhattisgarh)-495688
- **Dr. Atul Chand**
  Hod Defence & Strategic Studies/ ex Principal in-charge “Government Degree college Baluwakote Pithoragarh “Uttarakhand
- **Dr. Vimal Parmar**
  Assistant Prof. Rajasthan P.G. Law College, Chirawa , Rajasthan
- **Dr. Archana Tiwari** , Assistant Professor , History and Indian Culture, Uni. Rajasthan, Jaipur
- **Sneha Deepak Wankhede**
  Assistant professor Hindi Department, Rajkumar Kewalramani College Jaripatka Nagpur, Maharashtra
- **डॉ. श्रीमती अभिलाषा सैनी**
  प्राचार्य, स्व. रामनाथ वर्मा शासकीय महाविद्यालय, मोपका, जिला–बलौदा बाजार, छत्तीसगढ़
- **डॉ. मोहित शर्मा**
  श्री सर्वेश्वर संस्कृत महाविद्यालय, निम्बार्क तीर्थ किशनगढ़, जिला अजमेर (राजस्थान)
- **रजनी प्रिया**
  राँगाटाँड़ रेलवे कॉलोनी, क्वा.सं. 502/136, तरुण संघ क्लब दुर्गा मंदिर, धनबाद, पोस्ट जिला–धनबाद, झारखंड

- **डॉ. मीरा चौरसिया,** चमनलाल महाविद्यालय लंढौरा, रुड़की, हरिद्वार, उत्तराखण्ड-247664
- **डॉ. आँचल कुमारी,** असिस्टेंट प्रोफेसर हिंदी
  राम चमेली चड्ढा विश्वास गर्ल्स कॉलेज गाजियाबाद चौधरी चरणसिंह युनिवर्सिटी, मेरठ (उ. प्र.)
- **डॉ. प्रमोद नाग**
  सहायक प्राध्यापक, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेजुएट स्टडीज, बेंगलुरु-560107
- **डॉ. चन्द्रशेखर सिंह**
  समाज कार्य विभाग, काशी विद्यापीठ, वाराणसी
- **लेफ्टि. डॉ. सन्दीप भांभू**
  शारीरिक शिक्षा विभाग, टॉटिया वि.वि. श्रीगंगानगर
- **डॉ. सरिता भवानी मालवीय**
  असिस्टेंट प्रोफेसर, फैकल्टी ऑफ लॉ., आर.के.डी.एफ. विश्वविद्यालय, भोपाल (मध्यप्रदेश)
- **डॉ. संदीप कुमार,** असि. प्रोफेसर, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, कन्हैयालाल मानिकलाल मुंशी हिंदी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ, डॉ. भीमराव अम्बेडकर वि.वि., आगरा
- **पल्लवी आर्य**
  असि. प्रोफेसर, भाषाविज्ञान विभाग, के.एम.आई. डॉ. भीमराव अम्बेडकर वि.वि., आगरा
- **डॉ. अमित कुमार सिंह**
  डी. लिट्., असि. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, के.एम. आई., डॉ. भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा
- **कोकिला कुमारी**
  शोद्यार्थी, हिंदी विभाग, राँची वि.वि. राँची, झारखंड
- **डॉ. तनु श्रीवास्तव**
  असिस्टेंट प्रोफेसर (अर्थशास्त्र), स्कूल ऑफ सोशल साइंस, देवी अहिला विश्वविद्यालय, इन्दौर
- **डॉ. कुमारी लक्ष्मी जोशी**
  उप-प्राध्यापक, केंद्रीय हिन्दी विभाग, त्रिभुवन विश्वविद्यालय, काठमांडू, नेपाल
- **डॉ. जगदीप दुबे**
  सहायक प्राध्यापक वाणिज्य (म.प्र.), शासकीय आदर्श महाविद्यालय, डीनडोरी (म.प्र.)
- **डॉ. श्रीकांत राठोड**
  सहायक प्राध्यापक हिंदी विभाग, श्री शांतेश्वर शिक्षा संस्थान, श्री जी.आर. गांधी कला, श्री वाय ए पाटील वाणिज्य एवं श्री एम पी दोशी विज्ञान महाविद्यालय, इंडी, जिला विजयपुर, कर्नाटक
- **डॉ. मंजू देवी**
  सहायक आचार्य श्री बालाजी टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, जयपुर
- **डॉ. सुनीता सारस्वत**
  सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग), सिंघानिया विश्वविद्यालय, पचेरी बड़ी झुंझनू, राजस्थान
- **प्रा. डॉ. बोईनवाड कृष्णा बाबुराव**
  सहा. प्रा. दिगंबरराव बिंदू कला वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय, भोकर. जिला नांदेड, महाराष्ट्र
- **डॉ. माया गोला,** असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा (उत्तराखंड)
- **श्रीराम**
  एसोसिएट प्रोफेसर हिंदी, राजकीय आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, बीकानेर

Request to Writers

Send quality original and unpublished works written on language, literature, society, science and culture. For publication, along with the translated works, also send the letters of consent received from the original authors. Compositions should be typed in Hindi Unicode Mangal font, English Time Roman. At the beginning of the article, a summary of the article is required which should be between 150 to 200 words maximum. The abstract must reflect the purpose of writing the article. Also write 5 to 7 'key words' (seed words) according to the article.

Write the article by dividing it appropriately into subheadings. Be sure to give a conclusion at the end of the article. The word limit should be 2000 to 2500 words. List of bibliographies at the end of the article APA Be in the format of. While sending the article, please write your name, address, phone number and title of the article in the e-mail. Submit a declaration to the effect that the article is original, unpublished, the author and not the editorial board will be responsible for any dispute related to it in future.

At the end of the composition, mention your complete postal address, mobile number and e-mail address.

- Editor

लेखकों से निवेदन

भाषा, साहित्य, समाज, विज्ञान एवं संस्कृति पर लिखी गयी स्तरीय मौलिक तथा अप्रकाशित रचनाएं भेजें। प्राकशनार्थ अनूदित रचनाओं के साथ मूल लेखकों से प्राप्त सहमति पत्र भी भेजें। रचनाएँ हिंदी यूनिकोड मंगल फान्ट अंग्रेजी टाइम रोमन में टंकित होनी चाहिए। लेख के प्रारंभ में लेख का सार अपेक्षित है जो अधिकतम 150 से 200 शब्दों के मध्य हो। सार में लेख लिखने का उद्देश्य अवश्य परिलक्षित होना चाहिए। लेख के अनुरूप 5 से 7 (की वर्ड) (बीज शब्द) भी लिखें। लेख को यथोचित उपशीर्षकों में विभाजित करके लिखें। लेख के अंत में निष्कर्ष अवश्य दें। शब्द सीमा 2000 से 2500 शब्दों की हो। आलेख के अंत में संदर्भ ग्रंथों की सूची ए.पी.ए. के प्रारूप में हो। लेख भेजते समय अपने नाम, पता, फोन नंबर एवं लेख का शीर्षक ई-मेल में अवश्य लिखें। इस आशय का एक घोषणा-पत्र प्रस्तुत कर दें कि लेख मौलिक है, अप्रकाशित है, भविष्य में इससे संबंधित किसी भी विवाद के लिए लेखक उत्तरदायी होंगे संपादक मंडल नहीं।

रचना के अंत में अपना पूरा डाक पता, मोबाइल नंबर और ई-मेल पता अंकित करें।

-संपादक

प्रकाशित पत्रिका प्राप्त करने के लिए संपर्क करे :

सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094

मोबाइल : 9818128487, 8383042929

ISSN : 2348-5639

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

[भाग III—खण्ड 4] भारत का राजपत्र : असाधारण 105

Table 2

Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc,.)

S.N.	Academic/Research Activity	Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences	Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines
1.	**Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals**	08 per paper	10 per paper
2.	**Publications (other than Research papers)**		
	(a) Books authored which are published by ;		
	International publishers	12	12
	National Publishers	10	10
	Chapter in Edited Book	05	05
	Editor of Book by International Publisher	10	10
	Editor of Book by National Publisher	08	08
	(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties		
	Chapter or Research paper	03	03
	Book	08	08
3.	**Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula**		
	(a) Development of Innovative pedagogy	05	05
	(b) Design of new curricula and courses	02 per curricula/course	02 per curricula/course

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

संपादकीय

प्रिय पाठको,

वर्तमान समय ज्ञान-विस्तार, विचार-विमर्श और बौद्धिक संवाद का युग है, जहाँ शोध केवल शैक्षणिक अनिवार्यता नहीं, बल्कि सामाजिक उत्तरदायित्व का भी एक महत्वपूर्ण साधन बन चुका है। शोध समालोचन के इस अप्रैल-मई-जून 2026 अंक को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें यह अनुभव हो रहा है कि ज्ञान की यह यात्रा निरंतर गहराई और व्यापकता की ओर अग्रसर है। यह अंक न केवल विविध विषयों की शोधपरक सामग्री को समाहित करता है, बल्कि समकालीन संदर्भों में उनके प्रासंगिक विश्लेषण का भी सशक्त उदाहरण प्रस्तुत करता है।

आज का युग बहुआयामी चुनौतियों और संभावनाओं का युग है। एक ओर तकनीकी प्रगति ने मानव जीवन को सुविधाजनक बनाया है, तो दूसरी ओर सामाजिक, सांस्कृतिक और नैतिक प्रश्नों को भी जटिल बना दिया है। ऐसे समय में शोध का कार्य केवल तथ्यों का संकलन नहीं, बल्कि उन तथ्यों के पीछे छिपे यथार्थ को उजागर करना भी है। इस अंक में सम्मिलित लेख इसी दृष्टि को केंद्र में रखते हुए लिखे गए हैं, जिनमें भारतीय ज्ञान परंपरा, साहित्यिक विमर्श, सामाजिक सरोकार और शैक्षिक नवाचारों पर गंभीर चिंतन प्रस्तुत किया गया है।

भारतीय ज्ञान परंपरा सदैव से ही विश्व को दिशा देने वाली रही है। आज जब वैश्वीकरण के प्रभाव में सांस्कृतिक अस्मिता पर प्रश्नचिह्न लग रहे हैं, तब यह आवश्यक हो जाता है कि हम अपनी जड़ों की ओर लौटें और अपने परंपरागत ज्ञान को समकालीन संदर्भों में पुनः परिभाषित करें। इस अंक में प्रकाशित शोध आलेख इस दिशा में सार्थक प्रयास हैं, जो भारतीय दर्शन, संस्कृति और शिक्षा के मूल तत्वों को नए दृष्टिकोण से प्रस्तुत करते हैं।

साहित्य, समाज का दर्पण होने के साथ-साथ उसकी संवेदनाओं का भी सशक्त माध्यम है। वर्तमान अंक में साहित्यिक आलोचना और समीक्षा के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि किस प्रकार साहित्य समाज के बदलते स्वरूप को अभिव्यक्त करता है। समकालीन कविताओं, कहानियों और गद्य साहित्य में उभरते विषय जैसे स्त्री-विमर्श, दलित चेतना, पर्यावरणीय संकट और नैतिक मूल्यों का ह्रास—इन सभी पर गहन विचार प्रस्तुत किया गया है। यह अंक साहित्य को केवल भावनात्मक अभिव्यक्ति के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन के औजार के रूप में देखने की दृष्टि प्रदान करता है।

शिक्षा के क्षेत्र में भी निरंतर परिवर्तन हो रहे हैं। नई शिक्षा नीति और डिजिटल तकनीकों के प्रभाव ने शिक्षण और अधिगम की प्रक्रिया को पूरी तरह से बदल दिया है। इस अंक में शिक्षा से संबंधित शोधपत्र इस बात पर प्रकाश डालते हैं कि किस प्रकार नवाचार और परंपरा का संतुलन बनाकर एक समावेशी और प्रभावी शिक्षा प्रणाली विकसित की जा सकती है। शिक्षा केवल ज्ञानार्जन का माध्यम नहीं, बल्कि व्यक्तित्व निर्माण और सामाजिक चेतना के विकास का आधार भी है—इस विचार को यहाँ विशेष महत्व दिया गया है।

इसके अतिरिक्त, इस अंक में विभिन्न शोधार्थियों और विद्वानों द्वारा प्रस्तुत लेखों में सामाजिक यथार्थ की गहन पड़ताल की गई है। ग्रामीण जीवन, शहरीकरण, आर्थिक असमानता, और सांस्कृतिक बदलाव जैसे विषयों पर किए गए अध्ययन यह दर्शाते हैं कि शोध का उद्देश्य केवल निष्कर्ष निकालना नहीं, बल्कि समाज के समक्ष प्रश्न खड़े करना और उनके समाधान की दिशा में विचार उत्पन्न करना भी है।

शोध समालोचन का उद्देश्य सदैव से ही शोध की गुणवत्ता और प्रामाणिकता को बनाए रखना रहा है। इस अंक में प्रकाशित सभी लेख कठोर समीक्षा प्रक्रिया से गुजरकर चयनित किए गए हैं, जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि पाठकों

को विश्वसनीय और उच्चस्तरीय सामग्री प्राप्त हो। हम यह मानते हैं कि एक सशक्त शोध परंपरा का निर्माण तभी संभव है जब उसमें नवीनता, निष्पक्षता और आलोचनात्मक दृष्टि का समावेश हो।

अंततः, हम सभी लेखकों, शोधार्थियों और समीक्षकों का आभार व्यक्त करते हैं, जिनके सहयोग से यह अंक संभव हो पाया है। साथ ही, हम अपने पाठकों से भी अपेक्षा करते हैं कि वे इस अंक में प्रस्तुत विचारों पर गंभीरता से विचार करें और ज्ञान-विमर्श की इस परंपरा को आगे बढ़ाने में अपना योगदान दें।

ज्ञान की यह यात्रा अनवरत है, और शोध समालोचन इस यात्रा में एक सशक्त मंच के रूप में अपनी भूमिका निभाता रहेगा—इसी विश्वास के साथ हम इस अंक को आपके समक्ष समर्पित करते हैं।

संपादक

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

विषयानुक्रमणिका

संपादकीय 6

भरतनाटयशास्त्रस्य वैशिष्टयम् 11
Dr. P. Srivalli
रांगेय राघव के कथा साहित्य में उपनिवेशवाद 22
डॉ. सुशीला यादव
भारतीय संस्कृति और 'जड़े' कहानी का जीवन 26
प्रा. डॉ. पवन नागनाथ एमेकर
तेभागा आंदोलन और फ्लड कमिशन : सिफारिशों से संघर्ष तक का सफर 29
ज्योति कुमारी
राजस्थान के दक्षिणांचल कवियों का व्यक्तित्व एवं कृतित्व 39
डॉ. दीपक शर्मा
प्रियंका शर्मा
'तीसरी कसम' कहानी : प्रेम का लोक वा लोक का प्रेम 41
मेनका कुमारी साह
पाश्चात्य संस्कृति और भारतीय ज्ञान परंपरा : एक संक्षिप्त परिचय 46
अंगेश कुमार सिंह, जितेन्द्र कुमार
डॉ. सर्वेश्वर प्रताप सिंह
Study Of The Loneliness Among Secondary Level School Students: An Emergent Concern 52
Vijata Kumari
Prof Preeti Khanna
विष्णु प्रभाकर की कहानियों में चित्रित आर्थिक अभाव 59
Dr. Sanu Thomas
बाल मन, साहित्य का संसार 62
Dr. Rosy P. Varghese
'वत्सला' खंड काव्य में यशोदा के मातृत्व की अभिव्यक्ति 65
मोनिका
ज़िंदगी : अनुभव, संघर्ष और सौन्दर्य का काव्य (मुकेश कुमार ऋषि वर्मा की कविता का एक अध्ययन) 69
Dr. Tikaram Sarthi "Hasmukh"

मानवाधिकार का अवधारणात्मक विवेचन 72

डॉ. जगदीश प्रसाद कड़वासरा

मोहम्मद रमजान

भाषा और संस्कृति का अन्तर्संबंध- भारतीय संदर्भ में 75

नरेन्द्र कुमार वर्मा

Analysis Of Nyayas (Maxims) As Depicted In Indian Philosophical Principles 77

Pulak chan Das

The Role of Artificial Intelligence in Educational Research 83

Dr. Ravindar Kumar

झारखंड की आदिवासी भाषाएँ : संकटग्रस्त विरासत और संरक्षण की रणनीतियाँ 91

प्रो. रवि रंजन कुमार

हिंदी प्रवासी साहित्य का राजनैतिक और भौगोलिक आयाम 95

डॉ. बीरम देव

राजनीतिक संक्रमण के दौर में नेपाल और क्षेत्रीय भू-राजनीति 98

स्वेता कुमारी

डॉ. लक्ष्मी कुमारी

सुरेन्द्र वर्मा के नाटकों में स्त्री-पुरुष-सम्बन्ध 104

श्रीकांत सिंह

राजन कार्तिकाय

कृत्रिम बुद्धिमत्ता : अवधारणा से क्रांति तक शिक्षा और समाज के परिप्रेक्ष्य में 108

डॉ. अनु पाण्डेय

दक्षिण एशिया पर बाहरी शक्तियों का प्रभाव तथा क्षेत्रीय राजनीति 114

डॉ. रिन्कू

जायसी का लोक 118

अभिजीत सिंह

मोहन राकेश का अनुवाद साहित्य : उपलब्धि और सीमाएँ 121

मलय गोप

समकालीन हिंदी कविता में सांप्रदायिकता 126

डॉ. मनोज कुमार

कलात्मक विरासत : स्थापत्य, मूर्ति शिल्प एवं चित्रकला 131

शुभम् दुबे

उच्च माध्यमिक विद्यालय के शैक्षिक वातावरण का विद्यार्थियों की समस्या समाधान योग्यता एवं शैक्षिक उपलब्धियों के संबंध में अध्ययन 134

डॉ. राजेश शर्मा

भंवर लाल शर्मा

राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व गुणों, पारिवारिक संस्कारों और शैक्षिक निष्पति के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन 139

डॉ. अनुराधा सिंह
हेमलता

व्यथित नारी की अंतश्चेतना में निहित जिजीविषा का स्वर : 'मंजिल दर मंजिल' 145

डॉ. नीतू कौशल

غیاث احمد گدی کی افسانہ نگاری کا ایک تنقیدی جائزہ 150

ڈاکٹر پرویز اختر

मुंशी प्रेमचंद के कथा साहित्य में किसान जीवन का यथार्थ 152

रत्ना सिंह
प्रो. ललित कुमार सिंह

किन्नर श्रापित नहीं है- 'श्रापित किन्नर' उपन्यास के संदर्भ में 156

श्रीलक्ष्मी. एस. आर.

INDIA'S TROUBLES IN A FRIENDLESS WORLD 158

Dr. Chintu
Jyoti Prakash

भारतीय संविधान के आर्किटेक्ट : बाबासाहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर 165

डॉ. अनामिका जैन

Healthcare Issues in the Hilly Regions of Kumaon Division, Uttarakhand: An analysis of Recent Protests 172

Rakesh Joshi

Synthesising Sustainable and Conceptual Fashion: A Multidisciplinary Framework for Regenerative Design 178

Navneet Kaur

भारत में वामपंथी आंदोलन : उदय, विकास और समकालीन प्रासंगिकता 182

डॉ. बिन्दु भूषण सिंह

बिहार में महिला पुनर्जागरण और राष्ट्रीय आंदोलन : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन 186

डॉ. नागेश्वर कुमार

A Multidimensional Study of Women Entrepreneurship Development in Bundi, Rajasthan: Economic, Social, Technological and Policy Perspectives 192

Nida Sherwani
Dr. Sandeep Kumar

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका 199

शमी बरनवाल

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

भरतनाटयशास्त्रस्य वैशिष्टयम्

Dr. P. Srivalli
Lecturer In Sanskrit , SKR Govt. Degree College (W)
Rajamahendravaram, Andhra Pradesh
Cell No. : 9640604153 , Email : prabhavasv@gmail.com

परिचयः :-

भारतीयालङ्कारशास्त्रं तावत् विश्वसाहित्यपरिशीलनायां प्रमुखस्थानमावहति। अलङ्कारशास्त्रग्रन्थेषु प्रथमग्रन्थः भरतमुनि विरचितः नाट्यशास्त्रग्रन्थः। माकिं क्रिस्तोः पूर्वं पञ्चमशताब्द्यां विरचितः अयं ग्रन्थः इदानीन्तनकालिकानामपि परमप्रमाणग्रन्थः विराजते। अस्मिन् ग्रन्थे 36 अध्यायाः विलसन्ति। एकैकस्मिन् अध्याये नाट्यसम्बन्धः एकैकः विषयः प्रतिपाद्यते। अयं भरतः काश्मीरशैवपण्डितः, अतः 36 शिवतत्त्वानि मनसि निधाय स्वीयग्रन्थः 36 अध्यायैः विभक्तः इति विमर्शकाः वदन्ति। नाट्यशास्त्रे प्रतिपादितविषयाः भाषासाहित्यविचारणाय अत्यन्तमुपकुर्वन्ति। मम्मटाचार्यस्य काव्यप्रकाशः, विद्यानाथस्य प्रतापरुद्रयशोभूषणम् इत्यादि ग्रन्थाः भरतनाट्यशास्त्र-माधारीकृत्यैव विरचिताः। नाट्यशास्त्रे विचारिताः अंशाः 11 विद्यन्ते।

ते यथा :

रसाभावाद्यभिनयाः धर्मे वृत्तिप्रवृत्तयः।

सिद्धिः स्वराः तथातोद्यं गानं रङ्गश्च संग्रहः॥ इति।

ग्रन्थेऽस्मिन् 1) 9 रसाः, 2) 49 भावाः, 3) 4 अभिनयाः, 4) 2 धर्मौ, 5) 4 वृत्तयः, 6) 4 प्रवृत्तयः, 7) 2 सिद्धी, 8) 7 स्वराः, 9) 4 आतोद्याः, 10) 5 गानानि, 11) 3 रङ्गः प्रधानतया निरूपिताः। शृङ्गारादिरसनिरुपणाय मूलग्रन्थः नाट्यशास्त्रमेव।

ग्रन्थस्य प्रयोजनं वदति भरतमुनिः-

दुःखार्तानां श्रमार्तानां शोकार्तानां तपस्विनाम्।

विश्रान्तिजननं काले नाट्यमेतत् भविष्यति॥ इति

दुःखेन, शारीरकमानसिकश्रान्ततया, शोकेन पीडितानां जनानां तापसजनानामपि एतन्नाट्यं विश्रान्तिकारकमिति श्लोकस्यास्य भावः। अत्र नाट्यशब्दः नाटकापरपर्यायः। सकलाः विद्याः, सकलाः कलाः, ज्ञानानि, शिल्पं, योगः इत्यादयः नाट्ये प्रतिष्ठापिताः इति भरतस्याशयः।

न तज्ज्ञानं न तच्छिल्पं न सा विद्या न सा कला।

नासौ योगो न तत्कर्म नाट्येऽस्मिन् यन्न विद्यते॥ इति

अयं नाट्यशास्त्रग्रन्थः अत्यन्तं प्राचीनः। तत्कर्ता भरतः रससम्प्रदायवादी। रसादृते कोप्यर्थः न प्रवर्तयतीति भरतस्य सिद्धान्तः। "विभावानुभावव्यभिचारी-संयोगाद्रसनिष्पत्तिः" इति रससूत्रम्। तद्रसः एव काव्यस्य आत्मा। उपर्युक्तैकादशांशैः साकं काव्यतत्त्वानि, शब्दार्थविवेचनं काव्यगुणाः, अलङ्काराः, रीतयः, नाट्यशास्त्रे सम्यग्विवेचिताः। अतः संस्कृतकाव्यशास्त्रस्य नाट्यशास्त्रमेव मूलग्रन्थः इति निश्चयेन वक्तुं शक्यते।

अवस्थानुकृतिर्नाट्यम् इति सूत्रमनुसृत्य नाट्यं नाम अवस्थानुकरणमेव। परन्तु तत् रसमाश्रित्य भवेदिति ग्रन्थस्यास्य प्राधानलक्ष्यम्।

उपोद्घातः

इदानीं लभ्यमानेषु अलङ्कारशास्त्रग्रन्थेषु अतिप्राचीनः भरतमुनिविरचितः नाट्यशास्त्रग्रन्थः। अलङ्कारशास्त्रे अतिप्रधानः रससिद्धान्तः, तथा अलङ्कारशास्त्रसम्बद्धाः बहवः विषयाः नाट्यशास्त्रे प्रतिपादिताः। अस्य ग्रन्थस्य सन्ति बह्व्यः व्याख्याः। तत्र अभिनवगुप्तविरचिता "अभिनवभारती" व्याख्या अत्यन्तप्रसिद्धा। विविधासु लिखितपत्रेषु, पुस्तकेषु व्याख्यानेषु नाट्यशास्त्रस्य अध्यायसंख्याश्लोकेषु वैषम्यं दृश्यते। अभिनवगुप्ताचार्याः 36 अध्यायाः इति, 6000 श्लोका नाट्यशास्त्रे विलसन्तीति अकथयन्। केचन 37 अध्यायाः इति, केचन 37 तम अध्यायः अपि 36 अध्याये मिलित्वा 36 अध्यायाः इति वदन्ति। एवं नाट्यशास्त्रसम्बद्धविषयेषु विविधाः मतभेदाः, अनेकसङ्कलिताः, पाठभेदाः, श्लोकक्रमादि वैरुद्ध्याः दृश्यन्ते ।

नाट्ये अष्टरसाः इति भरतेन अङ्गीकृतमिति, अष्टरसां साहाय्येन सः इन्द्रसभायां नाट्यं प्रादर्शयदिति कालिदासमहाकविः विक्रमोर्वशीये अरचयत् यथा-

मुनिना भरतेन यः प्रयोगो भवतीत्यष्टरसाश्रयः प्रयुक्तः।

ललिताभिनयं तमद्य भर्ता मरुतां द्रष्टुमनाः सलोकपालः॥

अत्रोक्तविषयाः नाट्यशास्त्रे दृश्यन्ते। थथा भरतः नाट्यशास्त्रं प्रति शिष्येभ्यः उपादिशदिति, अप्सरसां साहाय्येन नाट्यप्रयोगमकार्षीत् इति प्रथमाध्यायस्थ श्लोकैः ज्ञायते।
यथा

अशक्या पुरुषैः सा तु प्रयोक्तुं स्त्रीजनादृते।

ततोऽसृजन्महातेजा मनसाप्सरसो विभुः॥

नाट्यालङ्कारचतुरा: प्रादान्मह्यं प्रयोगतः ॥

मञ्जुकेशीं सुकेशीं च मिश्रकेशीं सुलोचनाम्।

सौदामिनीं देवदत्तां देवसेनां मनोरमाम्॥

सुदतीं सुन्दरीं चैव विदग्धां विपुलां तथा।

सुमलां सन्ततिं चैव सुनन्दां सुमुखीं तथा ॥

मागधीमर्जुनीं चैव सरलां केरलां धृतिम्।

मन्दां सपुष्पकां चैव कलमां चैव मे ददौ॥[1]

ब्रह्मदेवस्य आज्ञया एतदप्सरस्त्रीणां साहाय्येन प्रथमनाट्यप्रयोगमभवत् इत्यपि प्रथमाङ्के प्रोक्तः।

दुःखार्तानां श्रमार्तानां शोकार्तानां तपस्विनाम् ।

विश्रान्तिजननं काले नाट्यमेतद्भविष्यति ॥[2]

यथा-

महानयं प्रयोगस्य समयः प्रत्युपस्थितः।

अयं ध्वजमहः श्रीमान् महेन्द्रस्य प्रवर्तते॥

अत्रेदानीमयं वेदो नाट्यसंज्ञः प्रयुज्यताम्।[3]

नाट्यशास्त्रे रसाः, अष्टसंख्याकाः इति प्रोक्तम्।

शृङ्गारहास्यकरुणरौद्रवीरभयानकाः।

बीभत्सादभुतसंज्ञौ चेत्यष्टौ नाट्ये रसाः स्मृताः॥[4]

तथैव

एवमेते रसा ज्ञेया ह्यष्टौ लक्षणलक्षिताः।

इह त्वष्टरसायत्ता रसवत्ता स्मृता गिराम्॥[5]

इति काव्यादर्शवाक्याच्च प्रथमं अष्टरसा एव अङ्गीकृता आलङ्कारिकैः इति स्पष्टं भाति, प्ररन्तु नवमस्य शान्तरसस्य तत्स्थायीभावस्य, शमस्य सम्बन्धीविषयं पुरस्कृत्य लिखितं प्राचीनं, पत्रमपश्यम् इति अभिनवगुप्ताचार्याः अवोचन् यथा- 'ये पुनः नवरसाः इति, पठन्ति तन्मते शान्तस्वरूपम् अभिधीयते" इति "तस्मादस्ति शान्तो रसः तथा च चिरन्तनपुस्तकेषु स्थायी भावान् रसत्वमुपनेष्यामः" इत्यनन्तरं शान्तो नाम शमस्थायिभावात्मकः" इत्यादि शान्तलक्षणं लक्ष्यते- अनेन अभिनवगुप्ताचार्याः नाट्यशास्त्रसम्बद्धं पाठद्वयं दृष्टवानिति ज्ञायते।

प्रस्तुतमुपलभ्यमाननाट्यशास्त्रस्वरूपमेवं विद्यते।

1. ग्रन्थ एषस्सर्वः श्लोकरूपेण विलसति, परन्तु 6,7 अध्याययोः तत्र तत्र गद्यरूपाः सन्ति।
2. आनुवंश्याः इति नाम्ना 15 श्लोकाः अनुष्टुप् छन्दसि 16 श्लोकाः आर्यावृत्ते विलसन्ति।
3. "सूत्रानुबद्धे आर्ये भवतः" इति प्रारभ्य बहवः श्लोकाः दृश्यन्ते।
4. "भवन्ति चात्र श्लोकाः" अत्रार्ये भवतः" "अत्र श्लोकाः" इति प्रारभ्य विविधसन्दर्भेषु मार्कि 100 श्लोकाः दरी दृश्यन्ते।

अभिनवगुप्ताचार्याः नाट्यशास्त्रं "भरतसूत्रम्" इति नाम्ना निर्देशं चक्रुः इति विशेषः। ग्रन्थोऽयं सूत्राणि, भाष्यं, संग्रहः, कारिकाः निरुक्तमेवं रूपेण वर्तते इति अस्मिन्नेव ग्रन्थे विद्यमानैः श्लोकैः स्पष्टं भवति।

यथा-

विस्तरेणोपदिष्टानामर्थानां सूत्रभाष्ययोः।

निबन्धो यः समासेन सङ्ग्रहं तं विदुर्बुधाः॥[6]

रसाभावाह्यभिनया धर्मिवृत्तिप्रवृत्तयः।

सिद्धिः स्वरास्तथातोद्यं गानं रङ्गं च सङ्ग्रहः ॥ [7]

अल्पाभिधानेनार्थो यः समासेनोच्यते बुधैः।

सूत्रतः सा तु विज्ञेया कारिकार्थप्रयोगिनी॥

एवमेषोऽल्पसूत्रार्थो व्यादिष्टो नाट्यसङ्ग्रहः।

अतः परं प्रवक्ष्यामि सूत्रग्रन्थविकल्पनम्॥

सूत्रं नाम लक्षणम्। सूत्रं परीक्ष्य तदर्थं विशदीकरोति भाष्यम्। 'सूत्रं लक्षणम्, भाष्यं तद्व्यक्तीकरणरूपा परीक्षा इति अभिनवगुप्ताचार्याः सूत्रभाष्यशब्दानामर्थं व्यावृण्वन्। सूत्रमेव कारिका इत्यपि वक्तुं शक्यते, सूत्रानन्तरश्लोकं वा सूत्रसम्बद्धं वा, तदर्थप्रतिपादनाय वा श्लोकः तदपि कारिका इत्यकथयन्। "सूत्रतः सूत्रणेन, तेन सूत्रमपि कारिका तत् सूत्रम् अपेक्ष्य या अनु पश्चात् पठिता श्लोकरूपा सापि कारिका" इति अभिनवगुप्ताचार्याणां वाक्यानि। नाट्यशास्त्रस्य विषयाः अध्यायक्रमेण संक्षिप्ततया परिशीलयामः।

1. नाट्योत्पत्तिनामके प्रथमाऽध्याये आत्रेयादयो मुनयः भरतमुनिमुद्दिश्य नाट्यशास्त्रं कथमाविर्भूतम्? किमर्थमाविर्भूतम्? अस्य अङ्गनि कानि? उपायाः काः? अस्य नाट्यरङ्गे प्रयोगकरणं कथम्? इति पञ्च प्रश्नाः अपृच्छन्। परन्तु एतेषां प्रश्नानां समाधानानि क्रमेण ग्रन्थे सर्वत्र व्याप्तानि इति व्याख्याने स्पष्टं वर्तते। भरतमुनिः ऋग्वेदात् पाठ्यं, सामवेदात् गानं, यजुर्वेदात् अभिनयं, अधर्ववेदात् रसान् संगृह्य नाट्यवेदं निर्माय शतपुत्रेभ्यः (शिष्येभ्यः) अबोधयत्।
2. मण्डपविधानं नामके द्वितीयाध्याये नाट्यमण्डपनिर्माणं, प्रेक्षागृहनिर्माण विस्तृतेन कथितम्।
3. रङ्गदैवतपूजनं नामके तृतीयाध्याये रूपकप्रयोगाय तत्तत् देवतानां रक्षणमभिलक्ष्य महादेवः, ब्रह्म; विष्णुः, बृहस्पतिः इत्यादि देवतानां पूजा विवृता।
4. ताण्डवलक्षणम् नामके चतुर्थाध्याये विविधाः अङ्गहाराः, 108 करणानि, रेचकानि विवृतानि।
5. पूर्वरङ्गप्रयोगनामके पञ्चमेऽध्याये पूर्वरङ्गस्य नान्द्याः, ध्रुवस्य, प्रस्तावनस्य च सम्बद्धविषयाणां विवरणं दृश्यते।
6. रसाध्यायनामके षष्ठेऽध्याये अष्टरसाः (कुत्रचित् पाठे नव रसाः), अष्टस्थायिभावाः, 33 व्यभिचारिभावाः, 8 सात्विकभावाः, आङ्गिकवाचिक-आहार्य-सात्त्विकाभिधानाः 4 अभिनयाः, लोकधर्मी नाट्यधार्मी इति २ धर्मिणौ, भारती- सात्वती -कैशिकी - आरभटी इति ४ वृत्तयः, आवन्ती- दाक्षिणात्या- पाञ्चाली-ओढ्रमागधी- मध्यमा इति ५ प्रवृत्तयः, दैवी-मानुषी इति २ सिद्धी, षड्जऋषभादिसप्तस्वराः, तत- आनद्ध-घन-सुषिराश्चेति ४ सङ्गीतोपयुक्तवाद्यानि, ५ गानानि, ४ नाट्यमण्डपाः, विभावानुभावव्यभिचारिभावैः

रसनिष्पत्तिक्रमः, रसानां वर्णाः, अधिष्ठानदैवतानि, रसानां स्थायिभावानाञ्च विस्तृतवर्णनमकरोत्।

7. भावव्यञ्जकाध्यायनामके सप्तमेऽध्याये भाव-विभाव- स्थायिभावानां विपुलं वर्णनं, निर्वेदादि 33 व्यभिचारिभावानां स्तम्भादि 8 सात्त्विकभावानां निरुपणं दृश्यते।

8. उपाङ्गविधानम् नामके अष्टमाध्याचे 4 अभिनयानां विस्तृतवर्णनमकरोत्।

9. अङ्गाभिनयो नामके नवमाध्याये अङ्गानामनेकविधचलनानि, पताकः, त्रिपताकः इत्यादीनां २४ असंयुतहस्तभेदाः, अञ्जलिः, स्वस्तिकमित्यादीनां 13 संयुतहस्तभेदाः, 27 नृत्तहस्ताः आहत्य ६४ हस्तानां, लक्षणप्रयोगाः अवर्णयत्।

10. चारीविधाननामके दशमाध्याये वक्षस्थलम्, पार्श्वे, कटिभागः, इतरशरीरावयवाः- एतेषां ५ विधचलनानि तेषां लक्षणप्रयोगाश्च निरूपिताः।

11. मण्डलविधाननामके एकादशाध्याये चारी-खण्ड-करण-मण्डलानि, भूमिचारीणां, लक्षणानि, 16 आकाशचारीणां लक्षणानि, तेषां प्रयोगसमयाः, नाट्ये धनुर्विद्याप्रदर्शन विधानम्, नाट्यप्रयोगे कोऽपि बहुशीघ्रतां न दर्शयेत्, श्रमां नानुभवेत् इति विषयाः प्रस्तुताः।

12. गतिप्रचारनामके द्वादशाध्याये मण्डलानां संख्या, तेषां लक्षणानि प्रोक्तानि।

13. करयुक्तिधर्मिव्यञ्जकाभिधाने त्रयोदशाध्याये तत्तद्रसानुगुणं स्थानानुगुणं पात्राणां प्रवेशः कथमिति, उत्तमपात्राणि, मध्यमपात्राणि, नीचपात्राणि रङ्गस्थले कियान् समयः चलेयुः इति, रौद्रबीभत्सवीरादि रसानां प्रकटनावसरे कथं चलेयुः ? कथं शरीरावयवानां चलनानि भवेयुः? शरीरस्य क्षतिः शैत्यमित्यादीनां सूचनाय अवयवचालनं कथं भवेत्? एवं सन्यासिनः, मत्ताः, उन्मत्ताः इत्यादीनां चलनानि कथं भवेयुः ? इत्यंशाः स्पष्टं वर्णिताः।

14. छन्दोविधाननामके चतुर्दशाध्याये नाट्यमण्डपे सङ्गीतवाद्यानाम्, गृह-उद्यान- अरण्य-स्थल-जलादीनां स्थानानि, मुहूर्तकाले वा, यामकाले वा गरिष्ठतया एकस्मिन् दिने वा घटिताः घटनाः एकस्मिन्नेव अङ्के प्रदर्शनीयाः इति मासे वा, संवत्सरे वा घटिताः घटनाः नूतने अङ्के वक्तव्याः इति, देश-वेष-भाषाणां नियमानुगुणं आवन्ती — दाक्षिणात्या- पाञ्चाली - ओढ्रमागधी इति चतुर्विधप्रवृत्तयः, तत्तत् प्रवृत्तिसम्बद्धदेशाः, वृत्तयः, सुकुमारः-आविद्धं इति द्वौ नाट्यप्रयोगौ, डिमः, समवकारः - व्यायोगः- ईहामृगः- आविद्धः इति अन्ये रूपकभेदाः सुकुमाराः इति, लोकधर्मिणां, नाट्यधर्मिणां लक्षणोदाहरणानि वर्णितानि।

15. छन्दोविचितिनामकै पञ्चदशाध्याये अचः- हलः-नामवाचकानि क्रियापदानि - उपसर्गाः - क्रियाविशेषणानि – समासादीनां विवरणम्, रूपके सम्भाषणादिकं संस्कृते वा प्राकृते वा संस्कृतप्राकृतयोः वा भवेयुः इति, वृत्तनि, तेषामवान्तरभेदाः अष्टगणानां गुरु-लघु-यतीनामर्थाः विवृताः।

16. काव्यलक्षणनामके षोडशाध्याये रूपकेषु उपयोक्तव्यवृत्तानि, तेषां लक्षणानि, उदाहरणानि, सम-विषमवृत्तानि, आर्या इत्यादयः वर्णिताः।

17. काकुस्वरव्यञ्जननामके सप्तदशाध्याये रङ्गस्थले प्रयोक्तव्यकाव्यलक्षणानि, तेषां स्वरुपं, नाटके उपयुज्यमानानि उपमा- रुपक- दीपक-यमकाः इति चत्वारः अलङ्काराः तेषामवान्तरभेदाः, उदाहरणानि, दशकाव्यदोषाः, दश काव्यगुणाः तेषां लक्षणानि वर्णितानि।

18. दशरुपविकल्पननामके अष्टादशाध्याये रूपकेषु प्राकृतभाषोच्चारणविधानं, कानि पात्राणि संस्कृते, कानि पात्राणि प्राकृते वा इतर प्रान्तीयभाषासु वा उच्चारयेयुः इति विस्तृतं वर्णितम्।

19. सन्धिनिरुपणनामके नवदशाध्याये उत्तम-मध्यम-नीच पात्राणि कथं सम्बोधयेयुः? इति पाठ्यगुणाः, 7 सङ्गीतस्वराः, हृदयं, कण्ठः, शिरः इति त्रीणि उच्चारणस्थानानि, उदात्तम्, अनुदात्तण्, स्वरितं, कम्पितम् इति 4 स्वराः, २ काकुस्वरौ, उच्चं, दीप्तं, मन्द्रं, नीचं, द्रुतं, बिलम्बितमिति अलङ्काराश्च वर्णिताः।

20. वृत्तिविकल्पननामके विंशतितमाध्याये दशविधरूपकाणां विवरणं, नाटकस्य विषयाणां प्रधानलक्षणानि, रङ्गस्थले के न प्रदर्शयेयुः इति प्रवेशकविष्कम्भकविधानं, प्रकरणादीनां प्रधानलक्षणानि तेषामङ्गलक्षणञ्च वर्णितानि।

21. आहार्याभिनयनामके एकविंशतितमाध्याये रूपककथावस्तु, पञ्चसन्धयः, पञ्चावस्थाः, पञ्च अर्थप्रकृतयः, तेषां लक्षणानि सन्ध्यन्तराः, पञ्चसन्धीनां चतुष्षष्टि अङ्गाः, तेषां लक्षणानि पञ्च अर्थोपक्षेपकाः वर्णिताः।

22. सामान्याभिनयनामके द्वाविंशतितमाध्याये चतस्रः वृत्तयः तेषामाविर्भावः, अवान्तरभेदाः, लक्षणानि, वृत्तीनां प्रयोगविधानञ्च वर्णितम्।

23. वैशिकाध्यायनामके त्रयोविंशतितमाध्याये नेपथ्यविषये विस्तारतया वर्णितम्। पुस्ताः, अलङ्काराः, अङ्गरचना, सञ्जीवमिति चतुर्विधनेपथ्याः वर्णिताः।

24. पुंस्त्र्युपचारनामके चतुर्विंशतितमाध्याये सामान्याभिनयः सत्त्वम् उपरि प्रकटीकृतपद्धतयः, युवतीनामलङ्काराः, तेषां लक्षणानि, पुरुषाणां सत्त्वाविर्भावाः, अभिनयाः, दश कामावस्थाः तेषां वर्णनम्, अभिनयः, दूतिप्रेषणम्, अष्टविधनायिकाः, रङ्गस्थले कानि न प्रदर्शनीयानि इति विषयाः विस्तरेण चर्चिताः

25. चित्राभिनयनामके पञ्चविंशतितमाध्याये स्त्रीणामावर्जने निपुणस्य वैशिकस्य सहजलक्षणानि, गुणानि, तस्य मित्रम्, दूतिः, पुरुषे आसक्तानाम् अथवा द्वेष्याणां स्त्रीणां चिह्नानि, स्त्रीणां यौवनावस्थाः, प्रेमयुक्तपुरुषेषु भेदाः, स्त्रीणां वशीकरणोपायाश्च वर्णिताः।

26. विकृतिविकल्पनामके षड्विंशतितमाध्याये चित्राभिनयनामकः आङ्गिकाभिनयः, आकाशः, रात्रिः, सायङ्कालः, अन्धकारः उष्णम् - एतेषां सूचनं कथमिति, सन्तोषः, कोपः, बाधा दुःखमेतेषां प्रदर्शनविधानं, आकाशवचन-आत्मगत - अपवारितक - जनान्तिकानाम् अर्थः, वृद्धानां बालानां सम्भाषणं कथं करणीयम्, मरणासन्नतां कथं प्रदर्शनीयमिति विषयाः उपस्थापिताः।

27. सिद्धिव्यञ्जकाध्यायनामके सप्तविंशतितमाध्याये नाट्यप्रयोगसिद्धेः द्वैविध्यं वर्णितम्। मानुषीसिद्धिः, दैवीसिद्धिः इति द्विविधा सिद्धिः। तयोः विपुलतया वर्णनम् नाट्यप्रयोगे साधुत्वासाधुत्वयोः निर्णेतृणां योग्यताश्च वर्णिताः अत्र।

28. जातिविकल्पनामके अष्टाविंशतितमाध्यये तत- अवनद्ध- घन - सुषिरनामकानि चतुर्विधवाद्यानि, षड्ज ऋषभादि सप्तस्वराः तेषु वादि, संवादि, अनुवादि, विवादि इति चतुर्विधभेदाः, तेषां लक्षणानि, ग्रामाः, मूर्छनानि, द्वाविंशति कृतयः, जातयश्च वर्णिताः।

29. ततातोद्यविधाननामके नवविंशतितमाध्याये कस्य रसस्य के स्वराः, काः जातयश्च उपयोक्तव्याः इति, आरोहि, अवरोहि, स्थायि, संचारि इति चत्वारः वर्णाः, तेषामुपरि आधारिताः त्रयस्त्रिंशदलङ्कारा, तेषां लक्षणानि, गीताश्च वर्णिताः।

30. सुषिरातोद्यविधाननामके त्रिंशत्तमाध्याये मुरषलः वर्णिताः।

31. तालाध्यायनामके एकत्रिंशत्तमाध्यायेताललयविषये विस्तृतेन विचारितम्।

32. ध्रुवाविधाननामके द्वात्रिंशत्तमाध्याये ध्रुवानां वर्णनं कृतम्। एकं पात्रं रङ्गस्थल प्रवेशसमये, रङ्गस्थलनिष्क्रमणसमये, अङ्गस्य समाप्तौ, रूपकप्रयोगसमये मध्ये मध्ये, पात्रपतनसमये, वक्तव्यवचनानि विस्मरणसमये अथवा मूर्च्छितसमये च ध्रुवागानं क्रियते।

एतेषु कानिचन संस्कृतभाषायां भवन्ति चेदपि साधारणतया एते शौरसेनीभाषायां भवेयुः इति विषयाः गायकानां, वीणावेण्वादिवाद्यकाराणां योग्यताश्च विपुलतय वर्णिताः अत्र।

33. गुणदोषविचारनामके त्रयस्त्रिंशत्तमाध्याये मृदङ्गपणव- दर्दुरादीनां अवनद्धवाद्यानां विस्तृतवर्णनं, गान्धर्ववाद्यानां स्वाती नारदौ प्रथमप्रवर्तनं, सकलविध वाद्यानां प्रयोगसमयाः, वाद्यानामधिष्ठानदेवताः काः इति वर्णिताः।

34. पुष्करवादाध्यायनामके चतुस्त्रिंशत्तमाध्याये पुरुषेषु स्त्रीषु च उत्तम-मध्यय- अधमाः तिस्रः प्रकृतयः तेषां लक्षणानि, चत्वारः नायकभेदाः, रूपकेषु विविधाः स्त्रियः, तेषां वर्णनम्, कञ्चुकीयः वर्षवरः अन्तःपुरपरिचारिकाः, सेनापतिः, पुरोहितः, मन्त्री, सचिवः, इत्यादीनां प्रधानलक्षणानि वर्णितानि।

35. भूमिकाविकल्पाध्यायनामके पञ्चत्रिंशत्तमाध्याये नटकप्रयोगकारीषु नटसमुदायेषु तेषां कर्तव्यनिर्देशनं, एकैकस्य योग्यताः, रावणादीनां पात्राणां कराः, शिरांशि इत्यादयः विविधनाट्यसाधनानि, स्त्रीपात्रधारिणां पुरुषाणां, पुरुषपात्रधारिस्त्रीणां विषयाः, सुकुमाररूपकप्रयोगाः, आविद्धरूपकप्रयोगः, सूत्रधारपारिपार्श्विकाणां योग्यताः, विट - शकार -विदूषक-चेट- नायिका - गणिका-नटादीनां लक्षणानि, माल्यकार - वेषकर - रजक - कारुकादिशिल्पीनां लक्षणानि वर्णितानि ।

36. नाट्यशापनामके षट्त्रिंशत्तमाध्याये पूर्वरङ्गे, कां देवतामर्चयेत्, स्वर्गलोकात् नाट्यं भूलोकं कथमागतम्? भरतानुयायिनां नटसंज्ञा किमर्थमागतमिति आत्रेयादयो भरतं प्रपृच्छुः। भरतः एवं समाधानं चकार मदनुयायिनः नाट्यवेदे स्वीयप्रावीण्यं दृष्ट्वा तृप्ताः मुनीनामनुकरणं प्रारभन्। अनन्तरं कानिचन अनुचितरूपकाणां निर्माणेन क्रुद्धाः मुनीश्वराः भरतानामनुयायिनः शूद्रा भवन्तीति शापं चक्रुः । नाट्यशास्त्रम् उत्तमशिष्याणां बोधनेन शापस्य प्रायश्चित्तं भवेदिति भरतः तदनुयायिनां अकथयत्। तत्पश्चात् इन्द्रपदवीमधिष्ठितनहुषः नाट्यशास्त्रं भूलोके प्रचारं करणीयमिति भरतमादिष्टः। कोहलः नाट्यवेदसम्बद्धांशान् ग्रन्थयतीति तेनैव नहुषेन उक्तम्। अनन्तरं भरतकुमाराः, शिष्याश्च स्वपुत्रेभ्यः शिष्येभ्यः नाट्यशास्त्रमबोधयन्। कोहलः, वात्स्यः, शाण्डिल्यः, धूर्तलः च नाट्यशास्त्रं लोकेऽस्मिन् प्रचारं चक्रुः। एतन्नाट्यशास्त्रं बहुमङ्गलकरं, पवित्रञ्च। पुष्पगन्धादीनां पूजापेक्षया नाट्यप्रयोगेन एव देवाः तुष्यन्तीति अत्र वर्णितम्।

एतन्नाट्यसर्वस्वमिव नाट्यशास्त्रस्यविषयाणां संक्षिप्तस्वरुपम्। रूपकप्रयोगदर्शनेन जनितानन्दस्य मूलकारणमत्रग्रन्थे अतिविस्तृतया विश्लेष्य विवेचितम्। प्रेक्षागृहनिर्माणं,

विविधच्छन्दसः स्वरुपं, अभिनयाः सम्भाषणे वाक्योच्चारणविधानानि, विविधरुपकस्वरुपं, कथावस्तुस्थितपद्धतयः विपुलं चर्चिताः। गीतालापनविधानानि, उपयोक्तव्यवाद्यानि, सङ्गीतस्वराश्च प्रतिपादिताः। एतदतिरिच्य रुपकस्य अत्युन्नतप्रयोजनानि, आदर्शानि च विशदीकृत्य, असभ्यचेष्टाभाषणादीनां प्रयोगः निषिद्धः ।

उपसंहारः :-

नटाः अत्युन्नताध्यात्मिकोन्नतिं लक्ष्यं कृत्वा स्वीयकलां श्रद्धया अभ्यस्य तस्मिन् निर्दुष्टप्रावीण्यमापाद्य, तद्द्वारा सामाजिकसेवां कृत्वा पुण्यं लभेयुः इति उपदिष्टम्। नाट्यशास्त्रे अन्तिमाध्याये उक्तरीत्या नटानां नीतिबाह्यप्रवृत्या नटाः, नाटकाश्च अपकीर्तिमाप्ताः इति स्पष्टं भवति। तदपकीर्तिनिष्कसनाय शास्त्रेऽस्मिन् नटाः, रुपकाश्च अत्युन्नतमूल्यान् प्रपाल्य समाजोन्नत्यै, सेवायै च स्वजीवनमङ्कितं कुर्युः इति उपदेशः कृतः। नाटकग्रन्थेषु प्रपञ्चवाङ्मये नाट्यशास्त्रतुल्यग्रन्थः एव नासीदिति निश्चप्रचं वक्तुं शक्यते। नाट्यशास्त्रम् असाधारणाद्भुतग्रन्थः समग्रविषयप्रतिपादने, साहित्यसौन्दर्ये, कलात्मकवैचित्र्यां नाट्यशास्त्रग्रन्थः निरुपमानः।

एतद्ग्रन्थव्याख्यातारः, इतरशास्त्रकाराश्च सूत्रमिति नाम्नानाट्यशास्त्रस्य निर्देशं कारिताः। लघुपदैः, अतिविस्तृतमर्थं बोधयत् प्रामाणिकशास्त्रग्रन्थमुद्दिश्य 'सूत्रम्' इति निर्देशनं भारतीयप्राचीनशास्त्रसम्प्रदायः। नाट्यशास्त्रव्याख्याप्रारम्भे अभिनवगुप्ताचार्याः "षट्त्रिंशकं भरतसूत्रमिदं विवृण्वन्, वन्दे शिवं श्रुति- तदर्थ विवेकिधाम" इत्यकथयन्। पुराणेषु लभ्यमान-ऐतिहासिककालक्रमान् परिशीलनेन भरतः अतिप्राचीनः इति विषयः स्पष्टं भवति। रामायण-महाभारतयोरनन्तरमुपलभ्यमानपुरातनश्लोकबद्ध विशालग्रन्थः नाट्यशास्त्रमेव इति निश्चयेन वक्तुं शक्यते।

-:: इति शम् ::-

उपयुक्तग्रन्थसूची

१. भरतनाट्यशास्त्रम् – निर्णयसागर् प्रेस्

२. भरतनाट्यशास्त्रम् – अभिनवभारती-गायकड् ओरियंटल् प्रेस्

३. भरतनाट्यशास्त्रम् – आन्ध्रभाषाव्याख्या- डा. पुल्लेल श्रीरामचन्द्रुडु, जयलक्ष्मी पब्लिकेशन्स्-हैदराबाद्-१९९६

४. काव्यालङ्कारसङ्ग्रहः-चौकाम्बा संस्कृतसीरीज्-वाराणसी-२०२१

५. भावप्रकाशम्- चौकाम्बा संस्कृतसीरीज्-वाराणसी-२०२४

६. काव्यादर्शः-परिमला पब्लिक्शन्स्, दिल्ली-२००९

७. अमरकोशः-जयलक्ष्मी पब्लिकेशन्स्-हैदराबाद्-१९९६

८. मनुस्मृतिः – भगवान् दत्तशास्त्री राकेश् उदयाचल प्रेस्- हवडा-१९६७

पदटिप्पणी

1.नाट्यशास्त्रम्-१-४९
2.अत्रैव-१-११४
3.अत्रैव-१-५४
4.अत्रैव-६-१५
5.अत्रैव-६-८३
6.अत्रैव-६-९, १०,११
7.अत्रैव-६-१०

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

रांगेय राघव के कथा साहित्य में उपनिवेशवाद

डॉ. सुशीला यादव
सहायक आचार्य, हिन्दी
बैजनाथ चौधरी राजकीय महिला महाविद्यालय,
नांगल चौधरी, जिला-महेन्द्रगढ़ (हरियाणा)
Mob-No- 9460954561
E-Mail id sushila0381@gmail.com

रांगेय राघव का जन्म 17 जनवरी सन्ध 1923 को आगरा में हुआ। माता कन्नड़ और पिता तमिल थे। इनका मूल नाम टी. एन. वी. आचार्य था। लेखन के क्षेत्र में आने पर इन्होने 'रांगेय राघव' नाम अपनाया था। इनकी मातृभाषा तमिल थी। आपके परिवार के लोग काफ़ी पहले मथुरा में आकर बस ग़ए थे और भरतपुर के पास वैर नामक स्थान में इनकी जमींदारी थी। आगरा विश्वविद्यालय से हिंदी में एम. ए. करने के बाद वहीं से सन् 1948 मे 'श्री गुरु गोरखनाथ और उनका युग' विषय पर आपने पीएचडी की। काफ़ी लंबे अरसे तक प्रगतिशील आंदोलनों के प्रमुख सूत्रधार रहे। अपने संक्षिप्त साहित्यिक जीवन में 150 के लगभग साहित्यिक कृतियाँ प्रदान कर गए हैं। कविता, कहानी, उपन्यास, आलोचना, इतिहास और कला आदि विषयों से सम्बन्धित आपकी अनेक महत्त्वपूर्ण कृतियाँ इनमें शामिल हैं। 1944 के बंगाल के अकाल के दिनों में भयंकर विभीषिका से आक्रांत प्रदेश की पैदल यात्रा करके उन्होंने जो रिपोर्ताज लिखे, सर्वप्रथम उन्हीं से हिंदी के अनेक साहित्यकारों का ध्यान डॉ. राघव की ओर गया था और जब वे 'हंस' में प्रकाशित होने प्रारंभ हुए तो साहित्यिक क्षेत्र में 'रिपोर्ताज-लेखन की परंपरा-सी चल पड़ी। सन् 1946 में जब इनका पहला उपन्यास 'घरौंदे' प्रकाशित हुआ तो उसने भी लेखन-शैली और कथावस्तु के कारण हिंदी के पाठकों और अध्येताओं को अपनी ओर आकृष्ट किया। इनहोने 50 से अधिक उपन्यास लिखे। 'भारती के सपूत', 'लोई का ताना', 'रत्ना की बात', 'देवकी का बेटा', 'यशोधरा जीत गई', 'लखमा की आँखें', 'धूनी और धुआँ', तथा 'मेरी भव बाधा हरो' आदि उपन्यास ऐतिहासिक और मिथिकीय इतिहास पर आधृत हैं। जहाँ भारतेन्दु, कबीर, तुलसी, कृष्ण, बुद्ध, विद्यापति, गोरखनाथ और बिहारी आदि से संबंधित चरित्रों को केंद्र रखा है। इन्होने अन्य प्रमुख उपन्यासों में 'मुर्दो का टीला', 'सीधा-सादा रास्ता' और 'कब तक पुकारूँ' हैं। अपने साहित्यिक जीवन के पूर्व में इन्होने कहानियाँ अधिक लिखी थीं; 'देवदासी', 'साम्राज्य का वैभव', 'जीवन के दाने', 'अधूरी सूरत', 'समुद्र के फेन', 'अंगारे न बुझे', 'इंसान पैदा हुआ' और 'पाँच गधे" आदि इनकी कहानियों के संग्रह हैं। 'गदल' शीर्षक इनकी कहानी हिंदी की सर्वोत्तम कहानियों में से एक है। 'तूफ़ानों के बीच' इनका एकमात्र रिपोर्ताज है। कविता-लेखन में भी आपकी 'अजेय खंडहर', 'पिघलते पत्थर', 'राह के दीपक', 'रूप की छाया' और 'मेधावी' आदि कृतियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। नाटक और एकांकी भी आपने बहुत लिखे। इनका 'विरूढक' नाटक है और 'इंद्र-धनुष' पुस्तक एकांकियों का संकलन। 'आधुनिक हिंदी कविता में प्रेम और शृंगार', 'आधुनिक हिंदी कविता में विषय और शैली, 'काव्य, कला और शास्त्र', 'काव्य, यथार्थ और प्रगति', 'समीक्षा और आदर्श', 'महाकाव्य विवेचन', 'प्रगतिशील साहित्य के मानदंड' और तुलसीदास का कथा-शिल्प' आदि सैद्धांतिकी और आलोचना से संबंधित पुस्तकें हैं। 'प्राचीन भारतीय परंपरा और इतिहास' तया 'भारतीय-चिन्तन' जैसे इनके ग्रन्थ इतिहास से संबंधित हैं।

'प्राचीन भारतीय परंपरा और इतिहास' के लिए सन् 1951 में 'हरजीमल डालमिया पुरस्कार' मिला। इन्होने 'शेक्सपीयर' के प्रायः सभी नाटकों का हिंदी में सरल और सुबोध अनुवाद किया। संस्कृत के अमर ग्रन्थों 'ऋतु संहार', 'मेघदूत', 'दशकुमार चरित', 'मृच्छकटिकम्' और 'मुद्राराक्षस' आदि को भी इन्होंने हिंदी पाठकों के लिए सुलभ किया। 'गीत गोविंद" का आपके द्वारा किया गया अनुवाद भी सराहनीय रहा। डॉ. रागेय राघव एक उत्कृष्ट चित्रकार भी थे। रांगेय राघव का निधन 12 सितंबर सन् 1962 को बंबई के 'टाटा मेमोरियल अस्पताल' में हुआ, जहाँ वे कैंसर का इलाज करा रहे थे।

उपनिवेशवाद का प्रभाव साहित्य पर हमेशा से रहा है और आगे भी रहेगा, चाहे साहित्य विधा गद्य हो या पद्य। हमारे साहित्यकारों के विचार भी उपनिवेशवाद से प्रभावित रहे हैं। महान साहित्यकार प्रेमचन्दजी ने भी कहा है कि हमारा साहित्य ऐसा होना चाहिए- ''जिसमें उच्च चिन्तन हो, स्वाधीनता का भाव हो, सौंदर्य का सार हो, सृजन की आत्मा हो, जीवन की सच्चाइयों का प्रकाश हो जो हम में गति, संघर्ष और बेचैनी पैदा करे, सुलाये नहीं, क्योंकि अब ज्यादा सोना मृत्यु का लक्षण है।''[1] ऐसे ही महान साहित्यकार रांगेय राघवजी हैं। जिनके साहित्य में मानव मन को हिला देने वाली भारतीय आत्मा की करुण पुकार है, आर्थिक संघर्ष की पीड़ा और शोषितों की करुण गाथा है। राघवजी के समय में सम्पूर्ण भारत पर अंग्रेजों का शासन था। उन्होंने विदेशी दास्ता की गुलामी का चित्रण अपने कथा साहित्य में किया है। राघवजी के 'सीधा-सादा रास्ता' उपन्यास में अंग्रेजों का विरोध करते हुए उपन्यास का पात्र ब्रह्मदत्त कहता है- ''मैं अंग्रेजों से अंत तक लड़ूँगा। अंग्रेज जाति से नहीं, अंग्रेजी साम्राज्यवाद से.......... इधर तुम भूखे मरते हो, उधर वे सम्पत्ति इकट्ठी करते हैं। तुम इनको अपना सर्वेसर्वा न समझो।''[2] यह स्थिति तो देश के आजाद होने से पहले की थी लेकिन अब देश आजाद हो गया फिर भी देश में गरीबों का शोषण बढता ही जा रहा है। राघवजी कहते है कि देश स्वतंत्र हुआ मगर अभी असली आजादी कहाँ आयी, अभी तो रजवाड़ों और अंग्रेजों की दिमागी गुलामी बाकी है, उसके खिलाफ तो हमें लड़ना ही है।

हम कह सकते है कि देश आजाद होने पर शासन पद्धति बदल गई पर शासकों की मनोवर्ति वैसी ही रही, जैसे अंग्रेज शासकों की थी। पुराने गोरे शासकों का स्थान आज के भारतीय नेताओं तथा अफसरों ने ले लिया है। राघवजी के 'हुजूर' उपन्यास में पात्र जैक कहता है- ''खुदाहाफिज, मैं कभी किसानों, मजदूरों के यहाँ नहीं रहा। वरना मेरा न जाने क्या हाल होता। गनीमत है कि हिन्दुस्तान के किसान, मजदूर अभी मुझे नहीं पालते। यहाँ पर लेखक ने शोषकों और उत्पीड़कों पर तीखा व्यंग्य किया है।

रांगेय राघवजी ने अपने अधिकांश ऐतिहासिक एवं जीवन-चरितात्मक उपन्यासों में विदेशियों के भीषण एवं बर्बर आक्रमण का यथावत वर्णन करने का प्रयास किया है। 'जब आवेगी काली घटा' उपन्यास में तुर्को के बर्बर कार्यो का वर्णन करते हुए 'झंगरनाथ' ने कहा- ''वे योगियों को भी काटते हैं, हिन्दुओं को भी..... वे हमारे मन्दिरों और ग्रंथों को भी नष्ट करते हैं।'' अलाउद्दीन की बेलसा-विजय के पश्चात् वहाँ की अनिंद्य सुन्दरी कन्याएँ पकड़ कर लायी गयी थीं। बाहर सैनिक स्त्रियों के साथ नगर में बलात्कार करते घूमते थे। आग लगायी जा रही थी। अलाउद्दीन उन सर्वश्रेष्ठ सुन्दरियों को बलपूर्वक अपने आनन्द का साधन बना रहा था। मध्यकाल में राजनीतिक अशांति एवं सामाजिक विघटन के कारण भारतीय संस्कृति खतरे में थी। तुर्को की नृशंसता के कारण हिन्दू एवं हिन्दू धर्म की प्रतिष्ठा को गहरा आघात लग रहा था।

सामन्तीय एवं पूँजीवादी उत्पीड़न का खौफनाक तथा बर्बर पक्ष तो 'कब तक पुकारूँ' उपन्यास में खुलकर उद्घाटित हुआ है। 'कब तक पुकारूँ' उपन्यास में करनट कबीले का जो वृतान्त एवं विवरण है वह सामाजिक तथा सांस्कृतिक की विश्वस्त सामग्री बन गया है, यद्यपि अतिशयता तथा स्वच्छंद कल्पना भी दृष्टिगोचर होती है। करनट समाज अत्यधिक गरीबी, निरक्षता और बीमारियों के शिकार भी है। ये लोग चोरी करते हैं, इनकी औरतें डोमिनी की तरह नाचती है तथा ऊँची जाति के लोगों के यौन-शोषण का शिकार होती हैं। इनकी औरतें वेश्या की तरह धन कमाई का एक साधन भी बन जाती हैं। यह एक खानाबदोश समाज की सामाजिकता तथा नैतिकता का दस्तावेज भी बन गया है। अतः करनट समाज का भयंकर शोषण मानवता की जड़े हिला देता है। यह शोषण पुराने समय से चला आ रहा है। इस शोषण के प्रति भयंकर आक्रोश प्रकट करते हुए राघवजी कहते हैं- ''शोषण की घुटन सदैव नहीं रहेगी। वह मिट जायेगी। सत्य सूर्य है। वह सदैव मेघों से घिरा नहीं रहेगा।

मानवता पर से यह बरसात एक दिन अवश्य दूर होगी और नई शरद् में नये फूल खिलेंगे।'' राघवजी ने उत्पीड़ित और शोषित नटों के आर्थिक शोषण और उससे उत्पन्न उनकी सामाजिक नैतिक-मान्यताओं को सही-सही प्रकट करने का सफल प्रयास किया है।

राघवजी ने 'धरती मेरा घर' उपन्यास में नेताओं के नैतिक पतन एवं राजनीतिक अशान्ति की चर्चा की है। भारतीय शासकों की शोषण वृत्ति अंग्रेजों से भी घातक एवं घिनौनी हो गयी है। जनता आज भी पहले ही जैसी चूसी जा रही है। 'धरती मेरा घर' उपन्यास के पात्र प्रो0 शर्मा ने स्वतंत्रता के पूर्व एवं स्वतंत्रता के पश्चात् की स्थितियों की तुलना करते हुए कहा- ''तब क्या था? खानदानों की इज्जत। रियासती षड्यंत्र। वैभव। अंग्रेजों की खुशामद। जनता की घोर दरिद्रता। एक गुलामी और उसकी घुटन। लेकिन फिर भी उस व्यभिचार के विरूद्ध स्वर नहीं उठता था। सबमें जैसे आंतक छाया हुआ था। अब क्या है? जनता की विक्षुब्ध लहरें। उथल-पुथल पलटते तख्त। खानदानों की छायाओं के खण्डहर। बगावत मगर बेतरतीब। लोगों में असन्तोष, लेकिन स्वार्थ के रास्ते जाने की भूख। लुटेरों की पोशाक बदली, मगर उनके भतर हैवान वैसा ही पैदा हो गया।'' राघवजी का मानना है कि साहित्य केवल निम्न वर्गों का जीवन चरित्र नहीं प्रस्तुत करता वरन् वह उच्च वर्गो की वास्तविकता, उनके संघर्ष, स्वार्थ-रक्षा के प्रयत्न, अन्तर्विरोध आदि को भी प्रकट करता है। राघवजी सामाज में उस वर्ग व्यवस्था के खिलाफ थे जो कि वैमनस्य और वर्ग-संघर्ष को बढावा देती हो। वे शोषित वर्ग पर अत्याचार और उत्पीड़न के दर्द को समझकर उन्हें संघर्ष हेतू प्रेरित भी करना चाहते हैं चाहे वो हिंसात्मक ही क्यों न हो। वर्ग वैषम्य का अनुभव करते हुए 'सीधा-सादा रास्ता' उपन्यास का प्रमुख पात्र ब्रह्मदत्त कहता है- ''मैं वर्ग के अनुसार व्यक्ति को देखता हूँ। मैं भौतिकतावादी कल्याण को ही सबसे बड़ा समझता हूँ। मुझे उस दयालुता में श्रद्धा नहीं जिसकी सामर्थ्य शोषक पर टिकी है। शोषक के हथियारों से न डरो। यही मार्क्स ने कहा था, लेनिन ने कहा था, यदि हो सके तो जैसे ही अन्यथा शास्त्रों से शोषक को हटा दो। हर नये निर्माण के लिए एक ध्वंस की आवश्यकता है।'' राघवजी का मत है कि समाज में शोषण, वर्ग वैषम्य सदा नहीं रहेंगे। वे एक दिन अवश्य मिटेंगे।

यह कहा जाता है कि मध्यकाल में भारत में राष्ट्रीय एकता का अभाव था। राज्य छोटे-छोटे खण्डों में विभक्त थे। एक राजा दूसरे राजा से ईर्ष्या रखता था, जिसका फायदा उठाकर अंग्रेजों ने भारत में अपनी सत्ता जमाई। 'भारती का सपूत' उपन्यास में राघवजी ने उपर्युक्त मानसिकता का विश्लेषण करते हुए कहते हैं- ''भारत में धार्मिक एकता का, सांस्कृतिक एकता का भाव था, देशभक्ति के नाम पर छोटे-छोटे भू-भागों से अपनत्व था। राष्ट्रीयता का जो मध्यवगीय दृष्टिकोण है, वह तब नहीं था और यहाँ मशीन बाहर से आई, विदेशी हाथों में से आई, यह एक उपनिवेश था, जिसमें सौदागरों ने तलवारों के बल पर हुकूमत कायम नहीं की थी, देशी फूट का फायदा उठाकर जालसाजी, मक्कारी और चालाकी से अपना राज बनाया था।'' उस समय देश में बेदखल हुआ किसान भूखा मरने लगा था और उद्योग-धन्धे, कारीगरी के काम चौपट होने लगे थे। बेकारी बढ़ने लगी और जनता में विद्रोह की भावना पैदा होने लगी। राघवजी कहते है कि उपनिवेशवाद ने हमारी भारतीय संस्कृति और सभ्यता को भी प्रभावित किया है। उन्होंने 'दायरे' उपन्यास में चित्रण किया है कि विदेशी सभ्यता और संस्कृति का अनुकरण भारतीय जीवन में दु्रुतगति से हो रहा है। ''यह अँगरेज़ियत की नकल है या अंग्रेज साम्राज्यवादियों के रहन-सहन की नकल है। अंग्रेज साम्राज्यवादी के पास पैसा था, हुकूमत थी। आज उसी की नकल में बहुत से मध्य वर्ग के परिवारों में बाप 'डैडी' और मां 'मम्मी' हो गई। ....और आजकल घर में बीबीजी या बहूजी की जगह 'मेमसाबें' लेती जा रही हैं। चलने के लहजे का ठुमका बदल रहा है, मुस्कराहटें बदलती जा रही हैं, और यह सब कल्चर है। कल्चर!!'' भारतीय समाज में इस कल्चर के नाम पर बहुत कुछ परिवर्तन आ रहा है। आज सब कुछ आदमी के न चाहते हुए भी बदल रहा है। अंग्रेजों के आगमन काल से भारतीय जन-जीवन में अंग्रेजी पढ़े लिखे लोगों ने पाश्चात्य वेश-भूषणा धारण की तथा महिलाओं ने अनेक प्रकार की प्रसाधन सामग्रियों का प्रयोग करना शुरू किया। यह पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव का ही परिणाम है कि वेशभूषा में क्रांतिकारी परिवर्तन आ गया।

राघवजी कहते हैं कि पूँजीपति वर्ग शोषक है। वह श्रमिकों का अधिक से अधिक शोषण करने को तत्पर रहता है।

लेकिन श्रमिक संगठित होकर पूँजीपतियों के प्रति विद्रोह न कर दे, इसके लिए वह किसी न किसी रूप में उनको सहायता पहुँचाकर उनके आक्रोश को शांत रखने की कोशिश करता है। वह यह कार्य संवेदना के वशीभूत होकर नहीं बल्कि भय से सम्प्रेरित होकर करता है। हमारे समाज में अमीर और गरीब के स्तर में बहुत बड़ी असमानता है। सदियों से उच्च वर्ग, गरीबों का शोषण करता आ रहा है। मजदूर वर्ग कठोर परिश्रम करता है और उच्च वर्ग उन्हें उचित पारिश्रमिक न देकर पैसा, विलास में व्यय करता है, जिसका चित्रण 'हुजूर' उपन्यास में इस प्रकार से किया गया है- ''वहाँ किसानों के लोहू से धन के देवता का तर्पण होता था। गर्मी की लू की चपेट से जो खून-पसीना बनकर जिस्म से टपकता था, वह मसूरी में बादल बनकर मनोरंजन करने, वहाँ इकट्ठा हो जाता था और इतना बड़ा असाम्य भी आनन्द से चला आ रहा था।'' यह स्थिति हमें वर्तमान समय में भी देखने को मिलती है।

अतः उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते है कि रांगेय राघवजी के समय एक ओर तो अंग्रेजों को देश से बाहर निकाले जाने को आन्दोलन हो रहे थे तो दूसरी ओर भारत में यूरोपीय संस्कृति का भी बोल-बाला था। नई पीढ़ी यूरोपीय संस्कृति की दीवानी हो रही थी। भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति में पाश्चात्य अनुकरण द्रुतगति से हो रहा था। रहन-सहन और खान-पान से अधिकाधिक लोग यूरोपीय होते जा रहे थे। पाश्चात्य की दौड़ में भारतीय जनता अपने धार्मिक रीति-रिवाजों को भी पीछे छोड़ती जा रही थी। सांस्कृतिक रूप से समाज में धार्मिकता की भावना बहुत कुछ ऊपरी वस्तु बन गई थी। ऐसी स्थिति में एक लेखक अपने लेखन के द्वारा ही इन परिस्थितियों से समाज को अवगत कराता है। इसलिए कहते है-'जहाँ न पहूँचे रवि, वहाँ पहुँचे कवि' उक्ति सभी साहित्यकारों पर चरितार्थ होती है। क्योंकि साहित्यकार केवल अपने जीन को नहीं देखता, उसमें पूरी मानवता के प्रति आस्था होती है।

सन्दर्भ

1. प्रतियोगिता साहित्य, अशोक तिवारी, साहित्य भवन आगरा, पृष्ठ-240
2. सीधा-सादा रास्ता, रांगेय राघव, राजपाल एण्ड संस नई दिल्ली, पृष्ठ-278
3. हुजूर, रांगेय राघव, राजपाल एण्ड संस नई दिल्ली, पृष्ठ-105
4. जब आवेगी काली घटा, रांगेय राघव, राजपाल एण्ड संस नई दिल्ली, पृष्ठ-39
5. कब तक पुकारूँ, रांगेय राघव, राजपाल एण्ड संस नई दिल्ली, संस्करण 2016, पृष्ठ-410
6. धरती मेरा घर, रांगेय राघव, राजपाल एण्ड संस नई दिल्ली, संस्करण 2009, पृष्ठ-81
7. सीधा-सादा रास्ता, रांगेय राघव राजपाल एण्ड संस नई दिल्ली, पृष्ठ-275
8. भारती का सपूत, रांगेय राघव, राजपाल एण्ड संस नई दिल्ली, पृष्ठ-94
9. दायरे, रांगेय राघव राजपाल एण्ड संस नई दिल्ली, पृष्ठ-19
10. हुजूर, रांगेय राघव, राजपाल एण्ड संस नई दिल्ली, पृष्ठ-33

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

भारतीय संस्कृति और 'जड़े' कहानी का जीवन

प्रा. डॉ. पवन नागनाथ एमेकर
के.बापूसाहेब पाटील एकंबेकर महाविघालय
हणेगाव ता.देगलूर जि.नांदेड महाराष्ट्र
Email-pro-pavanemekar@gmail.com

समस्त जगत में अगर भारत देश को देखा जाये तो भारत में रहनेवाले लोग, उनकी भाषाएँ, बोली, जात, धर्म सभी में भिन्नता नजर आती है। लेकिन जब राष्ट्र की बात आती है तो इस भिन्नता में भी एकता नजर आती हैं। हमारे देश का साहित्य भी बहुतसी भाषाओं में ही भले ही क्यों न लिखा गया हो, लेकिन इसमें हमारे संस्कृति की सोंधी खुशबू नजर आती है। भारतीय साहित्यकारों ने अपने साहित्य के द्वारा हमारे देश की हर एक व्यवस्था, परंपरा, प्रेम, त्यौहार इन सभी का यथार्थ रूप से चित्रण किया है। डॉ. हरीश कुमार सेठी लिखते है, "साहित्य का प्रयोजन मानवीय जीवन को अर्थवत्ता प्रदान करना है, मानव का हित करना है। यह मानवीय सार्थकता जीवन में आस्था रखते हुए विकास-पथ पर निरन्तर बढ़ते रहने में ही है। और यह मानवीय सार्थकता का प्रत्यय ,प्रत्यक्ष रूप से जीवन-मूल्यों से सम्बद्ध है।"[1]

हिंदी साहित्य में संस्कृति की महानता को लेकर बहुत कुछ लिखा गया है।बहुतसी कहघनियाँ भी लिखी गई है, जिसके माध्यम से भारतीय संस्कृति का गुणगान किया गया है। ऐसी ही एक कहानी है 'जड़ें' जिसे नेचुरियाजो चुचा नामक लेखक ने लिखी है। यह लेखक नागालैंड राज्य के खोनोमा (हैलेड) गाँव के रहने वाले थे। इन्हें सन 1996 में भारत के राष्ट्रपती श्री आर. के नारायण द्वारा आदर्श राज्य शिक्षक पुरस्कार प्राप्त हुआ। इन्होंने अपनी कहानी 'जड़े' के माध्यम से भारतीय संस्कृति एवं परंपरा को प्रस्तुत किया है। यह कथा विलिएन्यू नामक नायक के इर्द-गिर्द घुमती हुई नजर आती है। विलिएन्यू जब विदेश पढ़ने जाता है, तभी उसके माँ की मृत्यू होती है। विलिएन्यू को खबर मिलती है वह माँ के अंतिम संस्कार हेतू आना चाहता हैं लेकिन पिता की ताकीद मिली, जिसका वर्णन लेखक इस प्रकार करते है, "जो होना था वह हो चुका। यहाँ आने की मत सोचना। तुम्हारी पढ़ाई का नुकसान होगा। पढ़ाई पूरी कर ही वतन लौटना।"[2]

विलिएन्यू के पिता की इन बातो से उनकी अपने, बेटे के भविष्य के प्रति के दर्शन होते नजर आते है। अपने माँ के अंतिम संस्कार से अधिक महत्व पढ़ाई को देकर एक पिता अपने बेटे के भविष्य को सुखकर बनाने का प्रयास करता है। आज भी ऐसे बहुतसे माता-पिता है जो अपने बेटे-बेटी की पढ़ाई के लिए निरंतर मेहनत करते रहते है। कभी वे अपने बच्चों को अपनी तकघलिफों के बारे में नहीं बतलाते है। फिर भी आज के बच्चें अपने माता-पिता को समझने में पुर्णतरू सफल ही होते है ऐसा कम ही देखने को मिलता है। विलिएन्यू जब अपनी पढ़ाई पूरी कर गांव आता है उससे पहले ही उसके पिता की भी मृत्यू होती है। लेखक इस बात का वर्णन करते हुए लिखते है, "पर विलिएन्यू ने जैसे ही अपनी पढ़ाई पूरी की, उसके अपुओ (पिता) ने भी आँखे मूंद लीं। वे अपने बेटे की चमकदार डिग्रियाँ और प्रमाण-पत्र भी नहीं देख पाए जिनका उन्होंने जीवन-भर इंतजार किया था।"[3]

अपने पिता के मृत्यु के बाद और अपनी पढ़ाई पूरी करके जब विलिएन्यू गाँव वापस लौटता है तब वह कुछ दिन गाँव

में रहता है। लेकिन वह अपने गाँव की भाषा नहीं बोल पाता था उसे अंग्रेजी आती थी। उसे लगता की उसकी इतनी पढ़ाई हुई है तो, गाँव में उसका गुणगान होगा लेकिन गांव में अनपढ़ लोगों के कारण वह किसीसे वार्ता लाप नहीं कर पाता है। इसका वर्णन करते हुए लेखक लिखते है, "अब जब वह इतनी मेहनत और जीवन के कितने ही वर्ष खपाने के बाद अपने गाँव लौटा था तो वह सारी विद्या उसके लिए निरर्थक ही सिद्ध हुई थी। गाँव के लोगों से भाषा की समस्या के कारण अधिक मिलता जुलता नहीं था।"[4]

केवल एक अजीबों नामक व्यक्ति ही टूटी-फूटी भाषा में अंग्रेजी में विलिएन्यू से बात करते रहता। गाँव की टेनिडी भाषा विलिएन्यू को नहीं आती थी। एक दिन जब विलिएन्यू और अजीबों अंकल दोनों घुमने निकलते है, तब एक दृश्य वह दोनों देखते जहां एक बूढ़ा व्यक्ति अपने खेत में काम कर रहा है। तब एक युवक जो उस बूढे का पोता है वह आकर उस बूढ़े के हाथ से वे कुदाल लेकर खुद काम करने लगता है। तब अजीबों अंकल विलिएन्यू को कहते है, "देखो, यह है हमारी मिट्टी का संस्कार!"[5] अजीबो इस घटना के माध्यम से विलिएन्यू को हमारे देश की संस्कृति के बारे में, आदर्शता की बातें करता है लेकिन विदेश में पढ़े लिखे बड़े हुए विलिएन्यू को इस दृश्य में कोई आदर्शता या अच्छाई नजर नहीं आती है। बूढ़ा अगर, काम कर रहा हैं तो उस युवक को उसे रोकना नहीं चाहिए यह विचार उस विलिएन्यू के होते हैं।

इसी प्रकार की और एक गाँव की कथा अज़ीबो अंकल ने विलिएन्यू को बताई जिसमें एक घर में दों औरतें रहती थी। दोनों का रिश्ता सास-बहू का था। घर में जब खाने की कमी थी और एक ही व्यक्ति खा सके इतने चावल घर में थे। तब दोनों औरतें वह खाना एक दूसरे को खिलाना चाहते हैं और खुद भूखे रहना चाहते है। इस घटना को बताने पर भी विलिएन्यू को इसमे कोई बड़ी बात नजर नहीं आती है। विलिएन्यू की मानसिकता का वर्णन करते हुए लेखक लिखते है की, "उसे लगा कि अर्थहीन बातों पर ही गाँव वाले अधिक ध्यान देते हैं। उसे यह सब खोखला, रूखा और बेकार प्रतीत हुआ। उसका मन जलद ही इन सब बातों से उचाट हो गया।"[6]

विलिएन्यू अपने पढ़ाई के लिए विदेश में गया इस कारण उस पर पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव अधिक था। अजीबो अंकल हमारे देश की परंपरा, संस्कृति, सभ्यता, प्रेम भावना के बारे में विलिएन्यू को समझाना चाहते है लेकिन उसका अधिकांश समय विदेश में बितने के कारण उस पर पाश्चात्य संस्कृति का ही अधिक प्रभाव दिखाई देता है। गाँव में कुछ दिन रहने के बाद वह उब जाता है। गाँव वाले उसका मूल्य समझने की स्थिति में नहीं थे। वे उसका सम्मान करने की बजाए उसघ्का उपहास करने में लग जाते थे। इस बात को देख विलिएन्यू अपना मकान अजीबो अंकल को सौंप, दिल्ली जाकर रहने लगता है। वहा पर उसे अंग्रेजी बोलने वाले लोग और क्लब, हॉटेल सभी मिलता है। वह वहाँ पर खुशी से रहने लगता है।

अब विलिएन्यू दिल्ली रहने लगा उसे वहाँ का माहौल अच्छा लगने लगता है लेकिन जब वह एक बार बिमार पड़ जाता है तो उसके पास उसका हाल पूछने के लिए कोई नहीं आता है। इस बात की प्रस्तुति करते हुए लेखक लिखते है, "पर एक बार वह बुरी तरह बीमार पड़ गया। उसने अपने जाननेवालों में से कई लोगों से सम्पर्क किया मगर कोई उसकी सहायता को नहीं आया। किसी को उसकी सुध लेने की फुर्सत नहीं थी।"[7] इस प्रकार जब स्वयं पर संकट आया तो विलिएन्यू को लगा की कोई भी व्यक्ति यहां उसकी सहायता करने वाला नहीं है। यहाँ भी उसे लोग बाहरी व्यक्ति ही समझते है। वहाँ के लोगों के द्वारा उसे बाहरी समघ्झा जाने के बाद वह वहाँ से भी निराश होकर अपने गाँव वापस लौट आता है।

जब विलिएन्यू अपने गाँव टेनिइमिया वापस लौट आता है, तब वह अजीबो अंकल से मिल कहता है, "अंकल, मैं हमेशा के लिए लौट आया हूँ। मैं समझ गया हूँ, कि शिक्षा का अर्थ दुनिया जहान का ज्ञान समेटघ्घ भर नहीं है। असली शिक्षा तो यह है कि हम अपनी भाषा, परंपरा रीति-रिवाजों को जानें। भला अपनी जड़ों से कट कर कोई कितने समय जीवित रह सकता है?"[8] इन बातों को सुनकर हमें यह नजर आता है कि, कोई भी व्यक्ति अपने जुड़ों से हटकर जीवन नहीं जी सकता है। उसी भाँति हम भी हमारे देश की संस्कृति, सभ्यता, परंपराओं को भूल कर अपना जीवन अच्छी तरह के नहीं जी सकते हैं।

विलिएन्यू को अपने माता-पिता के गुजर जाने पर अकेले ही रहना पड़ता है। विदेश से पढ़ाई करके आने के बाद गाँव

तथा दिल्ली में भी इसे अकेला महसूस होता है। विलिएन्यू के जीवन का समय अंत्यंत दुःखद बितता है। इसके प्रकार के हालत के बारे में साधना अग्रवाल लिखती हे, "समय किसी के लिए नहीं रुकता। किसी के रहने न रहने पर भी वह लगातार आगे बढ़ने का धर्म निभाता है। किसी के लिए वह खुशियों की सौगात लेकर आता है तो किसी के सपने या उमीदें टूटने का भी दोष अपने सिर पर लेता है लेकिन उससे उसे कोई फर्क नहीं पड़ता।"[9]

प्रस्तुत कहानी जीवन कि सच्चाई को उजागर करते हुए नजर अति है। जडो से दूर रहकर जिस प्रकार से पेड हरा-भरा नहीं रह सकता उसी तरह से एक इन्सान भी अपनो से दूर रह्के अपना जीवन नहीं बिता सकता है। विलिएन्यू के माता-पिता के गुजर जाने पर विलिएन्यू दिल्ली में रहने जाता है लेकिन वहां पर भी जब उसका अच्छा-बुरा देखने वाला कोई नहीं मिलता है तब वह गांव वापस लौट आता है। लेखक इस दृश्य के माध्यम से पाठकों को यह संदेश देना चाहता है की, किसी भी व्यक्ति को अपने जड़ों से दूर नहीं जाना है। यह जड़े रिश्तों की हो या प्रेम की हो, संस्कृति की हो या सभ्यता की हो इनसे हम कभी दूर नहीं रह सकते है।

संदर्भ

1. डॉ सुरेश गौतम- भारतीय लोक साहित्य कोश-पृसं. 380
2. हिंदी कहानी साहित्य - डॉ.बी.आर.बोडके -पृ.सं 117
3. वही - पृ. 117
4. वही - पृ. 118
5. वही - पृ. 118
6. वही - पृ.1-119
7. वही - पृ. 119
8. वही - पृ. 120
9. हंस (मासिक पत्रिका) - संजय सहाय- अंक 6 जनवरी 2026- पृ. सं. 90

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

तेभागा आंदोलन और फ्लड कमिशन : सिफारिशों से संघर्ष तक का सफर

ज्योति कुमारी
शोधार्थी, इतिहास विभाग,
बी.आर. अंबेडकर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर
jyotimuz80@gmail.com

सारांश

यह शोध-पत्र बंगाल के तेभागा आंदोलन (1946-47) और फ्लड कमिशन की सिफारिशों के मध्य संबंध का ऐतिहासिक और विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। अध्ययन का मुख्य उद्देश्य यह समझना है कि किस प्रकार औपनिवेशिक शासन के अंतर्गत कृषि संरचना, बाढ़ प्रबंधन नीतियों तथा भूमि व्यवस्था की समस्याओं ने किसानों के असंतोष को जन्म दिया और अंततः तेभागा आंदोलन जैसे व्यापक किसान आंदोलन को जन्म दिया।

इस अध्ययन में ऐतिहासिक विश्लेषण पद्धति का उपयोग किया गया है, जिसके अंतर्गत औपनिवेशिक सरकारी अभिलेखों, आयोग की रिपोर्टों, इतिहासकारों की पुस्तकों तथा शोध-पत्रों का विश्लेषण किया गया है। फ्लड कमिशन (1940) द्वारा प्रस्तुत सिफारिशों ने बंगाल में बाढ़ नियंत्रण और कृषि सुधार की आवश्यकता को रेखांकित किया, परन्तु इन सिफारिशों के प्रभावी क्रियान्वयन में असफलता ने किसानों की आर्थिक स्थिति को और अधिक संकटपूर्ण बना दिया।

शोध के निष्कर्ष बताते हैं कि बटाईदारों (बर्गादारों) की दयनीय स्थिति, जमींदारी व्यवस्था का शोषण, और औपनिवेशिक प्रशासन की उदासीनता ने किसानों में असंतोष को बढ़ावा दिया। परिणामस्वरूप, किसान सभाओं के नेतृत्व में तेभागा आंदोलन प्रारंभ हुआ, जिसमें किसानों ने उपज का दो-तिहाई हिस्सा प्राप्त करने की मांग की।

यह अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि फ्लड कमिशन की सिफारिशों और तेभागा आंदोलन के बीच एक महत्वपूर्ण वैचारिक और संरचनात्मक संबंध था, जिसने भारतीय कृषि आंदोलनों के इतिहास में एक निर्णायक मोड़ प्रस्तुत किया।

मुख्य शब्द : तेभागा आंदोलन, फ्लड कमिशन, बर्गादार, जमींदारी व्यवस्था, किसान आंदोलन, औपनिवेशिक कृषि नीति, बंगाल

परिचय

बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में बंगाल की कृषि व्यवस्था अनेक संरचनात्मक समस्याओं से ग्रस्त थी। जमींदारी प्रथा, असमान भूमि स्वामित्व और प्राकृतिक आपदाओं के कारण किसानों की आर्थिक स्थिति अत्यंत दयनीय हो गई थी। विशेष रूप से बटाईदार किसान, जिन्हें बंगाल में बर्गादार कहा जाता था, उत्पादन का अधिकांश भार वहन करने के बावजूद अपनी उपज का बड़ा हिस्सा जमींदारों को देने के लिए बाध्य थे। इस व्यवस्था ने किसानों को निरंतर ऋण, निर्धनता और असुरक्षा

के चक्र में बाँधे रखा (Bose, 1993)।

बंगाल क्षेत्र में बार-बार आने वाली बाढ़ ने कृषि उत्पादन और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को गंभीर रूप से प्रभावित किया। 1930 और 1940 के दशक में बाढ़ की तीव्रता और आवृत्ति में वृद्धि हुई, जिससे कृषि संकट और अधिक गहरा गया। (Government of Bengal, 1940; Blyn, 1966) इन परिस्थितियों का अध्ययन करने और समाधान प्रस्तुत करने के उद्देश्य से ब्रिटिश सरकार ने 1940 में फ्लड कमिशन का गठन किया। इस आयोग का मुख्य उद्देश्य बाढ़ नियंत्रण, सिंचाई व्यवस्था के सुधार तथा कृषि उत्पादन में वृद्धि के उपाय सुझाना था (Government of Bengal, 1940)।

फ्लड कमिशन की सिफारिशों ने कृषि और ग्रामीण जीवन की समस्याओं को औपचारिक रूप से स्वीकार किया, किंतु इन सिफारिशों के प्रभावी कार्यान्वियन में प्रशासनिक असफलता स्पष्ट रूप से दिखाई दी। परिणामस्वरूप, किसानों की आर्थिक समस्याएँ और गहरी होती चली गईं। इसी पृष्ठभूमि में 1946-47 के दौरान बंगाल में तेभागा आंदोलन का उदय हुआ, जिसने भारतीय किसान आंदोलनों के इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया।

तेभागा आंदोलन का मुख्य उद्देश्य बटाईदारों को उनकी उपज का दो-तिहाई (2/3) हिस्सा सुनिश्चित करना था, जबकि पूर्व व्यवस्था में उन्हें केवल आधा या उससे भी कम हिस्सा प्राप्त होता था। यह आंदोलन केवल आर्थिक मांगों तक सीमित नहीं था, बल्कि यह सामाजिक न्याय, भूमि अधिकार और औपनिवेशिक शोषण के विरुद्ध एक व्यापक जनसंघर्ष के रूप में विकसित हुआ (Sen, 1982)।

तेभागा आंदोलन का ऐतिहासिक महत्व केवल बंगाल तक सीमित नहीं था, बल्कि इसने स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में भूमि सुधार नीतियों और कृषि संबंधी कानूनों के निर्माण को भी प्रभावित किया। इस आंदोलन ने यह स्पष्ट किया कि यदि प्रशासनिक सिफारिशों को प्रभावी रूप से लागू नहीं किया जाता, तो वे सामाजिक असंतोष और संघर्ष को जन्म दे सकती हैं।

इस शोध-पत्र का मुख्य उद्देश्य फ्लड कमिशन की सिफारिशों और तेभागा आंदोलन के बीच संबंध का विश्लेषण करना है। विशेष रूप से यह अध्ययन इस बात पर केंद्रित है कि किस प्रकार औपनिवेशिक नीतियों, कृषि संरचना और प्राकृतिक आपदाओं के सम्मिलित प्रभाव ने किसानों को संगठित प्रतिरोध के लिए प्रेरित किया।

अतः यह अध्ययन बंगाल की कृषि व्यवस्था, फ्लड कमिशन की नीतिगत भूमिका और तेभागा आंदोलन के उदय के मध्य अंतर्संबंध को समझने का प्रयास करता है, जिससे भारतीय किसान आंदोलनों के इतिहास में इस महत्वपूर्ण अध्याय की व्यापक व्याख्या की जा सके।

फ्लड कमिशन का ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

फ्लड कमिशन का गठन : वर्ष और उद्देश्य

बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक दशकों में बंगाल प्रांत बार-बार आने वाली बाढ़ की गंभीर समस्या से जूझ रहा था। विशेष रूप से गंगा-ब्रह्मपुत्र नदी प्रणाली की जटिल संरचना, भारी मानसूनी वर्षा तथा अपर्याप्त जल निकासी प्रणाली के कारण कृषि क्षेत्र निरंतर प्रभावित होता रहा। 1930 और 1940 के दशक में आई विनाशकारी बाढ़ों ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को व्यापक क्षति पहुँचाई, जिससे खाद्यान्न उत्पादन और किसानों की आय में उल्लेखनीय गिरावट आई (Government of Bengal, 1940)।

इन्हीं परिस्थितियों के अध्ययन और समाधान के उद्देश्य से ब्रिटिश भारतीय सरकार ने 1940 में फ्लड कमिशन का गठन किया। इस आयोग का प्रमुख उद्देश्य बंगाल और उसके आसपास के क्षेत्रों में बाढ़ की समस्या का वैज्ञानिक अध्ययन करना तथा दीर्घकालिक समाधान प्रस्तुत करना था।

फ्लड कमिशन ने अपने कार्य के दौरान न केवल बाढ़ की भौगोलिक और जलविज्ञान संबंधी समस्याओं का अध्ययन

किया, बल्कि इस समस्या के सामाजिक और आर्थिक प्रभावों का भी विश्लेषण किया। आयोग ने यह स्पष्ट किया कि बाढ़ केवल एक प्राकृतिक समस्या नहीं थी, बल्कि यह प्रशासनिक और संरचनात्मक कमियों का भी परिणाम थी।

बंगाल में बार-बार आने वाली बाढ़ के कारण : बंगाल क्षेत्र में बाढ़ की समस्या कई प्राकृतिक और मानवीय कारणों से उत्पन्न हुई थी। इन कारणों को निम्नलिखित रूप में समझा जा सकता है

(क) भौगोलिक संरचना : बंगाल का अधिकांश क्षेत्र निम्नभूमि में स्थित है। (Mukherjee, 1974). गंगा, ब्रह्मपुत्र और उनकी सहायक नदियों का विशाल जाल इस क्षेत्र को अत्यधिक जल प्रवाह के प्रति संवेदनशील बनाता था। मानसून के दौरान नदियों में जलस्तर तेजी से बढ़ जाता था, जिससे बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हो जाती थी (Mukherjee, 1974)।

(ख) अत्यधिक वर्षा : बंगाल क्षेत्र में दक्षिण-पश्चिम मानसून के दौरान अत्यधिक वर्षा होती थी। जब लगातार कई दिनों तक भारी वर्षा होती, तो नदियों और जलाशयों की क्षमता समाप्त हो जाती और जल आसपास के कृषि क्षेत्रों में फैल जाता था।

(ग) जल निकासी की अपर्याप्त व्यवस्था : औपनिवेशिक काल में जल निकासी और सिंचाई की आधुनिक व्यवस्थाओं का अभाव था। नहरों और जलमार्गों की नियमित सफाई नहीं होने के कारण जल प्रवाह बाधित हो जाता था। परिणामस्वरूप, वर्षा का पानी लंबे समय तक खेतों में जमा रहता था और फसलों को भारी नुकसान पहुँचता था (Blyn, 1966)।

(घ) प्रशासनिक उदासीनता : फ्लड कमिशन ने यह भी उल्लेख किया कि औपनिवेशिक प्रशासन ने दीर्घकालिक बाढ़ नियंत्रण उपायों पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया। अस्थायी उपायों पर निर्भर रहने के कारण समस्या का स्थायी समाधान संभव नहीं हो पाया।

इन सभी कारणों के संयुक्त प्रभाव से बंगाल की कृषि व्यवस्था अस्थिर हो गई और किसानों की आर्थिक स्थिति लगातार बिगड़ती चली गई।

फ्लड कमिशन की प्रमुख सिफारिशें

फ्लड कमिशन ने अपने अध्ययन के आधार पर कई महत्वपूर्ण सिफारिशें प्रस्तुत कीं, जिनका उद्देश्य बाढ़ नियंत्रण और कृषि सुधार को सुनिश्चित करना था।

(1) तटबंधों का निर्माण : आयोग ने सुझाव दिया कि प्रमुख नदियों के किनारे मजबूत तटबंधों का निर्माण किया जाए, जिससे बाढ़ के पानी को नियंत्रित किया जा सके। यह उपाय कृषि भूमि को सुरक्षित रखने के लिए अत्यंत आवश्यक माना गया।

(2) जल निकासी प्रणाली का विकास : फ्लड कमिशन ने यह सिफारिश की कि जल निकासी के लिए आधुनिक नहरों और जलमार्गों का निर्माण किया जाए। इससे अतिरिक्त जल को शीघ्रता से बाहर निकाला जा सके और फसलों को नुकसान से बचाया जा सके।

(3) सिंचाई सुविधाओं का विस्तार : आयोग ने सिंचाई व्यवस्था के विस्तार पर विशेष बल दिया। सिंचाई की बेहतर व्यवस्था से कृषि उत्पादन में स्थिरता लाई जा सकती थी और किसानों की आय में वृद्धि संभव हो सकती थी।

(4) कृषि सुधार और भूमि प्रबंधन : फ्लड कमिशन ने यह भी सुझाव दिया कि कृषि तकनीकों में सुधार किया जाए तथा भूमि उपयोग की वैज्ञानिक पद्धतियों को अपनाया जाए। इसके साथ ही, किसानों को आधुनिक उपकरण और उन्नत बीज उपलब्ध कराने की आवश्यकता पर बल दिया गया।

(5) ग्रामीण अर्थव्यवस्था की सुरक्षा : आयोग ने यह स्वीकार किया कि कृषि संकट केवल प्राकृतिक कारणों से नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक संरचनाओं के कारण भी उत्पन्न हुआ था। इसलिए ग्रामीण अर्थव्यवस्था की सुरक्षा के लिए व्यापक नीतिगत सुधार आवश्यक थे।

इन सिफारिशों ने कृषि संकट की समस्या को औपचारिक रूप से स्वीकार किया, किंतु इनके कार्यान्वयन में कई बाधाएँ

उत्पन्न हुई। यही असफलता आगे चलकर किसानों के असंतोष का एक महत्वपूर्ण कारण बनी।

बंगाल की कृषि संरचना और बटाई व्यवस्था

जमींदारी व्यवस्था : बंगाल की कृषि संरचना का आधार जमींदारी प्रथा थी, जिसे ब्रिटिश शासन ने 1793 में स्थायी बंदोबस्त के माध्यम से लागू की गई। (Chaudhuri, 1983, Bose, 1993) इस व्यवस्था के अंतर्गत जमींदारों को भूमि का स्वामित्व प्रदान किया गया और किसानों को उनसे भूमि किराए पर लेकर खेती करनी पड़ती थी (Chaudhuri, 1983)।

जमींदारी प्रणाली की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित थीं

1. भूमि का स्वामित्व जमींदारों के हाथों में केंद्रित था।
2. किसान भूमि के वास्तविक उत्पादक होने के बावजूद स्वामित्व से वंचित थे।
3. जमींदारों द्वारा अत्यधिक लगान वसूला जाता था।
4. किसानों को ऋण और करों के बोझ का सामना करना पड़ता था।

इस व्यवस्था ने भूमि के असमान वितरण को बढ़ावा दिया और किसानों की आर्थिक निर्भरता को और गहरा किया।

जोतदारों की भूमिका : जमींदारों और किसानों के बीच जोतदार एक महत्वपूर्ण मध्यस्थ वर्ग के रूप में कार्य करते थे। जोतदार आमतौर पर बड़े किसानों या स्थानीय प्रभावशाली व्यक्तियों का समूह था, जो जमींदारों से भूमि लेकर छोटे किसानों को खेती के लिए उपलब्ध कराते थे।

जोतदारों की भूमिका के प्रमुख पहलू निम्नलिखित थे

1. वे भूमि के प्रबंधन और किराया संग्रह का कार्य करते थे।
2. कई बार वे किसानों से अत्यधिक किराया वसूल करते थे।
3. जोतदारों ने ग्रामीण समाज में आर्थिक और सामाजिक प्रभुत्व स्थापित कर लिया था।

जोतदारों की इस भूमिका ने किसानों और बटाईदारों के शोषण को और बढ़ा दिया।

बर्गादारों की स्थिति : बंगाल में बटाईदार किसानों को बर्गादार कहा जाता था। ये किसान भूमि के स्वामी नहीं होते थे, बल्कि जमींदार या जोतदार से भूमि लेकर खेती करते थे।

बर्गादारों की स्थिति अत्यंत दयनीय थी और उन्हें उत्पादन का आधे से अधिक हिस्सा देना पड़ता था (Bose, 1993; Patnaik, 1990), जिसे निम्नलिखित बिंदुओं में समझा जा सकता है

(1) उत्पादन में सीमित हिस्सेदारी : परंपरागत व्यवस्था के अनुसार बर्गादारों को अपनी उपज का लगभग आधा हिस्सा (½) जमींदार या जोतदार को देना पड़ता था। कई मामलों में यह हिस्सा आधे से भी अधिक होता था।

(2) उत्पादन लागत का भार : बीज, खाद, श्रम और अन्य कृषि लागतों का अधिकांश भार बर्गादारों पर ही होता था। इसके बावजूद उन्हें उचित लाभ नहीं मिल पाता था (Bose, 1993)।

(3) ऋण और निर्धनता : कई बर्गादार किसानों को कृषि कार्य के लिए जमींदारों या साहूकारों से ऋण लेना पड़ता था। उच्च ब्याज दरों के कारण वे ऋण के जाल में फँस जाते थे।

(4) सामाजिक और आर्थिक असुरक्षा : बर्गादारों के पास भूमि का स्वामित्व नहीं होने के कारण वे किसी भी समय भूमि से बेदखल किए जा सकते थे। इस असुरक्षा ने उनके जीवन को अत्यंत अस्थिर बना दिया।

कृषि संकट और असंतोष का विकास : बंगाल की कृषि संरचना में मौजूद असमानताएँ और बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपदाओं ने किसानों की स्थिति को और अधिक गंभीर बना दिया। उत्पादन में गिरावट, ऋण का बढ़ता बोझ और सामाजिक असुरक्षा ने किसानों में असंतोष की भावना को जन्म दिया।

यह असंतोष धीरे-धीरे संगठित प्रतिरोध में परिवर्तित हुआ, जिसने आगे चलकर तेभागा आंदोलन के उदय के लिए आधार तैयार किया।

तेभागा आंदोलन का उदय (1946-47)

तेभागा आंदोलन की पृष्ठभूमि : 1940 के दशक के मध्य तक बंगाल की ग्रामीण अर्थव्यवस्था गंभीर संकट से गुजर रही थी। लगातार बाढ़, कृषि उत्पादन में गिरावट तथा जमींदारी व्यवस्था की शोषणकारी प्रकृति ने किसानों की आर्थिक स्थिति को अत्यंत कमजोर बना दिया था। विशेष रूप से 1943 का बंगाल अकाल ग्रामीण समाज के लिए एक निर्णायक मोड़ सिद्ध हुआ। इस अकाल में लाखों लोगों की मृत्यु हुई और खाद्यान्न की भारी कमी उत्पन्न हुई, जिससे किसानों की आजीविका पर गहरा प्रभाव पड़ा (Sen, 1981)।

अकाल के पश्चात् बर्गादार किसानों की स्थिति और भी दयनीय हो गई। उन्हें उत्पादन का बड़ा हिस्सा जमींदारों और जोतदारों को देना पड़ता था, जबकि उत्पादन लागत का अधिकांश भार उन्हीं पर होता था। इस असमान व्यवस्था ने किसानों में असंतोष की भावना को तीव्र कर दिया।

इसके अतिरिक्त, 1940 के दशक में विभिन्न किसान संगठनों द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में जागरूकता अभियान चलाए गए। इन अभियानों ने किसानों को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक किया और उन्हें संगठित होने के लिए प्रेरित किया।

तेभागा आंदोलन के प्रमुख कारण

तेभागा आंदोलन के उदय के पीछे कई सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक कारण कार्यरत थे।

(1) आर्थिक शोषण : बर्गादारों को अपनी उपज का आधे से अधिक हिस्सा जमींदारों को देना पड़ता था। यह व्यवस्था उनके लिए अत्यंत असमान और शोषणकारी थी। उत्पादन लागत के बावजूद उन्हें उचित लाभ नहीं मिल पाता था (Bose, 1993)।

(2) बाढ़ और प्राकृतिक आपदाएँ : लगातार आने वाली बाढ़ ने कृषि उत्पादन को गंभीर रूप से प्रभावित किया। फसलों के नष्ट होने से किसानों की आय में गिरावट आई और ऋण का बोझ बढ़ गया।

(3) बंगाल अकाल (1943) का प्रभाव : 1943 का अकाल किसानों के लिए एक निर्णायक घटना थी। इस अकाल ने खाद्यान्न वितरण प्रणाली की कमजोरियों को उजागर किया और किसानों में प्रशासन के प्रति असंतोष बढ़ाया (Blyn, 1966)।

(4) राजनीतिक जागरूकता का विकास : किसान संगठनों और राजनीतिक दलों ने किसानों को संगठित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। ग्रामीण क्षेत्रों में बैठकों और सभाओं के माध्यम से किसानों को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक किया गया।

किसान सभा की भूमिका : तेभागा आंदोलन के संगठन और संचालन में किसान सभा की महत्वपूर्ण भूमिका रही। किसान सभा ने ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक संगठनात्मक ढांचा तैयार किया और किसानों को सामूहिक रूप से अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने के लिए प्रेरित किया।

किसान सभा द्वारा अपनाई गई प्रमुख रणनीतियाँ निम्नलिखित थीं

1. ग्रामीण क्षेत्रों में सभाओं और बैठकों का आयोजन
2. किसानों को कानूनी अधिकारों के बारे में जानकारी देना
3. सामूहिक प्रतिरोध की रणनीति विकसित करना
4. स्थानीय नेतृत्व का विकास करना

किसान सभा के नेतृत्व में किसानों ने अपने अधिकारों के लिए संगठित रूप से आवाज उठाई, जिससे आंदोलन को व्यापक समर्थन प्राप्त हुआ (Sen, 1982)।

तेभागा आंदोलन की प्रमुख मांगे : तेभागा आंदोलन की मुख्य मांग थी कि बर्गादारों को उनकी उपज का दो-तिहाई (2/3) हिस्सा प्राप्त हो, जबकि जमींदार को केवल एक-तिहाई (¼) हिस्सा दिया जाए।

इस मांग के पीछे निम्नलिखित तर्क थे

1. उत्पादन का अधिकांश कार्य बर्गादार करते थे।

2. बीज, श्रम और कृषि लागत का भार किसान उठाते थे।

3. जमींदारों की भूमिका सीमित होने के बावजूद उन्हें अधिक हिस्सा प्राप्त होता था।

इसके अतिरिक्त, किसानों की अन्य मांगों में

- उपज का भंडारण किसान के घर में किया जाए
- मनमानी लगान वसूली पर रोक लगाई जाए
- बर्गादारों को भूमि से बेदखल करने पर प्रतिबंध लगाया जाए

ये मांगें किसानों की आर्थिक सुरक्षा और सामाजिक सम्मान से जुड़ी हुई थीं।

सिफारिश से संघर्ष तक : एक विश्लेषणात्मक संबंध

फ्लड कमिशन और कृषि विमर्श का विकास : फ्लड कमिशन की सिफारिशों ने बंगाल में कृषि संकट और बाढ़ प्रबंधन की समस्याओं को औपचारिक रूप से स्वीकार किया। इस आयोग ने यह स्पष्ट किया कि कृषि उत्पादन की स्थिरता के लिए बाढ़ नियंत्रण और भूमि प्रबंधन अत्यंत आवश्यक हैं।

हालाँकि, इन सिफारिशों का प्रभावी क्रियान्वयन नहीं हो सका। प्रशासनिक उदासीनता और संसाधनों की कमी के कारण कई योजनाएँ केवल कागजों तक सीमित रह गईं।

इस स्थिति ने किसानों में यह धारणा विकसित की कि सरकार उनकी समस्याओं के समाधान के प्रति गंभीर नहीं है। परिणामस्वरूप, किसानों के बीच असंतोष की भावना बढ़ने लगी।

नीतिगत असफलता और किसान असंतोष : फ्लड कमिशन की सिफारिशों को लागू करने में विफलता ने किसानों की आर्थिक स्थिति को और अधिक संकटपूर्ण बना दिया।

नीतिगत असफलता के प्रमुख पहलू निम्नलिखित थे

1. बाढ़ नियंत्रण उपायों का अपर्याप्त कार्यान्वयन

2. सिंचाई सुविधाओं का सीमित विस्तार

3. भूमि प्रबंधन सुधारों की कमी

4. किसानों की आर्थिक सुरक्षा के लिए प्रभावी योजनाओं का अभाव

इन असफलताओं ने किसानों के असंतोष को संगठित प्रतिरोध में परिवर्तित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई (Mukherjee, 1974)।

संगठित प्रतिरोध में परिवर्तन : किसानों के असंतोष ने धीरे-धीरे संगठित प्रतिरोध का रूप धारण कर लिया। किसान सभा के नेतृत्व में किसानों ने सामूहिक रूप से अपनी मांगों को प्रस्तुत किया और आंदोलन प्रारंभ किया।

इस प्रक्रिया को निम्नलिखित चरणों में समझा जा सकता है

(1) समस्याओं की पहचान : फ्लड कमिशन ने कृषि संकट की समस्याओं को उजागर किया, जिससे किसानों की समस्याएँ सार्वजनिक चर्चा का विषय बनीं।

(2) जागरूकता का प्रसार : किसान संगठनों ने आयोग की रिपोर्टों और सिफारिशों को आधार बनाकर किसानों को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक किया।

(3) संगठन का निर्माण : ग्रामीण क्षेत्रों में किसान समितियों का गठन किया गया, जिससे आंदोलन को संरचनात्मक आधार मिला।

(4) संघर्ष की शुरुआत : अंततः किसानों ने अपनी मांगों को लागू कराने के लिए प्रत्यक्ष संघर्ष का मार्ग अपनाया,

जिससे तेभागा आंदोलन प्रारंभ हुआ।

तेभागा आंदोलन : एक संरचनात्मक प्रतिक्रियारू तेभागा आंदोलन को केवल एक आर्थिक आंदोलन के रूप में नहीं देखा जा सकता। यह औपनिवेशिक प्रशासन की नीतिगत असफलताओं और कृषि संरचना की असमानताओं के विरुद्ध एक व्यापक संरचनात्मक प्रतिक्रिया थी।

यह आंदोलन दर्शाता है कि जब नीतिगत सिफारिशों को प्रभावी रूप से लागू नहीं किया जाता, तो वे सामाजिक असंतोष को जन्म देती हैं, जो अंततः संगठित संघर्ष का रूप ले सकता है।

इस प्रकार, फ्लड कमिशन की सिफारिशों से तेभागा आंदोलन तक का संक्रमण भारतीय इतिहास में नीति और जनसंघर्ष के अंतर्संबंध का एक महत्वपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत करता है।

तेभागा आंदोलन में महिलाओं की भूमिका

महिलाओं की भागीदारी का ऐतिहासिक संदर्भ : तेभागा आंदोलन भारतीय किसान आंदोलनों के इतिहास में एक ऐसा आंदोलन था जिसमें महिलाओं की सक्रिय और संगठित भागीदारी देखने को मिली। परंपरागत रूप से ग्रामीण समाज में महिलाओं की भूमिका घरेलू कार्यों तक सीमित मानी जाती थी, किंतु तेभागा आंदोलन ने इस धारणा को चुनौती दी। इस आंदोलन में महिलाओं ने न केवल सहायक भूमिका निभाई, बल्कि कई स्थानों पर नेतृत्व भी संभाला (Sen, 1982)।

1940 के दशक में बंगाल के ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाएँ कृषि कार्यों में पहले से ही महत्वपूर्ण योगदान दे रही थीं। वे बीज बोने, निराई-गुड़ाई करने, फसल काटने और भंडारण जैसे कार्यों में सक्रिय रहती थीं। इस कारण, जब बर्गादारों के अधिकारों का प्रश्न उठा, तो महिलाओं ने इसे अपने जीवन और परिवार की आजीविका से जुड़ा हुआ मुद्दा माना।

तेभागा आंदोलन के दौरान महिलाओं की भागीदारी ने यह स्पष्ट किया कि किसान आंदोलन केवल पुरुषों तक सीमित नहीं था, बल्कि यह एक व्यापक सामाजिक आंदोलन के रूप में विकसित हो रहा था।

महिलाओं की सक्रिय भागीदारी और नेतृत्व : तेभागा आंदोलन में महिलाओं ने कई महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाईं। उन्होंने न केवल आंदोलन में भाग लिया, बल्कि कई स्थानों पर अग्रिम पंक्ति में रहकर नेतृत्व किया।

महिलाओं की प्रमुख भूमिकाएँ निम्नलिखित थीं–

(1) उपज की सुरक्षा : महिलाएँ किसानों द्वारा उत्पादित अनाज को जमींदारों के गोदामों में जाने से रोकने के लिए सक्रिय रूप से कार्य करती थीं। कई स्थानों पर उन्होंने अनाज को अपने घरों में सुरक्षित रखा और जमींदारों के प्रतिनिधियों का विरोध किया।

(2) प्रतिरोध में भागीदारी : महिलाओं ने पुलिस और जमींदारों के प्रतिनिधियों के विरुद्ध प्रतिरोध में सक्रिय भाग लिया। कई स्थानों पर उन्होंने जुलूसों और धरनों का नेतृत्व किया।

(3) संगठनात्मक भूमिका : महिलाओं ने ग्रामीण स्तर पर किसान समितियों के गठन में सहयोग किया। उन्होंने बैठकों का आयोजन किया और अन्य महिलाओं को आंदोलन से जोड़ने का कार्य किया।

इतिहासकारों के अनुसार, तेभागा आंदोलन में महिलाओं की भागीदारी ने ग्रामीण समाज में सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को तेज किया। इसने महिलाओं को सार्वजनिक जीवन में भागीदारी का अवसर प्रदान किया और उनके आत्मविश्वास में वृद्धि की (Bose, 1993)।

सामाजिक परिवर्तन और महिलाओं की स्थितिरू तेभागा आंदोलन के परिणामस्वरूप ग्रामीण समाज में महिलाओं की स्थिति में महत्वपूर्ण परिवर्तन देखने को मिला।

इन परिवर्तनों को निम्नलिखित रूप में समझा जा सकता है

1. महिलाओं की सामाजिक पहचान मजबूत हुई।
2. सार्वजनिक जीवन में उनकी भागीदारी बढ़ी।

3. परिवार और समाज में उनके निर्णय-निर्माण की भूमिका में वृद्धि हुई।

इस प्रकार, तेभागा आंदोलन केवल आर्थिक संघर्ष तक सीमित नहीं रहा, बल्कि यह सामाजिक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण माध्यम भी बना।

तेभागा आंदोलन के प्रभाव और परिणाम

भूमि सुधारों पर प्रभावरू तेभागा आंदोलन का सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव भूमि सुधारों की दिशा में देखा गया। इस आंदोलन ने यह स्पष्ट कर दिया कि कृषि व्यवस्था में सुधार के बिना ग्रामीण अर्थव्यवस्था का विकास संभव नहीं है।

स्वतंत्रता के पश्चात् पश्चिम बंगाल और अन्य राज्यों में भूमि सुधार से संबंधित कई कानून बनाए गए। इन कानूनों का उद्देश्य बर्गादारों के अधिकारों की रक्षा करना और भूमि के समान वितरण को सुनिश्चित करना था (Chaudhuri, 1983)।

विशेष रूप से पश्चिम बंगाल में बर्गादारों के अधिकारों को कानूनी मान्यता दी गई, जिससे उनकी स्थिति में सुधार हुआ।

स्वतंत्रता के बाद के कृषि कानूनों पर प्रभावरू तेभागा आंदोलन ने स्वतंत्रता के बाद भारत में कृषि संबंधी कानूनों के निर्माण को प्रभावित किया।

इन प्रभावों को निम्नलिखित रूप में समझा जा सकता है

1. बर्गादारों के अधिकारों की सुरक्षा : कई राज्यों में बर्गादारों को भूमि से बेदखल करने पर प्रतिबंध लगाया गया।

2. जमींदारी उन्मूलन : स्वतंत्रता के बाद जमींदारी प्रथा को समाप्त करने के लिए कानून बनाए गए।

3. भूमि सुधार कार्यक्रम : भूमि की अधिकतम सीमा निर्धारित करने और अतिरिक्त भूमि के पुनर्वितरण की प्रक्रिया शुरू की गई।

इन सुधारों ने ग्रामीण समाज में आर्थिक असमानताओं को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

दीर्घकालिक सामाजिक और आर्थिक प्रभाव

तेभागा आंदोलन के प्रभाव केवल तत्कालीन समय तक सीमित नहीं रहे, बल्कि इसके दीर्घकालिक प्रभाव भी देखे गए।

(1) किसान आंदोलनों को प्रेरणा : तेभागा आंदोलन ने भारत के अन्य क्षेत्रों में किसान आंदोलनों को प्रेरित किया। इसने यह दिखाया कि संगठित प्रयासों के माध्यम से किसान अपने अधिकार प्राप्त कर सकते हैं।

(2) कृषि उत्पादन में सुधार : भूमि सुधारों और बेहतर कृषि नीतियों के परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन में धीरे-धीरे सुधार हुआ।

(3) सामाजिक समानता की दिशा में प्रगति : तेभागा आंदोलन ने ग्रामीण समाज में सामाजिक समानता को बढ़ावा दिया। इसने कमजोर वर्गों को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक किया और सामाजिक न्याय की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाया।

आलोचनात्मक विश्लेषण

तेभागा आंदोलन की शक्तियाँ : तेभागा आंदोलन भारतीय किसान आंदोलनों के इतिहास में एक महत्वपूर्ण उदाहरण के रूप में देखा जाता है। इसकी प्रमुख शक्ति इसका व्यापक सामाजिक आधार था। यह आंदोलन केवल कुछ क्षेत्रों तक सीमित नहीं रहा, बल्कि बंगाल के अनेक जिलों में फैला और हजारों किसानों को एक साझा मंच पर लाया।

इस आंदोलन की एक प्रमुख विशेषता इसका संगठित स्वरूप था। किसान सभा और अन्य संगठनों ने ग्रामीण स्तर पर समितियों का गठन किया, जिससे आंदोलन को संरचनात्मक मजबूती मिली। इस संगठनात्मक शक्ति ने किसानों को सामूहिक रूप से अपने अधिकारों की मांग करने में सक्षम बनाया (Sen, 1982)।

दूसरी महत्वपूर्ण शक्ति जनभागीदारी थी। इस आंदोलन में महिलाओं, मजदूरों और छोटे किसानों की सक्रिय भागीदारी

ने इसे व्यापक जनआंदोलन का स्वरूप प्रदान किया। इससे आंदोलन को सामाजिक वैधता और समर्थन प्राप्त हुआ।

इसके अतिरिक्त, तेभागा आंदोलन ने किसानों के अधिकारों के प्रति जागरूकता को बढ़ावा दिया। इसने ग्रामीण समाज में यह भावना उत्पन्न की कि संगठित प्रयासों के माध्यम से सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन संभव है।

तेभागा आंदोलन की सीमाएँ : यद्यपि तेभागा आंदोलन कई दृष्टियों से सफल रहा, फिर भी इसकी कुछ सीमाएँ भी थीं।

पहली प्रमुख सीमा इसका भौगोलिक सीमितता थी। यह आंदोलन मुख्य रूप से बंगाल के कुछ जिलों तक ही सीमित रहा और पूरे भारत में व्यापक रूप से नहीं फैल सका।

दूसरी सीमा संसाधनों की कमी थी। किसानों के पास पर्याप्त आर्थिक संसाधन नहीं थे, जिससे वे लंबे समय तक संघर्ष जारी रखने में कठिनाई अनुभव करते थे।

तीसरी सीमा राजनीतिक हस्तक्षेप और दमन थी। औपनिवेशिक प्रशासन ने कई स्थानों पर आंदोलन को दबाने के लिए पुलिस बल का प्रयोग किया, जिससे आंदोलन की गति प्रभावित हुई (Mukherjee, 1974)।

इसके अतिरिक्त, आंदोलन के दौरान सभी वर्गों का समर्थन समान रूप से नहीं मिल सका, जिससे इसकी व्यापकता कुछ हद तक सीमित रही।

औपनिवेशिक नीतियों का मूल्यांकन : औपनिवेशिक प्रशासन की नीतियों ने बंगाल की कृषि व्यवस्था को गहराई से प्रभावित किया। फ्लड कमिशन की सिफारिशों ने बाढ़ नियंत्रण और कृषि सुधार की आवश्यकता को स्वीकार किया, किंतु इन सिफारिशों का प्रभावी क्रियान्वयन नहीं हो सका।

औपनिवेशिक प्रशासन का ध्यान मुख्यतः राजस्व संग्रह पर केंद्रित था, जबकि किसानों की समस्याओं को अपेक्षित प्राथमिकता नहीं दी गई। परिणामस्वरूप, कृषि संकट और गहरा होता गया।

नीतिगत स्तर पर यह स्पष्ट दिखाई देता है कि प्रशासन ने दीर्घकालिक समाधान की बजाय अल्पकालिक उपायों पर अधिक ध्यान दिया। इससे किसानों की समस्याओं का स्थायी समाधान नहीं हो पाया।

इस प्रकार, औपनिवेशिक नीतियों की सीमाएँ और प्रशासनिक उदासीनता तेभागा आंदोलन के उदय के प्रमुख कारणों में से एक रही।

निष्कर्ष

तेभागा आंदोलन और फ्लड कमिशन के मध्य संबंध भारतीय इतिहास में नीति और जनसंघर्ष के अंतर्संबंध का एक महत्वपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत करता है। फ्लड कमिशन की स्थापना का उद्देश्य बाढ़ नियंत्रण और कृषि सुधार की दिशा में समाधान प्रस्तुत करना था, किंतु इन सिफारिशों का प्रभावी क्रियान्वयन नहीं हो सका।

बंगाल की जमींदारी व्यवस्था, बर्गादारों की दयनीय स्थिति और प्राकृतिक आपदाओं ने किसानों के असंतोष को बढ़ावा दिया। इस असंतोष ने संगठित रूप धारण किया और तेभागा आंदोलन के रूप में सामने आया।

इस शोध से यह स्पष्ट होता है कि तेभागा आंदोलन केवल आर्थिक मांगों तक सीमित नहीं था, बल्कि यह सामाजिक न्याय और भूमि अधिकारों के लिए एक व्यापक संघर्ष था। इस आंदोलन ने स्वतंत्रता के बाद भूमि सुधार नीतियों और कृषि संबंधी कानूनों के निर्माण को प्रभावित किया।

ऐतिहासिक दृष्टि से, तेभागा आंदोलन भारतीय किसान आंदोलनों के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर सिद्ध हुआ। इसने यह सिद्ध किया कि यदि प्रशासनिक सिफारिशों को प्रभावी रूप से लागू नहीं किया जाता, तो वे सामाजिक असंतोष और संघर्ष को जन्म दे सकती हैं।

आधुनिक संदर्भ में भी यह अध्ययन महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह दर्शाता है कि प्राकृतिक आपदाओं और कृषि संकट से निपटने के लिए प्रभावी नीति निर्माण और उसका सही क्रियान्वयन आवश्यक है।

संदर्भ सूची

Blyn, G. (1966). Agricultural trends in India, 1891-1947: Output, availability, and productivity. University of Pennsylvania Press.

Bose, S. (1993). Peasant labour and colonial capital: Rural Bengal since 1770. Cambridge University Press.

Chaudhuri, B. B. (1983). Agrarian relations in Bengal: 1793-1947. Indian Council of Historical Research.

Government of Bengal. (1940). Report of the Bengal Flood Commission. Government Press.

Mukherjee, R. (1974). The dynamics of rural society in India. Popular Prakashan.

Sen, S. (1982). Peasant movements in India. Oxford University Press.

Sen, A. (1981). Poverty and famines: An essay on entitlement and deprivation. Oxford University Press.

Datta, K. K. (1972). Economic history of Bengal. Progressive Publishers.

Guha, R. (1983). Elementary aspects of peasant insurgency in colonial India. Oxford University Press.

Chatterjee, P. (1984). Bengal 1920-1947: The land question. Oxford University Press.

Ghosh, S. (1985). The Tebhaga movement in Bengal. National Book Agency.

Ray, R. (1998). Peasant movements in India. Oxford University Press.

Das, A. (1992). Agrarian unrest in Bengal. People's Publishing House.

Banerjee, S. (2001). Women in peasant movements in India. Cambridge University Press.

Patnaik, U. (1990). Agrarian relations and accumulation. Oxford University Press.

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

राजस्थान के दक्षिणांचल कवियों का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

डॉ. दीपक शर्मा
शोध निर्देशक :
(सहायक प्रोफेसर)
शिक्षा संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय

प्रियंका शर्मा
शोधकर्त्री :
शिक्षा संकाय
टांटिया विश्वविद्यालय

प्रस्तुत शोधकार्य का उद्देश्य है कि राजस्थान के दक्षिणांचल कवियों का व्यक्तित्व एवं कृतित्व का अध्ययन करना है।

प्रस्तावना :-

राष्ट्रीय कविता की विशेषताओं का प्रभाव राजस्थान की हिन्दी कविता पर भी प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है। राजस्थान के कवि (हिन्दी) भाग पहला (सम्पादक - नन्द चतुर्वेदी) व राजस्थान के कवि (हिन्दी) दूसरा भाग (सम्पादक - योगेन्द्र किसलय) में राजस्थान के प्रमुख कवियों की कविताओं का संकलन है, जिसमें कविता की प्रवृत्तिगत विशेषताओं को भी व्यक्त करने का प्रयास है। राजस्थान के कवि (हिन्दी), दूसरा भाग में संपादित वक्तव्य में योगेन्द्र किसलय लिखते हैं, ''राजस्थान की हिन्दी की नई कविता किसी भी प्रान्त से पीछे नहीं है। सिवाय एक बात के कि हमारी कविता पर्याप्त चर्चित नहीं हुई है। कुछ हमारे समालोचकों की मेहरबानियाँ जिनकी नजर जब भी पड़ी बाहर पड़ी। प्रांत से प्रकाशित होती रही साहित्यिक पत्रिकाओं ने भी अपने कवियों का ध्यान कम रखा। कुछ पत्रिकाओं की नजरें तो दिल्ली, इलाहबाद और बनारस से हटी ही नहीं। फिर भी हमारे कवियों की बाहर चर्चा है। राजस्थान के कवि आत्मनिर्भर हैं। जो वह है अपनी रचनाशक्ति के कारण है। उस पर कोई प्रतिष्ठानी अथवा इस या उस खेमे की कृपा नहीं है और यह शुभ भी है।''

राजस्थान के भौगोलिक दृष्टि से अनेक प्रभाग हैं। इनमें एक प्रभाग दक्षिण का अंचल भी है। वस्तुतः यह अंचल पिछड़ा ही माना जाता रहा है, लेकिन यहाँ जन्मे एवं यहाँ निवासित रचनाकारों ने अपने अनुभवों को कलमबद्ध करने का प्रयास किया है। पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से वे प्रकाश में आए और उनको नोटिस किया गया। इस प्रकार वे रचनाकर्म में सतत् रूप से क्रियाशील हो गए और अपनी विशिष्ट पहचान भी स्थापित कर दी है कुछ उतने स्थापित नहीं भी हैं। प्रस्तुत शोध विषय के अनुरूप स्थापित और जो स्थापित नहीं हुए हैं उनकी कविताओं का मूल्यांकन किया जाना ध्येय है। दक्षिणांचल कवियों में नन्द चतुर्वेदी, भगवतीलाल व्यास, कमर मेवाड़ी, जयप्रकाश पण्ड्या ज्योतिपुंज जैसे ख्यातनाम कवि सम्मिलित हैं, वहीं निर्मला शर्मा, प्रदीप भट्ट, भारती भावसार, वीरबाला भावसार जैसे कवियों ने कविता लिखकर अपनी रचनाशीलता का परिचय दिया है।

शोध अध्ययन का औचित्य :-

यह सर्वविदित है कि साहित्य का विकास मूलतः पद्यात्मक रूप में ही हुआ है। आदिकाल से आज तक पद्यात्मक रूप में अनेक विकास हुए हैं। प्रबंधकाव्य, खण्डकाव्य, मुक्तक काव्य इसके मुख्य काव्य रूप रहे हैं। कविता में मानवीय भावों की सूक्ष्म एवं गहरी अभिव्यक्ति होती है। अतः मानवीय भावों की अभिव्यक्ति हेतु रचनाकारों ने काव्य को माध्यम के रूप में

चुना और उसकी सफल अभिव्यक्ति की है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल कविता क्या है? निबंध में कविता के महत्व को इस प्रकार रेखांकित करते हैं - ''जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है, इसी प्रकार हृदय की यह मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है। हृदय की इस मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती आई है। इस साधना को हम भावयोग कहते हैं ओर कर्मयोग और ज्ञान योग के समकक्ष मानते हैं।

शताब्दियों से राजस्थान का जनमानस शौर्य, पराक्रम, त्याग एवं बलिदान की बलवती भावनाओं का केन्द्र रहा है। संघर्ष के क्षणों में जीवट का परिचय देने के साथ इस प्रदेश में उच्चकोटि के स्थापत्य, शिल्प, संगीत एवं साहित्य के क्षेत्र में अद्भुत कलाकृतियों का सृजन किया है। पौरूष की हुंकार और करूणा की मर्मस्पर्शनी संवेदनशील झंकार की अनुगूंज एक साथ, एक ही परिस्थिति में यहाँ ध्वनित-प्रतिध्वनित हुई है। शौर्य के प्रतीक योद्धाओं को जन्म देने के अतिरिक्त इस प्रदेश को ख्यातिलब्ध कवि मनीषियों को जन्म देने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश से हिन्दी तक की साहित्य सर्जना की एक अखण्ड परम्परा यहां पाई जाती है, जिसे भारतीय साहित्य की एक महत्वपूर्ण निधि माना जाता है। वीर रस के सिद्ध कवि महाकवि चंद, भक्तशिरोमणी मीरांबाई, स्वाभिमानी कवि पृथ्वीराज, रसिक श्रेष्ठ बिहारीलाल, नीतिनिपुण कविवर वृन्द, आचार्यत्व के अधिकारी मतिराम तथा शौर्य एवं त्याग के अमर गायक सूर्यमल्ल मिश्रण की यह साधना भूमि रही है। कविवर माद्य और ज्योतिषाचार्य ब्रह्मगुप्त की यह आवासस्थली है।

समस्या कथन :-

''राजस्थान के दक्षिणांचल कवियों का व्यक्तित्व एवं कृतित्व''

शोध अध्ययन के उद्देश्य :-

किसी भी कार्य का प्रारम्भ किसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर किया जाता है। प्रस्तुत शोधकार्य का प्रारम्भ भी शोधकर्त्री द्वारा उद्देश्य का निर्धारण करने के पश्चात् ही किया गया है। प्रस्तुत शोधकार्य का मुख्य उद्देश्य हिन्दी साहित्य के विकास में राजस्थान के प्रमुख कवियों का योगदान देखना है।

शोध का सीमांकन :-

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का अध्ययन क्षेत्र हिन्दी साहित्य में विभिन्न पहलुओं तक सीमित रखा जायेगा। इसके अन्तर्गत राजस्थान के मुख्य कवियों का हिन्दी साहित्य में योगदान को विस्तारपूर्वक देखने का प्रयास किया जायेगा। जिन्होंने हिन्दी साहित्य में कला, संगीत, चित्रकला आदि का सृजन किया है व हिन्दी साहित्य को सुदृढ़ बनाया। प्रस्तुत शोधकार्य में राजस्थान के कवियों ने हिन्दी साहित्य में जो रंग भरे हैं उन सबका भी इनमें उल्लेख किया जायेगा।

निष्कर्ष

राजस्थान के दक्षिणांचल कवियों का व्यक्तित्व अपने परिवेश के संस्कारों से निर्मित है जिसकी परिणति उनके कृतित्व में साकार हुई है। इन रचनाकारों ने समकालीन जीवन की विविध मूल्यों और स्थितियों में अपनी रचना में सार्थक अभिव्यक्ति की है। भाव एवं विषय की दृष्टि से ये कविताएँ अपना मूल्य रखती हैं एवं आज भी इन कविताओं की प्रासंगिकता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अनंत मिश्र : स्वातंष्योत्तकालीन हिन्दी कविता प्रथम संस्करण, प्रकाशन संस्थान, 1962
2. इन्द्रनाथ मदान : आधुनिक कविता का मूल्यांकन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1977
3. ए.एम. मुरलीधरन : काव्य कविकर्म और साठोत्तरी हिन्दी कविता, वाणी प्रकाशन, दिल्ली 2001
4. ए.एम. मुरलीधरन : काव्य कवि-कर्म सत्तारोतरी हिन्दी कविता, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, 2004
5. ओझा : राजपूताने का इतिहास, पहली जिल्द

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

'तीसरी कसम' कहानी : प्रेम का लोक वा लोक का प्रेम

मेनका कुमारी साह
हिन्दी विभाग, नागालैंड विश्वविद्यालय, कोहिमा
Mobile: 60014 11930

प्रस्तावना : रेणु ने बिहारी अंचल के ग्रामीण परिवेश को न केवल स्थान-विशेष के रूप में चुना है, बल्कि उसे भाव-संवेदनाओं का एक जीवन्त दस्तावेज़ के रूप में प्रस्तुत किया है। खेत, गाड़ी, दही चुरा, नौटंकी और लोक गीत कथाएँ यहाँ केवल विस्तार नहीं, बल्कि प्रेम संवेदना के ही अंग बनकर उभरते हैं, जिससे प्रेम के मानवीय अनुभव को लोक संस्कृति के माध्यम से अभिव्यक्त करने की रणनीति स्पष्ट होती है। इस प्रकार 'तीसरी कसम' को एक आंचलिक तथा लोक चित्रात्मक प्रेमकथा के रूप में देखना स्वाभाविक है। हीरामन और हीराबाई के बीच प्रेम को कहानी में वाचिक जीवनचर्या के रूप में नहीं, बल्कि छोटी छोटी क्रियाओं, विनम्रता और आचार संस्थाओं के माध्यम से दिखाया गया है। सामान ढोने के बदले दही चुरा लेना, चाय लाना, नौटंकी को दूर से देखना, कसम खाना – ये सब लोक आचरण के रूप में प्रेम की भाषा बन जाते हैं। जहाँ प्रेम 'लोक' के ढाँचे में अभिव्यक्त होता है, न कि उससे ऊपर या बाहर एक निर्मल व्यक्तिगत भावना के रूप में।

साथ ही, कहानी यह भी दर्शाती है कि 'लोक' की जीवन-शैली व जीवन-व्यवहार ही प्रेम को रूप रंग देती है, पर उसे ही दबाकर बिखरा भी देती है। गाँव के रूढ़िग्रस्त दृष्टिकोण, नौटंकी कलाकार के प्रति विमुख दृष्टि और आर्थिक विवशता के कारण दोनों का प्रेम अधूरा रह जाता है। यहाँ लोक संस्कृति के भीतर प्रेम जन्म लेता है, किंतु वही लोक मानस उसकी विफलता का भी नियामक बनता है। इसलिए 'तीसरी कसम' कहानी को 'प्रेम का लोक वा लोक का प्रेम' के द्वैतध्कालिक संबंध—भावना और संरचना, व्यक्ति और समाज – के रूप में पढ़ा जा सकता है। इस कहानी को लोक साहित्य-सैद्धांतिक, आंचलिक कथा और भावना निरूपण के चौखटे में रखकर विश्लेषण करने से यह दिखाया जा सकता है कि रेणु भाषा, आचरण, लोक गीत और लोक कथाओं के माध्यम से प्रेम को 'लोक' का अभिन्न तत्त्व बनाते हैं, जबकि सामाजिक दबाव और वर्ग विभाजन उसे 'लोक' के ही नियमों से विफल भी कर देते हैं।

बीज शब्द : प्रेम का लोक, लोक का प्रेम, लोक संस्कृति, आंचलिक, लोक चित्रात्मक, नौटंकी-कलाकार।

विश्लेषण- 'तीसरी कसम' फणीश्वरनाथ रेणु की बहुचर्चित कहानी हैं। इस कहानी की मूल संवेदना एकनिष्ठ प्रेम हैं। हिरामन और हीराबाई के मध्य बैलगाड़ी के कुछ घंटों के सफर में एक आत्मीय सम्बंध स्थापित हो जाता हैं। यह आत्मीय सम्बंध प्रेम का था, लेकिन कहानी में कही भी इस प्रेम की स्वीकारोक्ति नहीं मिलती हैं।

इस कहानी में हिरामन और हीराबाई का प्रेम कथित नहीं, अपितु व्यंजित हुआ है। कहानीकार ने स्थान-स्थान पर इसे बेहद स्पष्टता के साथ संकेतित किया है। हिरामन की गाड़ी में हीराबाई की सवारी के रूप में चढ़ने के बाद हिरामन को पीठ में अजीब सी गुदगुदी का अहसास होना तथा अलग प्रकार की अनुभूति का होना इसी बात का द्योतक है। हीराबाई की बच्चों की सी मीठी बोली सुनने और उसका परी जैसा सुंदर रूप देखने पर हिरामन के हृदय में आकर्षण उत्पन्न होने लगता हैं। हिरामन से बात करने के बाद हीराबाई को सहज, सरल तथा निश्चल हिरामन भा जाता है। सहज आकर्षण प्रेम की भावना

में परिवर्तित होती जाती है जिसमें परिहास अपनी अलग भूमिका निभाती है। 'तीसरी कसम' कहानी केवल एक प्रेम कथा नहीं हैं, बल्कि 'प्रेम का लोक' या 'लोक का प्रेम' के बीच के बारीक ताने-बाने की बुनावट को हमारे सामने लाकर प्रस्तुत करती है। 'तीसरी कसम' में प्रेम का वह रूप दिखाई देता है, जो शहरी चकाचौन्ध की दुनिया और उस प्रकार के प्रेम संबंधों से कोसों दूर है। यहाँ प्रेम का रूप कोई शारीरिक आकर्षण नहीं है, बल्कि एक दूसरे के प्रति 'सम्मान' पर आधारित है। हिरामन का प्रेम भी 'लोक' में तरंगित प्रेम की तरह ही भोला और पवित्र है। उसमें चालाकी कहीं से भी नहीं दिखाई देती। वह हीराबाई को केवल एक 'नर्तकी' नहीं, बल्कि एक परी और 'महुआ घटवारिन' जो 'लोककथा की एक पात्र' है– हीराबाई को उसी रूप में देखता है। हीराबाई नौटंकी की बाईजी है, जिसने अभी तक बस दुनिया के दोहरे चरित्र को देखा है, कड़वाहट देखा है, पुरुषों की वासना भरी नजरें देखी है। लेकिन जब वह हिरामन के भोले स्वभाव, निश्चल प्रेम को देखती है तब वह अपनी पेशेवर पहचान भूलकर एक साधारण स्त्री की तरह उसके स्नेह में भींग जाती है। जब हिरामन हीराबाई को 'महुआ घटवारिन' की कहानी सुनाता है, वे दोनों कहानी के पात्रों में खुद को खोजने लगते हैं रह-रह कर हीराबाई कुछ सोचने लगती है, उसे देख हिरामन भी गहरी सोच में डूबता चला जाता है। यह उनके प्रेम का 'काव्यात्मक लोक' है जहाँ शब्द कम और भावनाएँ अधिक प्रभावी हैं। महुआ घटवारिन की लोक-कथा कहानी में अर्थ के नए आयाम भरते हैं, जो कहानी की अर्थ व्याप्ति की दृष्टि से अत्यंत सार्थक है। कहीं-कहीं हिरामन का मन अपने और हीराबाई के विवाह और साथ रहने के सपने दिन में ही देखने का-सा प्रतीत होता है। मिट्टी की सोंधी खुश्बू, मिट्टी में निहित संघर्ष, संस्कृति और जीवन फणीश्वरनाथ रेणु जी को जहाँ एक 'आंचलिक कथाकार' के रूप में स्थापित करता है वही यह कहानी उन्हें प्रेम-लोक की महान कलाकृति के एक अदीठ कलाकार के रूप में स्थान दिलाता है। अकारण नहीं कि इस महान् कलाकृति पर आगे चलकर गीतकार शैलेन्द्र ने 'तीसरी कसम' जैसी क्लासिक फिल्म का निर्माण किया। कहानी में लोकगीत, नौटंकी और ग्रामीण मान्यताएँ - यह सब घुली-मिली मिलेंगी। हिरामन और हीराबाई का प्रेम मौन है। हिरामन अपनी मन की बात सीधे नहीं कहता, वह गीतों के ज़रिए अपनी भावनाएँ व्यक्त करने की कोशिश करता है। लोक धुनों में गाई गई गीत उनके प्रेम को स्वर देती हैं। कहानी में एक संदर्भ आता हैं–

"हिरामन ने फिर परदे के छेद से देखा, हीराबाई एक कागज़ के टुकड़े पर आँख गड़ा कर बैठी है। हिरामन का मन आज हल्के सूर में बंधा है। उसको तरह-तरह के गीतों की याद आती है। बीस-पच्चीस साल पहले, बिदेसिया, बलवाही छोकरा-नाचनेवाले एक-से-एक गजल खेमटा गाते थे। एकाएक छोकरा नाच के गीत की याद आई हिरामन को और वह गुनगुनाने लगा -

सजनवा बैरी हो गए हमारो! सजनवा......!
अरे चिठिया हो तो सब कोई बाँचे, चिठिया हो तो.....
हाय! करमवा, होय करमवा ...."[1]

तो कभी वह–

"सजन रे झूठ मति बोलो, खुदा के पास जाना हैं!
नहीं हाथी, नहीं घोड़ा, नहीं गाड़ी.....
वहाँ पैदल ही जाना हैं। सजन रे!"[2]

उसके मधुर गीत को सुनकर हीराबाई उसकी प्रशंसा करती है, हिरामन सरमा जाता है। हिरामन के मन में प्रेम का सुन्दर-सा जो 'लोक' बसा है, बेशक़ वह लोक-कथाओं से प्रेरित है। जैसा कि, मैंने पहले भी कहा कि हिरामन हीराबाई की तुलना 'महुआ घटवारिन' से करता है। महुआ वह लोक-नायिका है जो अपने जीवन से परेशान है, उसकी एक सौतेली माँ है, जो उस पर अत्याचार करती है और महुआ कुमारी को घर से निकाल देती है। हिरामन को लगता है कि हीराबाई भी वैसी ही दुखी और विवश है। यह सहानुभूति ही उसके प्रेम का आधार है। जब हीराबाई उससे अपनी बोल में कोई गीत सुनाने का अनुरोध करती है, उस स्थिति में भी वह 'महुआ घटवारिन' का गीत ही गाता है जो उसका सबसे प्रिय गीत है। वह कहता

भी है– "अच्छा, जब आपको इतना सौख है तो सुनिए महुआ घटवारिन का गीत। इसमें गीत भी है, कथा भी है।"

"तड़का-तड़के-धड़के करेज-आ-आ मोरा
कि हमहूँ जे बार-नान्ही रे-ए-ए............!"[3]

वास्तव में, पूरी कहानी में कहीं भी प्रेम का सीधा-साधा प्रस्ताव तक नहीं आता है। न हिरामन की ओर से, न ही हीराबाई की ओर से। कह सकते हैं कि यहाँ प्रेम व्यक्त करने कि नहीं, बल्कि महसूस करने वाली खुश्बू के रूप में अभिव्यक्त-सा हुआ हैं। अपनी इसी विशेषता के कारण 'तीसरी कसम' कहानी हिन्दी की एक कालजयी रचना बन जाती है। हिन्दी के प्रमुख कथालोचक संजीव कुमार ने अपने लेख 'दिली उल्फत थी दो जानिब' में 'तीसरी कसम' कहानी के संदर्भ में बिल्कुल सही लिखा है कि–

"रेणु की 'तीसरी कसम' अकेले हिरामन की कहानी है– एक कंपनी की बाई के रूप और स्वभाव पर रीझे हुए गाड़ीवान की दुर्निवार आसक्ति की कथा - जबकि 'तीसरी कसम' फिल्म एकतरफा आसक्ति की नहीं, दुतरफा प्रेम की कथा है, जिसमें हीराबाई का पक्ष भी उतना ही सामने आता है, जितना हिरामन का। एक तरफ से वह रेणु के कथित असंतोष का रचनात्मक निदान प्रतीत होती है।"[4]

कहने की आवश्यकता नहीं कि रेणु की कहानी गाड़ीवान हिरामन के दृष्टिकोण से बुनी गई है, जहाँ वह नौटंकी कंपनी की नायिका हीराबाई को चंपा-जैसी महक वाली परी मानता है। पीठ में गुदगुदी, गीत-कथा सुनाना और थैली लौटाना हीराबाई के भाव दिखाता है, किंतु फोकस हिरामन की दुर्निवार आसक्ति पर रहता है। बल्कि फिल्म में मूल कथा को विस्तार दी जाती है, गीत 'सजन रे झूठ मत बोलो' के माध्यम से हीराबाई का पक्ष उभारकर दुतरफा प्रेम स्थापित करती है। असल में शैलेंद्र और बासु भट्टाचार्य ने हीराबाई की भावनाओं को ही गहराई दी है, जो कहानी में व्यंजित है।

कहानी में एक और ऐसा ही मनभावन दृश्य आता है, जब सड़क तेगछिया गाँव के बीच से निकलती है। तब वहाँ ग्रामीण बच्चों का आना ग्रामीण परिवेश की निश्छलता को बहुत ही खूबसूरती से चित्रित करती है। जब हिरामन की गाड़ी में हीराबाई बैठती है, गाँव के बच्चों के लिए यह एक बहुत कौतूहल की स्थिति बन जाती है। बच्चे लोक की उस सहज जिज्ञासा के प्रतीक के रूप में हैं जो हर नई चीज़ को अपनी आँखों से तौलना चाहते हैं। जब गाड़ी गाँव से गुजरती है तब बच्चे तालियाँ बजाते हुए और गाड़ी के पीछे दौड़ते हुए शोर मचाते हैं। उनके लिए गाड़ी के भीतर बैठा व्यक्ति कौतूहल का विषय है। वे बिना किसी सामाजिक संकोच के अपनी खुशी और हैरानी व्यक्त करते हैं। गाड़ी में बाँस की ठट्टर (पर्दा) लगा देख बच्चे गाड़ी के पहिए के पास झुककर अंदर झाँकने की कोशिश करते हैं। यह दृश्य दिखाता हैं कि लोक-जीवन में गोपनीयता जैसी कोई चीज़ नहीं होती। बच्चे उस परदे वाली गाड़ी को देखते हुए, तालियाँ बजाते हुए अपनी स्मरण में आई हुई पंक्तियाँ दुहराने लगते हैं–

"लाली-लाली डोलिया में
लाली रे दुलहिनिया
पान खाए ......!''[5]

बच्चों के गीतों में आंचलिक शब्द जैसे - डोलिया, दुलहिनिया का प्रयोग होता है, जो उस विशेष यानि मिथिला और पूर्णिया कि महक को जीवंत कर देती है अथवा बच्चों का इस तरह गाड़ी के पीछे दौड़ना इस बात का प्रमाण है कि 'लोक' में प्रेम और कला का स्वागत बड़े ही खुले मन और शोर-शराबे के साथ किया जाता है। वहाँ प्रेम को छिपाया नहीं जाता, बल्कि उसे 'लोक धुनों' में व्यक्त भी कर दिया जाता है।

दूसरी तरफ, हिरामन का अपने बैलों के साथ जो रिश्ता है, वह भी 'लोक के प्रेम' का सबसे सुंदर उदाहरण है। वह उन्हें बेटा कहता है, उनसे बातें करता है और जब हीराबाई उनके बारे में पूछती है, तब वह गर्व से भर जाता है। मनुष्य और पशु के मध्य इस तरह का प्रेम दिखना लोक जीवन का ही आधार है।

फारबिसगंज का मेला, वहाँ कि धूल, लालटेन की रोशनी और नौटंकी के तंबू - यह सब 'लोक' के रंग हैं। यहाँ

अमीर-गरीब सब एक ही जमीन पर बैठकर नौटंकी का आनंद लेते हैं। जब नौटंकी का तंबू लगता है, वहाँ केवल हीराबाई का प्रदर्शन नहीं होता बल्कि वह पूरे इलाके का उत्सव बन जाता है। पूरा लोक अपनी थकान और गरीबी भूलकर उस कला के प्रेम में डूब जाता है। ऐसे में हिरामन जब हीराबाई के लिए खाना लाता है, तब उसकी चिंता एक 'गाड़ीवान' की अपने 'सवारी' के प्रति पेशेवर जिम्मेदारी से कहीं बढ़कर हो जाती है। लोक जीवन में अतिथि को सर्वोपरि माना जाता है। लोक जीवन का सौंदर्य इसी निश्चल सेवा भावना की सुंदरता को दर्शाता है।

रेणु जी ने भोजन के वर्णन के माध्यम से लोक-जीवन के स्वाद को उभारा है। हिरामन का मिट्टी के बर्तन में दही-चूड़ा लाना ग्रामीण पृष्ठभूमि के गहरे मानदंड दर्शाती है। भोजन का मिट्टी के बर्तनों या पत्तलों में परोसा जाना प्रकृति और जमीन के जुड़ाव को अतुल्य बनाता है। लोक जीवन में स्त्री और पुरुष के बीच एक मर्यादा का भाव देखने को मिलता है। हिरामन हीराबाई को सवारी या मेमसाहब नहीं कहता, बल्कि 'महुआ घटवारिन' की तरह किसी पवित्र छवि के रूप में देखता है। ग्रामीण जीवन में जब लोग उसे खाने के लिए आग्रह करते हैं तब उसके शब्दों में एक आदर भाव रहता है। इसे अनायास ही देखा जा सकता है। हिरामन के कहने पर जब हीराबाई भोजन करती है तब हिरामन उसे देखता रहता है और कहता है– 'भगवती मैया भोग लगा रही हैं'।[6]

हिरामन का यह 'मैया' शब्द बोलना 'लोक-जीवन' की उस गहराई को दिखलाता है, जहाँ हर स्त्री को सम्मान दिया जाता है। साथ ही, हिरामन का स्त्रियों के प्रति दृष्टिकोण को भी दिखाने का प्रयास किया गया है। लोक जीवन का प्रेम अक्सर शब्दों का मोहताज नहीं होता, हिरामन का चुपचाप खाने की व्यवस्था करना, हीराबाई का ध्यान रखना, हीराबाई की खुशी में अपनी खुशी ढूँढना उस लोकमानस को दर्शाता है जो दिखावे मात्र के लिए नहीं बल्कि भावों के उद्दिपन के लिए बना होता है।

इस दृश्य में हिरामन का हीराबाई के प्रति चिंता प्रकट होना, भोजन के माध्यम से अभिव्यक्त हुआ है। यहाँ 'लोक' अपनी पूरी निश्छलता के साथ उपस्थित है, जहाँ ऊंच-नीच और जाति-पाति की दीवारें गिर जाती हैं, सिर्फ दो मनुष्यों के बीच का सहज, पवित्र और निस्वार्थ जुड़ाव शेष रहता है। यह कहानी लोक संस्कृति, सहज आत्मीयता और मर्यादा का एक जीवंत दस्तावेज़ है।

निष्कर्ष

यह कहा जा सकता है कि प्रस्तुत कहानी में परिवेश अपनी पूर्ण समग्रता के साथ उभरकर आया है। उस अंचल के लोग, उनकी बोली, खान-पान, वहाँ के गीत-संगीत, मेला-नौटंकी, अंधविश्वास-कुरीतियाँ सब मिलकर अंचल विशेष को जीवंत कर देते हैं। जिस स्थान, काल व समय को रचनाकार ने चित्रित करने का प्रयास किया है, वह स्थानीय रंग के कारण कहानी में उभरकर आया है। कहानी में हिरामन और हीराबाई के अलावा जो भी पात्र आए है, वे अपनी पहचान बनाए बिना नहीं रह पाए है। पात्रों के संवाद जहाँ रखे जाते हैं, वहीं हम उनसे परिचित होते चले जाते हैं। अंतः ग्रामीण सादगी, भावनाओं की गहराई और लोक-संस्कृति का चित्रण इस कहानी की विशेषता है, जो अंत में सामाजिक यथार्थ के सामने निडरता से प्रेम को विदा करती है। हिरामन को जब पता चलता है कि हीराबाई एक नौटंकी की कलाकार है, तब वह उसे सामाजिक बंधनों से मुक्त मानकर भी उसके समाज में न मिल पाने के कारण दुखी होता है। जब हिराबाई चली जाती है, तब हिरामन हिराबाई की याद और उस दर्द भरे अनुभव को समेटे हुए, तीसरी और अंतिम कसम खाता है कि वह अब किसी नौटंकी वाली को अपनी गाड़ी में नहीं बिठाएगा।

सन्दर्भ

1. रेणु, फणीश्वरनाथ; सम्पूर्ण कहानियाँ; प्रकाशकः राजकमल प्रकाशक, नई दिल्ली; संस्करण : 2010, पृ.सं.133
2. वही, पूर्वोद्धृत; पृ.सं.136

3. रेणु, फणीश्वरनाथ; सम्पूर्ण कहानियाँ; प्रकाशकः राजकमल प्रकाशक, नई दिल्ली; पृ.सं.137
4. कुमार, संजीव ; 'दिली उलफ़त थी दो जानिब.....उर्फ किस्सा तीसरी कसम की बाई का' ; कथा देश, अप्रैल, 2005; संपादक (हरिनारायण); पृ.सं.83
5. रेणु, फणीश्वरनाथ; पूर्वोद्धृत; पृ.सं.136
6. वही; पूर्वोद्धृत ; पृ.सं.139
7. साहनी, डॉ.दीनानाथ; 'भारत में हिन्दी सिनेमा'; बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी पटना; संस्करण-अगस्त २०१६

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

पाश्चात्य संस्कृति और भारतीय ज्ञान परंपरा : एक संक्षिप्त परिचय

अंगेश कुमार सिंह, जितेन्द्र कुमार
(शोधार्थी, हिन्दी)
वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय जौनपुर, उत्तर प्रदेश
डॉ. सर्वेश्वर प्रताप सिंह
(शोध निर्देशक)
वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय जौनपुर, उत्तर प्रदेश
मो०- 9508855681, 9452508522, 7598176087

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज से ही आजीवन संबद्ध रहकर जीवन यापन करता है और विभिन्न संस्कृतियों को वहन करता हुआ अंत में इस असार संसार से विदा लेता है। मनुष्य विभिन्न भूभागों एवं परिस्थितियों के अनुसार विभिन्न सभ्यताओं एवं संस्कृतियों को ग्रहण करता है और यही संस्कृतियाँ उसे उसके अन्य साथियों से अलग भी करती हैं। विभिन्न देशों की संस्कृतियाँ प्रायः भिन्न हुआ करती हैं। ये संस्कृतियाँ क्या हैं? इसके पहले इसके अर्थ को समझना आवश्यक है–

'संस्कृति' शब्द लैटिन भाषा के 'कल्ट' या 'कल्ट्स' से लिया गया है जिसका अर्थ है– जोतना, विकसित करना, परिष्कृत करना या पूजा करना। संक्षेप में कहा जाय तो 'किसी वस्तु को संस्कारित और परिष्कृत करना'। यह संस्कृत भाषा के 'कृ' धातु से बना है। संस्कृति का सीधा सा अर्थ है– उत्तम या सुधरी हुई स्थिति।

विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई संस्कृति की परिभाषाएं- विभिन्न विद्वानों ने संस्कृति की निम्नलिखित परिभाषाएं दी हैं–

प्रसिद्ध मानवशास्त्री एडवर्ड बर्नार्ड टॉयलर(1832-1917) ने सन् 1871 में प्रकाशित अपनी पुस्तक प्रिमिटिव कल्चर में संस्कृति की परिभाषा देते हुए कहा है– "संस्कृति वह जटिल समग्रता है जिसमें ज्ञान, विश्वास, कला, आचार, कानून,प्रथा और अन्य सभी क्षमताओं तथा आदतों का समावेश होता है जिन्हें मनुष्य समाज के नाते प्राप्त कराता है।"

रॉबर्ट बीरस्टीड के अनुसार- "संस्कृति वह संपूर्ण जटिलता है जिसमें वे सभी वस्तुएं सम्मिलित हैं जिन पर हम विचार करते हैं, कार्य करते हैं और समाज के सदस्य होने के नाते अपने पास रखते हैं।"

हर्शकोविट्स के अनुसार- "संस्कृति पर्यावरण का मानव निर्मित भाग है।"

बोगार्डस के अनुसार- "किसी समूह के कार्य करने और विचार करने के सभी तरीकों का नाम संस्कृति है।"

मैलिनोस्की के अनुसार- "संस्कृति मनुष्य की कृति है तथा एक साधन है जिसके द्वारा वह अपने लक्ष्यों की प्राप्ति करता है।"

उपरोक्त परिभाषाओं के अनुशीलन से यह ज्ञात होता है कि संस्कृति एक सीखा हुआ व्यवहार है जिसमें व्यक्ति रहने,

खाने-पीने, बात करने, लिखने-पढ़ने, भाषायी ज्ञान आदि के तौर-तरीकों को सीखता है। व्यक्ति सामाजिक प्राणी होने के नाते जो भी कुछ सीखता है चाहे वह भौतिक हो अथवा अभौतिक हो वह सब संस्कृति के अंतर्गत आता है।

संस्कृति की विशेषताएं- संस्कृतियों की अपनी कुछ विशेषताएं होती हैं जिसको निम्नलिखित रुप से समझा जा सकता है—

गतिशीलता- संस्कृति में गतिशीलता पाई जाती है। जैसे-जैसे समय बीतता है संस्कृति निरंतर बदलती है और इसमें नए-नए विचारों का सम्मिलन होता जाता है। पुराने तौर-तरीकों में परिवर्तन इसका अवश्यंभावी गुण होता है।

सामाजिकता- संस्कृति में सामाजिकता का गुण पाया जाता है। सामाजिक संबंधों के जाल को हम समाज कहते हैं। संस्कृति समाज की संपूर्ण जीवन विधि का प्रतिनिधित्व करती है। समाज का हर व्यक्ति उस समाज की संस्कृति से अछूता नहीं रह सकता।

हस्तांतरण- संस्कृति का एक गुण हस्तांतरण भी है। इसमें एक संस्कृति का दूसरी संस्कृति में हस्तांतरण होता रहता है। इसका हस्तांतरण भाषा एवं प्रतीकों के माध्यम से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में पहुंचता है।

मनुष्य द्वारा निर्मित- संस्कृति का निर्माण मनुष्य द्वारा ही होता है और वही उसका निर्माता होता है।

अनुकूलता- संस्कृति में अनुकूलन का गुण पाया जाता है। वातावरण एवं परिस्थितियों के अनुसार संस्कृति अपने आपको ढाल लेती है। यह अनुकूलता समय एवं परिस्थिति के अनुसार चलती रहती है।

आधि-सावयवी एवं आधि-वैयक्तिकता- संस्कृति का निर्माण किसी व्यक्ति विशेष द्वारा नहीं किया जाता बल्कि एक समूह द्वारा इसका निर्माण होता है। कोई भी मनुष्य संस्कृति में रहकर ही मानव कहलाता है और फिर वही मानव संस्कृति का निर्माण करता है। अतः इसमें अधि-सावयवता और अधि-वैयक्तिकता का गुण पाया जाना स्वाभाविक है।

सीखा हुआ व्यवहार- संस्कृति एक सीखा हुआ व्यवहार है। मनुष्य जीवन पर्यंत सीखने के दौर से गुजरता रहता है।संस्कृति व्यक्ति की जन्मजात प्रवृत्तियों से संबंधित नहीं होती बल्कि यह सामाजिक सीख एवं अनुभवों पर आधारित होती है।

पाश्चात्य संस्कृति

मानव संस्कृति के अभाव में अपने जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकता। वह ही संस्कृतियों का निर्माण करता है और संस्कृतियाँ ही मानव को संस्कारित एवं परिष्कृत करके उसको मानव बनाती हैं।

'पाश्चात्य' शब्द से अभिप्राय पश्चिमी रोमन साम्राज्य एवं पूर्वी रोमन साम्राज्य से है। आज के परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी, फ्रांस,नीदरलैंड आदि देश पाश्चात्य देशों के अंतर्गत आते हैं।

पाश्चात्य संस्कृति से तात्पर्य पश्चिमी देशों की उन सांस्कृतिक, साहित्यिक, वैज्ञानिक, सामाजिक एवं राजनीतिक सैद्धांतिक व्यवस्थाओं से है जो उसे अन्य सभ्यताओं से अलग करती है।

पाश्चात्य संस्कृति अन्य संस्कृतियों की तरह समय-समय पर विकसित हुई है। यह न तो सजातीय है और ना ही अपरिवर्तनीय। 'पाश्चात्य संस्कृति' शब्द को बतलाते हुए सैलेन देवनाथ कहते हैं— पश्चिमी संस्कृति साहित्यिक, वैज्ञानिक, राजनीतिक, कलात्मक और दार्शनिक सिद्धांतों का एक समूह है जो इसे अन्य सभ्यताओं से अलग करते हैं। परंपराओं और ज्ञान के इस समूह में से अधिकांश को पश्चिमी सिद्धांत में संग्रह किया गया है।[1]

पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव- पाश्चात्य संस्कृति के प्रभावों की बात करें तो यह एक ओर भारतीय संस्कृति को दुष्प्रभावित करती है तो कहीं ना कहीं इसके अच्छे प्रभाव भी नजर आते हैं। जैसे—

वेशभूषा- पाश्चात्य देशों के लोग सामान्यतया पैंट-शर्ट, जींस-टॉप, स्कर्ट आदि पहनते हैं जबकि भारतीय लोग धोती-कुर्ता, साड़ी, सूट, पाजामा आदि पहनते हैं लेकिन वहीं विदेशी जब भारत आते हैं तो यहां की संस्कृति में ढल जाते हैं और भारतीय परिधानों की ओर आकर्षित होने लगते हैं।

रहन सहन- पाश्चात्य संस्कृति के लोगों का रहन सहन भारतीयों की तुलना में स्वतंत्र एवं मुक्त होता है जबकि भारतीय संस्कृति में लोग सामाजिक एवं पारिवारिक व्यवस्था से बंधे हुए होते हैं। व्यक्ति चाह कर भी इन सामाजिक बंधनों से विमुख नहीं हो सकता।

भाषा- पाश्चात्य देशों के लोग अधिकांशतः अंग्रेजी भाषा का प्रयोग करते हैं। भारत देश में भी यह भाषा लगातार अपने पांव पसारती जा रही है और अधिकांश कार्यालयों में इसका प्रयोग निरंतर बढ़ता ही जा रहा है लेकिन हम भारतीयों को चाहिए कि हमें अपनी मूल भाषाओं संस्कृत,हिन्दी को नहीं भूलना चाहिए। आज इन भाषाओं को हटाने का षड़यंत्र रचा जा रहा है। अपनी भाषा की उन्नति के विषय में भारतेंदु हरिश्चंद्र कहा था–

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटे न हिय को शूल।।

सामाजिकता- पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण हमारे अंदर एक ओर झींझक, संकोच जैसी बुराइयाँ समाप्त हो रही हैं तो वहीं दूसरी ओर बड़ों के प्रति सम्मान जैसी अच्छी आदतों में कमी भी देखने को मिल रही है। व्यक्ति व्यावहारिक ना होकर सैद्धांतिक होता जा रहा है। उसके मूलभूत गुणों में भी कमी आई है।

साहित्य- 'साहित्य' के विषय में हिंदी के मूर्धन्य आलोचक और निबंधकार आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है– प्रत्येक देश का साहित्य वहां की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है। तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है।[2] साहित्य के द्वारा ही हम किसी भी समाज, देश या समुदाय के संस्कृतियों के विषय में जान सकते हैं। पाश्चात्य संस्कृति में साहित्य की अत्यंत समृद्ध श्रृंखला रही है, जो वहां के विषय में बतलाने में महती भूमिका निभाती है।

भारतीय ज्ञान परंपरा का विकास

भारत एक प्राचीन देश है, जिसकी ज्ञान परंपरा अतीव पुरातन है। इसका विकास कई चरणों में हुआ है, जिसे हम निम्नलिखित रुप से समझ सकते हैं–

वैदिक काल और भारतीय ज्ञान परंपरा- हड़प्पा सभ्यता के विनाश के शताब्दियों बाद एक नई सभ्यता का उदय हुआ जो आर्य सभ्यता कहलाई। इस सभ्यता का विकास गंगा-यमुना के मैदानी भागों में ज्यादातर पाया गया। इस सभ्यता के लोगों ने अपना निवास सिन्धु और सरस्वती नदी के किनारों पर से शुरू किया। ये विभिन्न देवी-देवताओं की पूजा किया करते थे जिसकी स्तुति ऋचाओं द्वारा संपन्न होती थी। यही ऋचाएं बाद में ऋग्वेद,यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद के रूप में प्रस्फुटित हुईं। इस काल में समाज 4 वर्गों ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र में विभक्त था। सभी वर्गों का कार्य सुनिश्चित था, जैसे- अध्यापन का कार्य ब्राह्मण को, शासन और सुरक्षा का दायित्व क्षत्रिय को, व्यापार और अन्नोत्पादन का कार्य वैश्य को और सेवा करने तथा श्रमिक का कार्य शूद्र वर्ण को था। इस काल में शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार प्रथम तीन वर्णों को ही था। शिक्षा के लिए शिष्यों को गुरु के पास ही गुरुकुलों में रहना पड़ता था। इस काल में शिक्षा पूर्णतरू मौखिक ही थी।

जैन एवं बौद्धकाल और भारतीय ज्ञान परम्परा- वैदिक काल में ब्राह्मणों के वर्चस्व और उनके सभी वर्णों से श्रेष्ठ मानने के कारण जनसामान्य में अंदर ही अंदर विद्रोह की भावना व्याप्त हुई। इस संदर्भ में रांगेय राघव जी कहते हैं– भेद इतना था कि जातियों पर ब्राह्मणों का अधिक प्रभाव था इसलिए सामाजिक व्यवस्था के टूटने में समय लगना आवश्यक था।[3]

6ठीं शताब्दी में क्षत्रिय और गरीब जनता ब्राह्मणों द्वारा बताए यज्ञों के खर्चों को सहने में असमर्थ हुई और इसमें सुधारों की मांग उठनी शुरू हुई जिससे जैन और बौद्ध के उदय होने का मार्ग प्रशस्त हुआ। जैन धर्म में 24 तीर्थंकर हुए जिनमें संस्थापक के रूप में ऋषभदेव और 24वें तीर्थंकर के रूप में महावीर स्वामी ने जैन धर्म के सिद्धांतों का प्रचार एवं प्रसार किया। बाद में इस धर्म में भी मतांतर हुआ और यह धर्म दो संप्रदायों श्वेतांबर और दिगंबर में विभक्त हो गया।

तत्पश्चात बौद्ध धर्म का उदय हुआ जिस के संस्थापक गौतम बुद्ध (543-483 ई०पू०) हुए। बौद्ध धर्म में मठों की

स्थापना हुई। इस काल में शूद्रों और स्त्रियों की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया गया। वैदिक कालीन शिक्षा व्यवस्था की तुलना में बौद्ध कालीन शिक्षा पद्धति समग्रता को प्राप्त थी जहां प्रत्येक वर्ण को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त हुआ। गुरुकुल प्रथा का अंत हुआ और तक्षशिला तथा नालंदा शिक्षा के प्रमुख केंद्र बने। इसके अलावा काशी, विक्रमशिला, बल्लभी, ओदंतपुरी, प्रयाग आदि केन्द्रों ने भी शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार में अग्रणी भूमिका निभाई।

मध्यकाल और भारतीय ज्ञान परंपरा- मध्यकाल से तात्पर्य मुगलकाल से है। इस काल में शिक्षा का स्वरूप बदल गया। फारसी भाषा का प्रचार एवं प्रसार हुआ। धार्मिक शिक्षा पर विशेष बल दिया जाने लगा। मकतब एवं मदरसे शिक्षा के प्रमुख केंद्र बने। दिल्ली, आगरा, बीदर, जौनपुर, मालवा जैसे नगर शिक्षा के केंद्र के रूप में विख्यात हुए। इस सन्दर्भ में प्रसिद्ध विद्वान बी.एन. लूणिया जी कहते हैं– इस युग में भारतीय राज्य सभाओं और सामंतों के जीवन में सबसे अधिक आकर्षक तत्व भोग विलास की अतुलनीय भावना थी। बादशाह का दरबार धन और संस्कृति का केंद्र था।(4)

आधुनिक काल और भारतीय ज्ञान परंपरा- मुगलकाल के पतन के बाद ईस्ट इंडिया कंपनी का वर्चस्व बढ़ा और ईसाई मिशनरियों ने शिक्षा की बागडोर संभाली। परिणामस्वरूप कई विद्यालय खोले गए। सन् 1800 ई० में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना हुई। सन् 1882 में सर विलियम विल्सन हंटर की अध्यक्षता में भारतीय शिक्षा आयोग की स्थापना हुई। आयोग का प्रमुख कार्य शिक्षा व्यवस्था में सुधार, धार्मिक शिक्षा, स्त्री शिक्षा, मुसलमानों की शिक्षा आदि पर विशेष बल देना था लेकिन इसका परिणाम निराशाजनक ही रहा। प्राथमिक शिक्षा से बद से बदतर हो गई। अंग्रेजी भाषा का ही बोलबाला रहा। हिंदी और संस्कृत की उपेक्षा होने लगी। फलतरू देसी संस्थाओं एवं समाजसेवियों ने कॉलेजों की स्थापना करनी शुरू कर दी, जिनमें सन् 1870 में फर्ग्यूसन कॉलेज, 1886 में दयानंद एंग्लो वैदिक कॉलेज, 1898 में सेंट्रल हिंदू स्कूल, 1882 में पंजाब विश्वविद्यालय, 1887 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय, 1905 में बंगाल टेक्निकल इंस्टिट्यूट, 1916 में बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, 1917 में पटना विश्वविद्यालय, 1920 में अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, 1921 में लखनऊ विश्वविद्यालय आदि प्रमुख हैं। भारत में शिक्षा से संबंधित विभिन्न आयोगों/समितियों का विवरण निम्नलिखित है–

- 1854 से पूर्व आधुनिक शिक्षा
- 1854 चार्ल्स वुड का घोषणा पत्र
- हंटर शिक्षा आयोग 1882
- भारतीय विश्वविद्यालय अधिनियम 1904
- सरकार का प्रस्ताव (Government Resolution 1913) 21 फरवरी 1913
- सैडलर विश्वविद्यालय आयोग 1917
- हर्टांग समिति 1921
- राधाकृष्णन आयोग 1948
- कोठारी आयोग 1964
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968
- नवीन शिक्षा नीति 1986
- नई शिक्षा नीति 2020

भारतीय शिक्षा व्यवस्था और संस्कृति के विषय में प्रकाश डालते हुए बी.एन. लूणिया कहते हैं–यूरोप और अमेरिका जैसे पाश्चात्य महाद्वीपों की जनता भारत की सभ्यता व संस्कृति को समझने के लिए उत्सुक है। भारत विषयक ज्ञान के लिए वह जागरूक है क्योंकि आधुनिक भौतिकवाद में आक्रांत होकर वह विविध यंत्रणाएं भोग रही है और बड़े-बड़े वादों के अंदर लुप्त स्वार्थो से रौंदी जा रही हैं।(5)

हमारी सांस्कृतिक एवं भारतीय एकता की जड़ें बहुत गहरी और विस्तृत हैं। जिसके कारण हम लगातार अपनी शैक्षिक परंपरा में उत्तरोत्तर वृद्धि करते जा रहे हैं। इस शैक्षिक व्यवस्था में युगानुकूल परिवर्तन एवं परिवर्द्धन स्वीकृत किया जा रहा

है। भारतीय शिक्षा के विषय में प्रसिद्ध विद्वान प्यारेलाल रावत जी कहते हैं–अतीत का समृद्ध भारत बीच में एक दरिद्र राष्ट्र बन गया था, किंतु आज पुनः उसने अंगड़ाई ली है और अपने स्वर्णिम भविष्य की ओर वह जिज्ञासा तथा आशाभरी दृष्टि से देख रहा है।(6)

भारतीय ज्ञान परंपरा : एक अध्ययन

भारत की सभ्यता एवं संस्कृति सर्वाधिक प्राचीन है। विश्व की सभी संस्कृतियों की यह जननी मानी जाती है। भारत की पहचान विश्व गुरु के रूप में विख्यात है। भारत की संस्कृति विभिन्नता में एकता का संदेश देती है। इसकी स्थिति ठीक वैसी ही है जैसे किसी माला के फूल अपने सौंदर्य से दूसरों को मोहित ही नहीं करते वरन् दूसरों के गले में डाले जाने पर उनको सुशोभित भी करते हैं। इसी प्रकार हमारे देश की धार्मिक,भाषायी और जातिगत विभिन्नता स्वयं तो सुशोभित होती ही है,हमारे देश को भी सुशोभित करती है। भारतवासियों ने सदैव अलग-अलग विचारधाराओं को जो कि धर्म आदि विभिन्न रूपों में होती है, सदैव विकसित होने और उनके अपने ही ढंग से पुष्पित एवं पल्लवित होने दिया। विभिन्न देश के लोगों को इस प्रकार अपने में मिल जाने दिया जैसे कि वे अपने ही हों। हमने विभिन्न देशों की संस्कृतियों को स्वयं में मिलाया और स्वयं को भी उनमें मिलने दिया। भारतीय ज्ञान परंपरा की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

वसुधैव कुटुंबकम की भावना- भारतीय शिक्षा एवं संस्कृति पूरे विश्व को एक परिवार मानती है। इसके लिए पूरा विश्व एक आदर्श परिवार की भांति है,जहां सभी मानव एक दूसरे के विकास और सहयोग के लिए कार्य करते हैं। ऐसी उत्कृष्ट मंगल भावना विश्व के किसी भी देश की संस्कृति में नहीं पाई जाती।

आदर्श अनुशासन व्यवस्था- भारतीय संस्कृति की प्रमुख पाठशाला परिवार है, जो अपने सदस्यों को उत्तम आदर्शों एवं सुव्यवस्थित अनुशासन में रखना सिखाता है। बच्चा बचपन से वृद्धावस्था तक पारिवारिक वातावरण में रहकर उत्तम नागरिक बनने की ओर उन्मुख होता है।

रोजगारोन्मुख शिक्षा परंपरा- भारत की शिक्षा चाहे वह प्राचीन रही हो अथवा नवीन, रोजगार से अवश्य जुड़ी हुई है।छात्र नियमित अध्ययन और आदर्श शैक्षिक गतिविधियों में संलिप्त रहकर उच्च जीवन आदर्श प्रस्तुत करता है।

सांस्कृतिक और सामाजिक एकता- भारतीय ज्ञान परंपरा में सामाजिक और सांस्कृतिक एकता पर विशेष बल दिया जाता रहा है।

निरपेक्षता- भारत की शिक्षा व्यवस्था पूर्णरूपेण धर्मनिरपेक्ष है।यहां जाति-पांति, ऊंच-नीच, छुआछूत की भावना से परे रहकर शिक्षा व्यवस्था को सुदृढ़ किया जाता है,जो छात्र के नैतिक गुणों की वृद्धि में अपना योगदान देता है।यहां छात्र धर्मनिरपेक्ष रहकर शिक्षा प्राप्त करके उत्तम नागरिक बनता है।

गतिशीलता- हमारी संस्कृति सदा गतिशील है। मानव जीवन को परिष्कृत करने के लिए यह यथा समय नई-नई विचारधारा को स्वीकार करती है और नई शक्ति प्राप्त करती है। यहाँ किसी भी प्रकार का दुराग्रह नहीं है, जो उचित और कल्याणकारी होता है, वह यहां सहर्ष गृहीत होता है। इसकी गतिशीलता का रहस्य मानव जीवन के शाश्वत मूल्यों में निहित है।

सांस्कृतिक और सामाजिक एकता- राष्ट्र तथा समाज की संस्कृति का संरक्षण एवं विस्तार भारत की शिक्षा व्यवस्था की प्रमुख विशेषता थी। इस संबंध में ए.एस.अल्टेकर कहते हैं– हमारे पूर्वजों ने प्राचीन युग के साहित्य की विभिन्न शाखाओं के ज्ञान को सुरक्षित ही नहीं रखा अपितु अपने यथाशक्ति योगदान द्वारा उसमें निरंतर वृद्धि करके उसे मध्य युग तक भावी पीढ़ी को हस्तांतरित किया।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. देवनाथ, एस. धर्मनिरपेक्षता : पश्चिमी और भारतीय. अटलांटिक पब्लिकेशन, नई दिल्ली

2. शुक्ल, आर. हिंदी साहित्य का इतिहास
3. राघव, आर. प्राचीन भारतीय परंपरा और इतिहास पृष्ठ-486
4. लूणिया, बी.एन. भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विकास पृष्ठ-305,
5. लूणिया, बी.एन. भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विकास पृष्ठ- 478-479
6. रावत, पी.एल. प्राचीन व भारतीय शिक्षा भारत पब्लिकेशन आगरा, पृष्ठ- 480

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

STUDY OF THE LONELINESS AMONG SECONDARY LEVEL SCHOOL STUDENTS: AN EMERGENT CONCERN

Vijata Kumari
Research Scholar, Education Department ,M. J. P. Rohilkhand University Bareilly U. P.
Prof Preeti Khanna
Active Principal, Vardhaman College, Bijnor, Uttar Pradesh.

ABSTRACT

This research paper aims to discuss the modern day concern issue of loneliness among secondary level students studying in class 11th and 12th and suggest strategies and techniques to combat it. In this study work into a theoretical perspective on the prevalence of loneliness among the secondary school level students. The previous research exploded in detail about previous research and systematic review of past work on loneliness. This paper explores loneliness by defining it, by explaining its type and cause ,discussing its effects on school students and giving suggestions for use of various strategies to overcome loneliness effectively. The research methodology of this study is document analysis that involves systematically examining and reviewing existing documents ,related to concern problems, and also having deep analysis of reviewed data to make conclusions.

KEY WORDS:- Loneliness, prevalence research, strategies,, problems, overcome, effectively

INTRODUCTION

Loneliness, a feeling of distraction from relationships with multidimensional emotional experiences. that affects individuals' personality across social gathering and is particularly prevalent among adolescents students in present days . It originated due to reduced social networks, poor mental health and excessive social media use. and can be social or emotional and is linked to developmental transitions, conditions. and , Loneliness is involuntary and associated with significant physical work and mental health hazards including anxiety,depression, suicide, and chronic illnesses. Due to its public health importance among adolescent students loneliness must remain underrecognized, necessitating tailored interventions. Loneliness is usually defined as the emotion of a person produced when they do not meet the expectations of interpersonal relationships,and it can be expressed by two main theories: social needs theory and cognitive processing theory. The first is evident that loneliness is a response to unsatisfied social needs, while the second one suggests that loneliness comes because of individuals dissatisfaction with their interpersonal relationship.

The destructive effects of loneliness to students is mainly*procrastination, decreased educational achievement in learning, delimited social skills, anxiety, and depression. In the future, it is necessary

to find out loneliness among students and also find out its general mechanism, type, cause, effect and management mechanism to overcome loneliness among students.

OBJECTIVE OF THE STUDY

1.The primary aim of this study is to discuss various aspects of loneliness like its meanings, causing factors,impact among the students learning in secondary level classes.

2.Secondary objective is to emphasize the importance of schools as providing support by organizing various social and cultural activities among students to encourage further study about effective methods of combating loneliness.

MEANING OF LOLENILESS

DEFINITION OF THE LOLENINESS:- It is defined as a painful emotion of a person when people's needs for their social network does not match their preferences in quantity or attribute.Loneliness is defined as the individual does not feel care and understanding from social interaction or fails to have an intimate and comfortable interpersonal relationship.In general sense people with loneliness tend to rely more on the feedback from external interpersonal relationships, that is, they are passive and expect to have emotions and belonging directly through the outside world in interpersonal relationships. As for secondary level school students, loneliness mainly comes from friendship insufficiency, which makes them anxious and disturbed.loneliness is not just a concept the same as being alone. A person who is often busy in a social state and talks with different people all time may be very lonely at heart. On the other hand, one who often lives alone is not necessarily psychologically lonely. Loneliness, as an emotion, can bring psychological benefits and disadvantages to people. Moderate loneliness can provide inner quietness, self-concern,and self-reflection. However, loneliness can also lead to a range of hazards such as depression(Cacioppo et al., 2006; Cacioppo et al., 2010; VanderWeele et al., 2011), excessive drinking (Akerlind & Hornquist, 1992), aggressive behavior, social fear, and anxiety (Cacioppo et al., 2014;Ernst & Cacioppo, 1999; Kearns et al., 2014). Lasting loneliness can even lead to physical diseases

THE THEORY OF LONELINESS:— On the basis of its origin loneliness can be described in two theory

1.Social Needs Theory:- On the basis of previous work on loneliness,the theory pointed out that all human beings have their own basic social and cultural needs, that is, essential to communicate with others. This sense of belonging and identity originated from social interaction is necessary for human beings. If it is lacking, it will lead to loneliness (Terrell-Deutsch, 1999). Social loneliness refers to a person being socially involved, but feeling out of place. In other words,it can be said that even if you are in a group, you can still realize that you aren't a member of it .

2.**Cognitive Processing Theory:-**Cognitive processing theory supported that root cause of loneliness was the gap between the present situation and expectation of interpersonal relationships , which means people are dissatisfied with the present interpersonal relationship and think that it can change to meet their ideals (Terrell-Deutsch, 1999).Cognitive processing theory also shows the individual's measurement of loneliness, that is, the evaluation of interpersonal relationships is influenced by their own aspects.

TYPE OF LOLNILESS

- **Emotional Loneliness:-** This occurs in absence of meaningful social relationships, and people struggle to improve things, due to their social isolation.
- **Social Loneliness:-** It is familiar to people, who feel shy or awkward when communicating socially or experienced with low self esteem. People with social loneliness are excluded, rejected and feeling disconnected from a group.
- **Cultural Loneliness:-** It feels a people disconnect from its own culture or mainstream culture.
- **Situational Loneliness:-** A situation where making connections or developing good peer relationships is difficult, leads to loneliness among peoples. It only occurs at certain times like sunday, bank holiday, social festivals.
- **Intellectual Loneliness:-**Feeling a deficiency ofIntellectual stimulation and connectedness from a group or organization.
- **Psychological Loneliness:-** In this situation any trauma made people disturbed and disconnected from social relationships.
- **Existential Loneliness:-** A feeling of basic separateness from the other wider words
- **Transient Loneliness:-** A type of loneliness that comes and goes with time.
- **Chronic Loneliness:-** When any type of loneliness is present in a person for a long time it becomes chronic loneliness.

MEASUREMENT OF LONELINESS:- UCLA- L.S. (University of California and Los Angeles Loneliness Scale) was a tool of loneliness used widely by researchers for assessing loneliness has been iterated in three versions. Russell compiled the first edition of the UCLA Loneliness Scale in 1978 (Russel et al., 1978), which mainly had 20 topics to evaluate individual loneliness by self-evaluation. However, a defect is that all the questions are too understood by respondents as they all adopt negative wording, which makes systematic reaction bias. In view of this defect, Russell and his team again carried out the first iteration in 1980, changing the problem to internal inconsistency, that is, different factor structures affecting loneliness exist. In order to improve R-UCLA, Russell and others developed the third generation of UCLA Loneliness Scale in 1996, that is, UCLA-3. Revising the self-assessment topic wording again based on the previous, avoiding , confusion and deviation, UCLA-3 also revised them to eleven negative wording topics and nine positive wording topics. . This version of the UCLA Loneliness Scale has higher accuracy ,internal consistency ,good discriminating value, test retest reliability and advantages of low biasness. (Russell, 1996). The scoring method of the scale is that the subjects score the questions subjectively on the questionnaire whose questions are mainly about the frequency of certain emotions and the options are mainly divided into four grades, namely, 1. Never 2. Rarely 3. Sometimes 4. Always. Subjects only need to fill in the numbers corresponding to the frequency on the horizontal line after the question. Meanwhile, the scoring rule is to add the scores of questions. As for questions marked with asterisks, the scores should be reversed (i.e., 1=4, 2=3, 3=2, 4=1) .

KEY FACTORS CAUSING LONELINESS AMONG STUDENTS

1.Lack of Family, Friend, Teacher Support System:- Friends, family members and teachers play an important role in being a person. If these person discarded from the life of a person ,become alone loneliness become a part of that person life

2.Social Isolation:- Humans are social animals and always engaged in various social activities throughout their life. social activities make a person of humanity justice and emotional and without social gathering, social involvement, human beings face loneliness..

3.Educational Stress:- Busy study schedules , pressure of getting good marks, position in assessment, chosen decision and hard work for achieving the aim, parental high expectations, undesirable educational demands leads academy pressure on the students resulting in mental issues and loneliness among the secondary level students being a serious problem in present day scenarios.

4.Mental Health Problem:- Dysfunction of nervous system, Pre-existing anxiety or depression can increase the risk of loneliness.

5.Smartphone Addiction Behaviour:- Heavy use of social media with smartphone screen and technology can increase feelings of isolation, social comparison, and decrease face-to-face interaction.

6.Social and Mental Anxiety:- Fear of social rejection, personality disadjustment, Insecurity or difficulty initiating conversations can lead to self-isolation. .

7.**Undesirable Expectation:- A** gap between the imagined "fun" college experience and the reality of life causes loneliness among students.

8.Living Arrangements In any case, in cross-sectional studies, living alone is consistently shown to be associated with significantly higher levels of loneliness compared to other living arrangements and it is often one of the strongest correlates (e.g., Altschul et al., 2021; Dahlberg et al., 2022; Hansen and Slagsvold, 2016; Lykes and Kemmelmeier, 2013; Nyqvist et al., 2019;) leea

EEFFECTS OF LONELINESS ON STUDENTS

The mechanism of adverse effects of loneliness can be explained through a comprehensive theoretical model . General theoretical models exist widely in other fields. For example, researchers explain that the general attack model of individual aggression can be used to explain all the factors that affect aggression (Anderson & Bushman, 2002). Therefore, we also need a similar comprehensive explanation for loneliness.Some theories may explain the influence mechanism of loneliness. According to the Construal Level Theory, the intimacy of the interpersonal relationship is characterized by psychological distance (Trope et al., 2007). Psychological distance refers to individuals taking themselves as reference points, perceiving things in time and space dimensions, and judging the probability of occurrence. Expanding along four dimensions, mental distance forms temporal distance, spatial distance, social distance, and hypothetical (Trope et al.,)

EFFECTS OF LONELINESS ON STUDENTS

1. Disruptive Behavior.	9. Inability to Assimilation and Adaptation.
2. Social Isolation.	10 Decrease Co- curricular Activities.
3. Poor Peer Relationship.	11. Increase Absenteeism.
4. Chronic Stress and Anxiety.	12. Poor Study Habits.
5. Academic Underachievement.	13. More Aggressiveness.
6. Increased Tiredness	14. Lack of Happiness.
7. Fear to Assessment	15. Unable to Complete Assignment.
8. Less Communication Skills.	16. Mobile Addiction Behaviour.

STRATEGIES for STUDENTS LONELINESS MANAGEMENT:- Loneliness management among students involves proactive measures to it and its. connections through in-person interactions, utilizing school support services like counseling,mental support practicing mindfulness to manage stress, and limiting digital media consumption. There are following Key strategies to manage loneliness among students.

1.Active Involvement of Students in Socializing:- Engaging in team sports, club activities, or volunteering can alleviate loneliness and build confidence. There are many small steps for connecting students in social activities like spending time in communal areas (like kitchen or lounge areas) rather than staying in a personal room helps, even without constant active socialization.

2.Utilizing Schools Services:- Engaging with counselors, joining support groups, and attending workshops provides professional mental health care.

3.Awareness of Self-Care & Mindfulness Work:- Engaging in journaling, gratitude exercises, deep breathing, or physical activity (walking, stretching) to manage stress and improve mental well-being.

4.Advice of Quality Sleep:- Prioritize at least 8 hours of sleep for better academic performance, emotional balance and active participation in daily functioning. .

5.**Preventive Unwanted Programs**:- Implementing proactive measures to help students manage their social isolation and academic stress and decreasing the risk of long-term isolation.

6.Connecting with Family/Friends and Teachers:- Actively communicating with loved ones to maintain a sense of connection and support leads to minimizing loneliness. **Balancing Use of 7.Digital Devices :-** While ICT-based interventions (apps, online forums) can help, balancing them with face-to-face interaction is necessary, as excessive social media can contribute to isolation.

8.Mental Health Care Services:-Providing students accessible,, and tailored support services, including tele-health, to address high levels of distress and anxiety among students.

9.Providing Effective and Safe Spaces:- Designing opportunities for students that influence them to interact, such as project work, peer learning ,group workshops, mentorship programs, and structured social events to create strong communication skills among students. **10.Restructuring Students**

Daily Routine:- Organizing a balanced schedule for learners including , social time, self-care and productive activities.

11.Mindfulness Physical Activity:- Engage yourself in regular exercise, such as yoga, sports, or walking, to reduce stress hormones and daily.practice deep abdominal breathing (inhaling)

12.Hobbies:- Make time for creative outlets, such as music, dance writing, reading stories, painting, crafting and talking to friends, family to feel comfort.

13.Balanced Diet: Avoid excessive caffeine and sugary snacks, which can increase anxiety and cause energy decrease.

REFERENCES

- APA Dictionary of Psychology. (n.d.). Retrieved from https://dictionary.apa.org/loneliness
- Alaviani M, Parvan R, Karimi F, Safiri S, Mahdavi N 2017) . Prevalence of loneliness and associated factors among Iranian College students during 2015. J Arch Mil Med.;5(1):1–5. [Google Scholar]
- Anubha Dhal, MA, Sangeeta Bhatia, PhD, Vidhi Sharma, MA, Priyanka Gupta, BA (2007) Adolescent Self-Esteem, Attachment and Loneliness; J. Indian Assoc. Child Adolesc. Ment. Health; 3(3): 61.
- Bhardwaj, M. Ashok S. (2015). Mobile Phone Addiction and Loneliness among Teenagers. International Journal of Indian Psychology, 2 (3),DOI:10.25215/0203.062,DIP:18.01.062/20150203.
- Diehl K, Jansen C, Ishchanova K, Hilger-Kolb J. Loneliness at Universities: Determinants of Emotional and Social Loneliness among S@tudents. Int J Environ Res Public Health. 2018;15(9):1865. doi: 10.3390/ijerph15091865. [DOI] [PMC free article] [PubMed] [Google Scholar].
- English T, Davis J, Wei M, Gross JJ. Homesickness and adjustment across the first year of college: A longitudinal study. Emotion. 2017;17(1):1–5. doi: 10.1037/emo0000235. [DOI] [PMC free article] [PubMed] [Google Scholarfects
- of loKýlýnç G, Aylaz R, Güneþ G, Harmancý P(. 2020)The relationship between depression and loneliness levels of the students at the faculty of health sciences and the factors affecting them. care Psychiatr Ca Care ;56(2):431–8. doi: 10.1111/ppc.12452. [DOI] [PubMed] [Google Scholar] .
- Luan. M. (2022), Adverse Effects of Loneliness on Students ,BCP Social Sciences & Humanities ECSS 2022 ,Volume 19,(2022),465.
- Manoj Shettar, Ravichandra Karkal, Anil Kakunje, Rohan Dilip Mendonsa, VV MohanChandran (,2017.), Retrievedfrom https://journals.sagepub.com/doi/abs/10.1177/0020764017705895 24.
- Ousman, Youssouf & Nazir, Thseen. (2023). Loneliness among University students is a growing concern. Journal of Family, Counseling and Education. 8. 10.32568/jfce.1312556.
- Ozdemir U, Tuncay T. Correlates loneliness among university students. Child Adolesc Psychiatry Ment Health. 2008;2(1):29. doi: 10.1186/1753-2000-2-29. [DOI] [PMC free article] [PubMed] [Google Scholar]
- Press Trust of India. (2017, April 6). One in four Indian children in the 13-15 age group suffers from depression: WHO. Retrieved from https://www.business-standard.com/article/current-affairs/one-in-four-indian-children-in-13-15-age-group-suffers-from-depression-who-117040601158_1.html
- Smith. S.(2024) "The Impacts of Loneliness on Students and Teachers in English Language Teaching Contexts: Causes, Effects, and Coping Strategies ", American Journal of Humanities and Social Sciences Research (AJHSSR) ,e -ISSN :2378-703X, Volume-08, Issue-08, pp-68-75 www.ajhssr.com.

- Stickley,A.,Koyanagi A. Koposov, R., Schwab-Stone M. ,Ruchkin ,V(2014). 'Loneliness and health risk behaviours among Russian and U.S. adolescents: cross-sectional study'. BMC Public Health.;14:366. doi: 10.1186/1471-2458-14-366. [DOI] [PMC free article] [PubMed] [Google Scholar].
- T K. Pandit (2020). A review of loneliness in Indian youth.International Journal of Indian Psychology, 8(2), 406-413. DIP:18.01.0.
- Vasudeva, R. (2019, May 13). How loneliness is affecting the Indian youth. Retrieved from-https://www.thehindu.com/society/how-loneliness-is-affecting-the-indian- youth/article -27115615

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

विष्णु प्रभाकर की कहानियों में चित्रित आर्थिक अभाव

Dr. Sanu Thomas
Assistant Professor, Department of Hindi
Catholicate College, Pathanamthitta
Kerala -:689645
Email: sanubiju@gmail.com
Phone: 9656086017

जहाँ प्राचीन युग मावन केन्द्रित मूल्यों पर आधारित होता है,वहाँ आधुनिक युग अर्थ केन्द्रित मूल्यों पर विश्वास रखता है। अर्थ संबंधी मान्यताओं ने हमारे संपूर्ण सामाजिकता में तरह-तरह की मुसीबतें पैदा कर दीं।समाज के अन्तर्गत आर्थिक वैषम्य संबन्धी अनेक समस्याएँ विद्यमान होती हैं। गरीबी, अकाल आदि आर्थिक विसंगतियों से उत्पन्न मुख्य समस्याएँ हैं। श्री विष्णु प्रभाकर एक मध्यवर्गीय कायस्थ परिवार के सदस्य होने के कारण उनके कहानी साहित्य में गरीबी, अकाल आदि से संबन्धित विसंगतियों का वर्णन हम देख सकते हैं। 1943 में पडे बंगाल के अकाल ने देश के समस्त बुद्धि जीवियों और लेखकों को दहला दिया था। विष्णु प्रभाकर की संवेदनशील चेतना पर भी इस घटना का गहरा असर पड़ा था। उनकी 'भूख और कुलीनता', 'लॉपपोस्ट के नीचे लाश', 'मुक्ति', 'माँ की ममता', 'मुक्ति की राह', 'एक माँ एक देश', 'अन्तर्चेतना', 'द्वन्द्व', 'सुनो ओ माँ', 'भूख' आदि कहानियाँ अर्थ संबन्धी अभाव एवं उसके फलस्वरूप उत्पन्न गरीबी, अकाल आदि का वर्णन करती हैं। अकाल में लाखो लोग साहूकारों, पूँजीपतियों की मुनाफाखोरी और सरकारी तन्त्र में व्याप्त भ्रष्टाचार के कारण मौत के शिकार हो चुके थे।

'लॉपपोस्ट के नीचे लाश' गरीबी, अकाल आदि से संकटग्रस्त अवस्था में पड़े एक परिवार की कहानी है। जब लेखक शामको हवाखोरी के लिए चलते हैं तो उन्होंने लॉपपोस्ट के नीचे पड़ी एक युवती की लाश देखी। "यह लाश एक ऐसे परिवार की है, जिन्हें खाने को कुछ भी नहीं मिल रहा है। एक तो गरीबी, ऊपर से अकाल।"[1] युवती की लाश लोगों में उत्सुकता जमाती है, लेकिन युवती के पिता ने समाज के भय से अपनी बेटी की लाश को पहचानने से इनकार कर दिया। बाद में उस वृद्ध ने अपने मित्र से कहा - "यह मेरी बेटी है। परसों इसे मैंने भूख से बिलबिलाते अपने परिचार की रक्षा के लिए एक ट्रक ड्राइवर के हाथ बेच दिया था।"[2] इस प्रकार भूख एवं गरीबी मानव को जिस प्रकार पशु बनाती है, उसका हृदय भेदी चित्रण इस कहानी में मिलता है।

'एक माँ एक देश' कहानी अकाल एवं गरीबी से संत्रस्त एक परिवार की कहानी है। कहानी के प्रारंभ में ही दो बच्चे तीन वषीय लावण्य और दुधमुँहे चित्तरंजन– 'भूख लगी है' कहकर रोने लगे थे। उस समय बच्चों की माँ मृणाल ने जो कुछ कहा, वह अकाल एवं उसके फलस्वरूप उत्पन्न गरीबी का भयानक दृश्य उभारता है। यह गरीबी मनुष्य को आत्महत्या की नोक तक पहुँचाती है। मृणाल ने कहा - "राक्षसों ने जान खा डाली। मौत भी तो नहीं आती इन्हें। कुएँ-से पेट में सब समा जाता है, कभी आग नहीं बुझती। मुझे क्यों नहीं खा डालते, ना बाबा! ऐसी भी राक्षसी भूख क्या? अभागे भाग्य भी ऐसा लेकर आए हैं कि देश में अन्न का दाना तक नहीं मिल रहा है।"[3] अकाल के पहले की उर्वर भूमि जो खाघ्य साधन एवं पेड पौधों

से समाया गया था आज वह श्मशान भूमि के समान बन गयी है। कहानी में मृणाल ने इसलिए ऐसा कहा कि "अकाल ने सोने के देश को राख बना दिया।"[4] सभी लोग गहरे अवसाद एवं गहरी भूख से भरे पड़े थे। भूख एवं गरीबी इतना तीव्र हो जाती है कि "धरती लाशों से पटती जा रही है। जो जिंदा हैं, वे शहर की ओर भागे जा रहे हैं।"[5] इस प्रकार भूख सहते-सहते लोग कंकाल के समान बन जाते हैं और अपनी जन्मभूमि को छोडकर शहर जाने के लिए मज़बूर हो जाते हैं। धीरे-धीरे तरह-तरह के अनैतिक कार्यकलाप की रास्ता खोलती भी जाती है।

'माँ की ममता' कहानी अकाल की भीषणता को व्यक्त करती है। कहानी का आरंभ ही अकाल की भीषणता से होता है- "उस साल अकाल पडा था। आषाढ़, सावन, भाद्रपद और असोज- वर्षा के ये चारों महीने सूमदाता की तरह आए और चले गए। कंगाल भिखारिन की तरह माँ पृथ्वी रोती और बिलखती रह गई। उसके बच्चे भूख से छटपटाते, दाने-दाने के लिए तरसते और पैसे के लिए जने-जने के आगे हाथ पसारते थे।"[6] अकाल का वर्णन कहानी में और एक भाग में इस प्रकार शब्दबद्ध हो उठा है कि "सचमुच, वह भयंकर अकाल था, बडे-बूढे कहने लगे कि अपनी याद में हमने ऐसा अकाल नहीं देखा था ...... बूढों ने भूख के कारण खाट पकड़ी। कुहराम मच गया। विधवाएँ बिलख रही थी। बच्चेवालियों की गोदें खाली हो गई।"[7] नायक मनोहर भी इसी अकाल एवं भूख से इतना अधिक फंस गया कि उसकी दशा करुणाजनक हो गयी। भूख में तड़पते मनोहर एवं उसके परिवारवालों का वर्णन पाठकों को द्रवित करनेवाला है- "सात दिनों से मुँह में एक दाना भी नहीं गया था। बूढी माँ ने तड़प-तडपकर जान दे दी। पत्नी बिलख रही थी और बच्चा-पाँच साल का निर्दोष बच्चा-भूख के मारे तिलमिला रहा था। 'काल' के डर से उसकी नींद भी भाग गई थी।"[8] जहाँ अकाल है वहाँ गरीबी ज़रूर होंगे। मनोहर का गाँव भी इसका अपवाद नहीं था। "अकाल की सगी बहन गरीबी अब उस गाँव में राज कर रही थी।"[9] इस अकाल एवं गरीबी से बचने के लिए मनोहर एवं उसकी पत्नी मनभरी ने अपने स्वदेश को छोडकर बनारस चले जाने का निश्चय ले लिया।

'भूख और कुलीनता' कहानी में वर्णित बंगभूमि अकाल के कारण अपने प्रौढ सौंदर्य एवं संपत्ति से वंचित दिखाई पडती है। इस अकाल का चित्रण अत्यन्त कारुणिक एवं हृदयद्रावक है। "शस्य श्यामल बंगभूमि पर मौत के बादल मंडरा रहे हैं। विश्व सुंदरी नगरी भिखमंगों और भूखों के आर्तनाद से गूंज उठी है। आकाश के ढिड्डी दल की तरह कंकाल सडकों पर छा गये हैं। भविष्य के नागरिक कौडी के मोल बिक रहे हैं। .... मनुष्य, मनुष्य के सामने ही गिद्ध और चीलों का भोजन बन जाता है।"[10] यही अकाल मानव को भीख एवं दान माँगने के लिए भी विविश करता है। यह कहानी इस कारण उल्लेखनीय है कि इसमें उन सेठों पर आक्रोश व्यक्त किया है जो इस अकाल के मुख्य कर्णधार है किन्तु प्रत्यक्ष रूप से अपनी दया-शीलता का नाटक भी कर रहे थे। कहानीकार ने यहाँ व्यंग्य के सहारे कहानी को अतिरिक्त धार दी है।

'आकाश की छाया' कहानी में भी गरीबी का वर्णन है। नायिका सरला ने आनन्द के स्कूल में अध्यापिका बनने के लिए आवेदन पत्र दे दिया। लेकिन रिश्वत देने की शक्ति न होने के कारण, सभी योग्यता होते हुए भी उसका नाम अंतिम सूची में न आया। लेखक ने कहानी में सरला के घर की अभावपूर्ण गरीब अवस्था का वर्णन ऐसा किया कि—"कोई कमरा नहीं, परदा तक नहीं... बीच में एक घाट बिछी है।"[11] इस तरह की गरीबी के वातावरण में सरला को नौकरी की सख्त ज़रूरत थी, लेकिन आर्थिक अभाव एवं गरीबी उनके सामने एक पर्वत सा खडा है।

'पुल टूटने से पहले' कहानी भी आर्थिक अभाव एवं उससे बचने के लिए मानव मन की आतुरता का भी चित्रण करती है। यह कहानी मध्यवगीय लेखक की आर्थिक दयनीयता का प्रामाणिक और गहरी संवेदना से युक्त दस्तावेज है। "आजकल महँगाई के कारण इन्सान की हालत पशुओं से भी गई गुज़री हो गई है। इस कहानी का नायक अपने दोस्त को अपनी आप-बीती सुना रहा है कि किस तरह वह महँगाई के जमाने में अपने परिवार का गुजारा कर रहा है।"[12] नायक एक दिन सडक पर पड़ी डबलरोटी घर में लाया। उसे देखकर घरवाले खुश हो गये क्योंकि वे दिनों से भूख से मरते जा रहे थे। इस प्रकार भूख के आगे कोई सवाल मायने नहीं रखता। एक दिन नायक अपने मित्र की मों की शवयात्रा में चले। शव पर मेवा और पैसा डालते देखकर लोगों का भीड उसे लेने के लिए इस तरह उमड आया जिस तरह गुड के आसपास की मुक्खियाँ। भीड़ कम होने पर लेखक भी मेवा उठाकर चला गया। इस प्रकार इस कहानी में लेखक ने महँगाई के कारण किस तरह आम जनता

को पेट का जुगाड करने के लिए सडक पर पड़ी हुई डबलरोटी और शव पर उछाले गये मेवे को उठाना पड़ता है, इस दयनीय स्थिति का खुलासा किया है।

निष्कर्षतः कह सकते हैं कि विष्णु प्रभाकर की कहानियों में अकालजन्य भूख, विवशता और गहरी अमानवीय व्यवहार की वह तडप जगानेवाली संवेदना गहरी है, जो वास्तविक अनुभव से ही प्राप्त हो सकती थी, यहाँ लेखक की अपने समय और समाज के प्रति प्रतिबद्धता श्लाघनीय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ. सुमा रोडनवर : विष्णु प्रभाकर के कथा साहित्य में सामाजिकता सं. 2005, पृ. 90
2. विष्णु प्रभाकर : इक्यावन कहानियाँ, सं. 1983, पृ. 325
3. विष्णु प्रभाकर : अभाव कहानी संग्रह (एक मॉ-एक देश कहानी), सं. 2002, पृ. 96
4. वही, पृ. 99
5. वही।
6. विष्णु प्रभाकर : मुरब्बी कहानी संग्रह (माँ की ममता कहानी), सं. 2002, पृ. 23
7. वही।
8. वही, पृ.24
9. वही, पृ.27
10. विष्णु प्रभाकर : एक और कुंति कहानी संग्रह (भूख और कुलीनता कहानी), सं. 2002, पृ. 113
11. विष्णु प्रभाकर : मेरी लोकप्रिय कहानियाँ (आकाश की छाया में कहानी), सं.1981, पृ. 115
12. डॉ. सुमा रोडनवर : विष्णु प्रभाकर के कथा साहित्य में सामाजिकता सं. 2005, पृ. 78

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

बाल मन, साहित्य का संसार

Dr. Rosy P. Varghese
Assistant Professor, Department of Hindi
Catholicate College, Pathanamthitta
Kerala -689645
dr.rosyroy@gmail.com
Mob. 9447802108

बाल साहित्य मुख्यतः बच्चों का ही साहित्य है। शिक्षा बाल साहित्य का सहवती और अनुवती घटक है। इसी तरह की एक रचना है 'पंचतंत्र'। शिशुओं के लिए जो साहित्य लिखा जाए, उसकी विषयवस्तु काल्पनिक हो सकती है। बाल साहित्य के साथ ही किशोरों के साहित्य में भी संघर्षों से जूझने की सामर्थ्य विकसित करने की क्षमता होनी चाहिए। साहित्य समाज का दर्पण कहा जाता है। इसलिए बाल साहित्य भी समाज का दर्पण है। सुन्दर, सुगन्धित फूलों का गुलदस्ता अथवा स्वादिष्ट मिठाइयों से भरी पूरी थाली-बाल-साहित्य के लिए दोनों शीर्षकों का प्रयोग किया जा सकता है। बाल साहित्य ऐसा हो जो बच्चों के स्वाभाविक विकास में पूर्णतः सहायक सिद्ध हो सके। इसलिए बाल साहित्य को इतना सुबोध बनाना होगा कि बच्चे को उसे समझने के लिए किसी की सहायता की आवश्यकता न पड़े।

बालक राष्ट्र का भविष्य है। साहित्य शिक्षा का मेरुदण्ड है। बाल-साहित्य की पहली अनिवार्य शर्त है कि वह बालकों की रूचि, योग्यता एवं प्रतिभा को ध्यान में रखकर लिखा जाए। बाल-साहित्य ऐसा हो जिसे पढ़कर बालक स्वयं प्रेरित हो। बालक पुस्तकों में सबसे ज्यादा चित्रकथाओं को ही चाहते हैं क्योंकि उसमें अंकित चित्रों से वे प्रभावित होते हैं। इस प्रकार पुस्तकों को वे चाहने लगते हैं। १४वीं सदी में अमीर खुसरो द्वारा रचित कविताएँ बड़ों से भी ज्यादा बच्चों के बीच में ख्याति प्राप्त की। १९वीं सदी में राजा शिवप्रसाद द्वारा बाल साहित्य में अनगिनत पुस्तकों का प्रकाशन हो चुका है। किसी भी देश का बाल-साहित्य उसकी सांस्कृतिक प्रगति का एक अंग है। छोटे कहानियों में बड़े संदेश निहित होते हैं। सद्गुण व्यक्ति को धनी बनाते हैं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा रचित 'अंधेर नगरी' नामक नाटक बच्चों के लिए पढ़ने योग्य थी। वे अंग्रेजी में लिखित कई पुस्तकों को हिन्दी में अनुवाद किए हैं। बीसवीं शती के आरम्भ में ही कई प्रसिद्ध लेखक बच्चों के लिए लिखने लगे। इसी समय बच्चों की पत्रिकाएँ भी प्रकाशित होने लगी। बच्चों की पहली बाल पत्रिका 'बाल दर्पण' का प्रकाशन सन् १८८२ में हुआ। अन्य पत्रिकाएँ - १९१४ में प्रकाशित 'विद्यार्थी', १९१५ में प्रकाशित 'शिशु', १९१७ में प्रकाशित 'बाल सखा', १९२६ में पटना से प्रकाशित 'बालक' आदि है। १९३८ में पटना से प्रकाशित पत्रिका 'किशोर' के विषय में डॉ. राष्ट्रबंधु ने लिखा है- "किशोरों के लिए इस पत्र के उपरान्त एक बड़ी कमी आज भी महसूस की जा रही है। हिन्दी में बालकों और युवकों की आयु के बीच की अवस्था 'टीन एज' की अत्यन्त महत्वपूर्ण परिस्थितियों की ओर देश के कर्णधारों का ध्यान ही नहीं गया है।'[1] भारतेन्दु युग में 'बाल दर्पण' से प्रारम्भ होनेवाली हिन्दी बाल-पत्रकारिता कालान्तर में खूब फली-फूली। द्विवेदी युग में 'चुन्नू-मुन्नू' का प्रकाशन हुआ।

किशोरिलाल गोस्वामी की कहानी 'इंदुमती' सरस्वती पत्रिका में सन् १९०० ई. में प्रकाशित हुई थी। 'एक टोकरी भर

मिट्टी' की कथावस्तु में सामाजिक विसंगति और बालमनोविज्ञान का अत्यन्त मार्मिक चित्रण है। इस कहानी में केवल तीन पात्र ही है। एक पात्र जमींदार, दूसरे पात्र बुढ़िया पर तनिक भी तरस नहीं खाता और उसकी झोपड़ी पर कब्जा करा लेता है। तो पाँच वर्षीय पोती का कहना है कि "अपने घर चल। वहीं रोटी खाऊँगी।"[2] हिन्दी की यह पहली मौलिक कहानी एक अच्छी बाल कहानी है।

प्रेमचन्द की कहानियाँ 'ईदगाह', 'गुल्ली डंडा', 'जंगल की कहानियाँ' आदि बाल साहित्य की धरोहर है। पूर्ण रूप से साक्षरता प्राप्त केरल में परम्परागत साहित्य कथित रूप में था। के. पी. केशवमेनोन द्वारा रचित 'विलाती विशेषम' नामक यात्रा विवरण खासकर बच्चों के लिए है। बच्चों के साहित्य में ज्यादातर भारतीय भाषाओं या विदेशी भाषाओं से अनूदित हैं। बीसवीं सदी के प्रारम्भ में जब बच्चों के लिए पाठ्यपुस्तकें तैयार करने पर विशेष मेहनत की जा रही थी तब यह उभरकर सामने आयी कि विशुद्ध रूप से बच्चों के लिए रचे गये बाल-साहित्य का अभाव है। इस प्रकार साहित्यकारों ने स्वतंत्र बाल साहित्य लेखन शुरु की। रामनरेश त्रिपाठी ने बच्चों के लिए रोचक कहानियाँ लिखकर गद्य साहित्य का मार्ग भी प्रशस्त किया। इसलिए त्रिपाठी जी को हिन्दी का प्रथम सफल बाल गद्यकार माना जा सकता है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के विशेष प्रयत्नों से प्रकाशित बाल दर्पण के प्रकाशन के उपरान्त हस्तलिखित पत्रों की संख्या में काफी वृद्धि दृष्टिगोचर हुई। "हस्तलिखित पत्रों का प्रयास इस दृष्टि से महत्वपूर्ण कहा जा सकता है कि इससे बच्चों की लेखन प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलता है।"[3] बाल कहानी बाल-साहित्य की सर्वाधिक लोकप्रिय विधा है। आज बाल कहानी निरंतर अपने नए रंग-रूप और कलेवर में विकास की सीढ़ियाँ चढ़ती जा रही है।

बच्चों के लिए सबसे हृदयग्राही विधा कहानी है। बच्चों की कहानियों की शुरुआत दादी-नानी द्वारा सुनाई जानेवाली कहानियों से होती है। इन कहानियों में बच्चों को कुछ न कुछ सिखाने की क्षमता निहित होती है। "किस्सागोई की यह परम्परा आज भी जीवित है, लेकिन घरों के सिमटते आकारों ने दादी-नानी की महत्ता को बहुत कम कर दिया है।"[4] हिन्दी विश्व की एक ऐसी भाषा है जिसके पास 'पंचतंत्र', 'कथासरित्सागर', 'जातक कथाएँ', 'सिंहासन बत्तीसी' और 'वेताल पच्चीसी' जैसी अक्षयनिधियाँ है। बच्चों ने इन्हें सरल भाषा में सुना। प्रारम्भिक उपलब्धियों से लेकर वर्तमान स्वरूप तक पहुँचने की हिन्दी बाल कहानी की विकास यात्रा बहुत ही दिलचस्प है। उस समय में प्रचलित अकबर-बीरबल, गोनू झा, बुलाकीराम नाई, लालबुझक्कड़ तथा तेनालीराम के किस्सों का अलग ही अन्दाज था।

द्विवेदीयुग में सबसे अधिक पौराणिक कहानियाँ प्रस्तुत की गई। इस प्रकार उन्होंने स्वयं महाभारत और रामायण की कहानियाँ लिखी। लेकिन उनकी पांडित्यपूर्ण भाषा पूरी तरह से बच्चों के अनुरूप नहीं बन पाई। मुंशी प्रेमचन्द्र द्वारा लिखित कहानियों की मौलिकता ने बाल साहित्य को नई दिशा दी। पं. श्रीराम शर्मा ने शिकार की कहानियाँ लिखी और जहूरबख्श ने मनोरंजक कहानियाँ। इन सभी कहानियों के दो ही मुख्य उद्देश्य थे- एक तो बच्चों का मनोरंजन और दूसरा उनका चरित्र निर्माण। राजा-रानी, भूत-प्रेत, परियाँ-जादूगर और पशु-पक्षी ही बच्चों की कहानियों के प्रमुख पात्र बने रहे। १९४९ में हरिशंकर परसाई की एक कहानी 'मुन्नु की स्वतंत्रता' प्रकाशित हुई। बाल पत्रिकाओं - 'बालसखा' और 'पराग' - में आधुनिक बोध प्रकट हुआ है। साहसिक कहानियाँ मनोरंजन तो करती ही है साथ ही बच्चों में विषम से विषम परिस्थितियों से जूझने की क्षमता भी उत्पन्न करती है।

मानव का मानव से, परिवेश से और प्रकृति से रागात्मक जुड़ाव ही कहानी की आधार शिला है। बच्चे कहानियों में विशेष रुचि लेते हैं। डॉ. बालशौरि रेड्डी ने लिखा है - 'क्यों और कैसे का समाधान ही कहानी की बुनियाद है।' एक लम्बा समय बीत जाने के बाद भी 'पंचतंत्र' और 'ईसप की कथाएँ' शिशु चाव से पढ़ते सुनते हैं। 'चंपक' भी शिशुओं में लोकप्रिय है। अंतर-राष्ट्रीय बाल वर्ष १९७९ में प्रकाशित 'बच्चों की सौ कहानियाँ' (संपादक हरिकृष्ण देवसरे) उल्लेखनीय संकलन है। डॉ. राष्ट्रबंधु की कहानी 'फटी शर्ट' में परिवार की स्थिति में बाल-कर्तव्य और सहयोग का रोचक वर्णन है। मनोहर वर्मा की 'खिलौनों का अस्पताल' में शिशुओं के टूटे-फूटे खिलौनों का इलाज मौलिक कल्पना का चमत्कार है। वर्तमान समय में पत्र-पत्रिकाओं में बच्चों की रचनाएँ प्रकाशित होती रहती है। बाल-कहानी में परिकथाएँ भी शामिल है।

नैतिक और धार्मिक संदर्भों तथा लोकजीवन से ली गई कथाओं के साथ परिकथाओं का प्रभाव आज तक बाल साहित्य पर बना हुआ है। बालसाहित्य का आधार हमारा लोकसाहित्य है जो परिकथाओं से होकर गुजरते हुए आधुनिक बाल केन्द्रित रचनाओं तक आ पहुँचा है। इस प्रकार बालसाहित्य आगे बढ़ते - बढ़ते अपने क्षेत्र को बढ़ाना चाहता है। इसलिए बाल साहित्य आज बच्चों के जिन्दगी का एक अंश बन चुका है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. हिन्दी पत्रकारिताः विविध आयामः पृ. 322
2. डॉ. नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. 514
3. डॉ. सुरेन्द्र विक्रम, भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम, पृ. 265
4. हाशिये पर खड़ी दादी; ब्रहमानन्द (दैनिक नई दुनिया-14 नवम्बर 1999)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

‘वत्सला’ खंड काव्य में यशोदा के मातृत्व की अभिव्यक्ति

मोनिका
पीएच डी शोधार्थी
हिन्दी-विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़
पिन कोड-160014
मोबाइल नम्बर-6280624218

आधुनिक काल में कृष्ण काव्य की परंपरा को आगे बढ़ाने वाले प्रमुख कवियों में भारतेंदु हरिश्चन्द्र, राधाचरण गोस्वामी, अम्बिकादत्त व्यास, मैथिलीशरण गुप्त तथा अयोध्या सिंह उपाध्याय ‘हरिऔध’ का विशेष योगदान रहा है। इन रचनाकारों ने अपनी कृतियों के माध्यम से कृष्ण भक्ति के विविध रूपों और भावों को प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त किया है। इसी श्रृंखला में लक्ष्मीनारायण शर्मा का नाम भी उल्लेखनीय है, जिन्होंने कृष्ण काव्यधारा को समृद्ध बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 1986 में उनके द्वारा लिखी गई ‘वत्सला’ कृति एक उत्कृष्ट खंडकाव्य है, जिसमें माता यशोदा, श्रीकृष्ण और बाबा नंद के संबंधों के माध्यम से वात्सल्य और ममता का अत्यंत भावपूर्ण एवं मार्मिक चित्रण किया गया है। ‘वत्सला’ में यशोदा का मातृत्व केवल एक धार्मिक प्रसंग नहीं रह जाता, बल्कि वह ममता के सशक्त और हृदयस्पर्शी चित्रण के रूप में सामने आता है।

ममता मनुष्य के हृदय की सबसे कोमल और स्वाभाविक भावना है, जो विशेष रूप से मातृत्व में अपने पूर्ण रूप में अभिव्यक्त होती है। माता यशोदा का मातृत्व ममता का सजीव और हृदयस्पर्शी उदाहरण प्रस्तुत करता है। कभी वे कृष्ण दुलारती हैं, तो कभी उनकी चिंता में व्याकुल हो उठती हैं; यही ममता उनके मातृत्व को जीवंत और मानवीय बनाती है।

प्रस्तुत कविता का आरम्भ माता यशोदा और बाबा नंद के बीच होने वाले संवाद से होती है। श्रीकृष्ण गोकुल छोड़कर मथुरा चले गए हैं और वहाँ के राजा के रूप में अपने दायित्वों में व्यस्त हो गए हैं। राजकाज की व्यस्तता के कारण वे अपने माता-पिता से मिलने भी नहीं आ पाए हैं। ऐसे में बाबा नंद उनसे मिलने मथुरा जाने का निश्चय करते हैं। पुत्र के गोकुल से दूर चले जाने पर माता यशोदा का हृदय दुःख और चिंता से भर उठा है, लेकिन साथ ही वह इस बात से अत्यंत प्रसन्न और गर्वित भी हैं कि उनका पुत्र अब मथुरा का राजा बन गया है। अपने इन्हीं मिश्रित भावों को व्यक्त करते हुए वे बाबा नंद से कहती हैं कि उनका लाल अब एक महान स्थान पर पहुँच गया है और वे उस पर गर्व महसूस करती हैं।

“सुना है आपने
हमारा बेटा मथुरा का राजा हो गया
मेरा बेटा राजा हो गया।”[1]

बाबा नंद माता यशोदा को यह सच्चाई बताते हैं कि कृष्ण उनके गर्भ से उत्पन्न नहीं हुए हैं, इसलिए वे उनके वास्तविक पुत्र नहीं हैं। वे यशोदा से कहते हैं कि तुम उसके राजा बनने पर गर्व कर रही हो, परंतु जब तुमने उसे जन्म ही नहीं दिया, तो वह तुम्हारा पुत्र कैसे हुआ? वे यह भी तर्क देते हैं कि राजा तो प्रायः किसी बड़े राजवंश में जन्म लेते हैं, साधारण लोगों के घर नहीं; इसलिए कृष्ण का हमारा पुत्र होना संभव नहीं है। नंद के अनुसार यशोदा को केवल यह भ्रम है कि कृष्ण उनका

बेटा है। हालाँकि नंद यह जानते हैं कि कृष्ण का जन्म देवकी की कोख से हुआ था, पर यशोदा का ममतामय हृदय इस सत्य को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं होता। उनके लिए कृष्ण वही बालक है, जिसे उन्होंने अपनी गोद में पाला-पोसा, दुलारा और अपने स्नेह से सींचा है। वे दृढ़ता से कृष्ण को अपना ही पुत्र मानती हैं और नंद के तर्कों का विरोध करते हुए कहती हैं कि कृष्ण आज जो कुछ भी है, वह उनके स्नेह और पालन-पोषण का परिणाम है। उन्होंने ही उसे अपनी गोद में खिलाया, अपने प्रेम से बड़ा किया। इसलिए वह उन्हीं का पुत्र है, चाहे जन्म किसी और ने क्यों न दिया हो। माता यशोदा नन्द से कह रही है कि तुम्हीं ने सोते हुए से जगाकर कृष्ण को मुझे सौंपा था और अब तुम ही कह रहे हो कि वह मेरा पुत्र नहीं है क्योंकि देवकी और वासुदेव, मधुपुरी के लोग ऐसा कहते हैं कि मैंने कृष्ण को जन्म नहीं दिया। मैं तो एक भाग्यशाली माँ हूँ जिसने बिना प्रसव वेदना के कृष्ण रुपी रत्न को जन्म दिया है। क्या यह सत्य कृष्ण के उसका पुत्र होने के लिए काफी नहीं है? वह कृष्ण के बचपन की स्मृतियाँ स्मरण करते हुए कहती है कि उसने कृष्ण की कोमल नये पत्तों के समान देह को कंटीली छड़ी पकड़कर अपने जिन हाथों से प्रहार किया था,खुरदरी रस्सी से उसे बाँधा था उन हाथों में अब रक्त की लकीरें छलछला रहीं हैं। यह रक्त की लकीरें उसके पश्चाताप की लकीरें हैं। क्या पश्चाताप की इन लकीरों का संवाद भी झूठा है? इन स्मृतियों के माध्यम से कवि ने माता यशोदा के पुत्र विरह में व्याकुल होने की व्यथा को चित्रित किया है। एक पुत्र के किसी दूसरे स्थान पर जाकर माता को भूल जाने का जो दुःख एक माँ को होता हैं उसी दुःख की स्पष्ट झलक माता यशोदा की आँखों में दिखाई दे रही है परन्तु माता यशोदा के इस व्याकुल मन पर बाबा नंद प्रतिहार करते हुए कहते हैं कि तुम केवल रक्त और दूध की बातें ही करोगी क्योंकि तुम एक माँ हो परन्तु तुम्हें यह जानकर बुरा लगेगा कि दूध भी एक व्यवसाय है और रक्त भी एक व्यावसायिक व्यवस्था है। बाबा नन्द के मुख से ऐसी निर्मम, संवेदनहीन बातों को सुनकर माता यशोदा की ममता को आघात लगता है वह भरे हुए नेत्रों से उन्हें देखती हुई कहतीं हैं कि–

"भला सोचो तो
तुम्हारा यह छोटा सा गाँव
इस गाँव की व्यवस्था के कारण
तुम मेरी ममता को नहीं जान पाए।
वह हमारा नन्हा कान्हा
राज-भार से दबा हुआ
तुम्हारे मान को कैसे जान पाएगा?"[2]

यह सुनकर बाबा नंद माता यशोदा से कहते हैं कि तुम इस बात को मान लो कि तुम्हारा पुत्र भी मथुरा के राजसिंहासन पर बैठकर एक व्यवस्थापक बन गया है वह अब कोई दूध पीता बालक नहीं रहा है। तुम यह तो मानती हो कि तुम एक ऐसी अभागिनी हो जिसका बेटा राजा बनकर राजसिंहासन को सँभालने में इतना व्यस्त हो गया कि तुम्हें अर्थात अपनी माँ को ही भूल गया परन्तु तुम्हारी भोली ममता इस सत्य को स्वीकार करने में असमर्थ है। माता यशोदा बाबा नन्द की निष्ठुरता भरी बातों पर व्यंग्य करते हुए कहती है–

"आपने मेरे उस नीलशावक की
अतल साँवली छायाओं में नहीं झाँका
--विदा के क्षणों में
उन नीलकमल कटोरों में
कितना पानी भर आया था।"[3]

एक माँ के लिए उसकी संतान ही सर्वोपरि होती है; वह अपनी ममता से बढ़कर किसी अन्य संबंध को महत्व नहीं देती, चाहे वह उसका पति ही क्यों न हो। माँ का स्नेह अपनी संतान के प्रति हर रिश्ते से अधिक प्रबल और निःस्वार्थ होता है। लक्ष्मीनारायण शर्मा ने 'वत्सला' कृति में यशोदा की इसी ममत्व भावना का अत्यंत मार्मिक चित्रण किया है। यशोदा बाबा

नंद की कठोर और तर्कपूर्ण बातों को सहन नहीं कर पातीं। उनकी ममता और पुत्र-स्नेह इतना प्रबल हो उठता है कि वे अपने ही पति में कृष्ण के पिता का स्वरूप देख पाने में असमर्थ हो जाती हैं। नंद की बातें उन्हें कठोर, अमानवीय और भावनाशून्य प्रतीत होती हैं। अपनी इसी पीड़ा और ममता से व्याकुल होकर वे बाबा नंद से कहती हैं कि उनके लिए कृष्ण केवल जन्म का संबंध नहीं, बल्कि हृदय का अटूट बंधन है—जिसे कोई भी तर्क या सत्य बदल नहीं सकता।

"कैसी है तुम्हारे इस संसार की रचना
जिसमें प्रत्येक भावना को
किसी न किसी व्यवस्था से सम्बद्ध मान लिया जाता है?
कैसी है तुम्हारी यह व्यवस्था
जो माँ की ममता को भी एक व्यवस्था मानती है।"[4]

माता यशोदा को नन्द में एक अभिमानी पुरुष नज़र आ रहा है जो न तो कृष्ण का पिता है और न ही—उसका पति बल्कि वह तो गोकुल का राजा है। वह एक ऐसा सम्बन्धहीन पुरुष बन गया है जो अपने पुत्र के प्रति भी एक राजा की तरह दृष्टिकोण रखता है।वह बाबा नन्द के कठोर शब्दों के पीछे छिपे पुत्र स्नेह को देख नहीं पा रही हैद्य उसे आज समाज में पुरुष के पुरुषत्व का एहसास हो रहा है जिसके समक्ष नारी का अस्तित्त्व शून्य के बराबर समझ लिया जाता है। वह स्वयं को एक कमज़ोर नारी की भांति महसूस कर रही है जो पुत्र वियोग में लाचार और बेबस है। वह नंद से कहती है—

"ऐसी बात है तो
यौवन की देहरी के इस पार खड़ी
इस अभागी जननी का समाधान हो
कि उस सार्वभौम सार्वकालिक अस्तित्व सम्भवता में
क्या इसके अभिशप्त मातृत्व का भी
कोई सन्दर्भ है?"[5]

बाबा नंद से ऐसा कहकर माता यशोदा अत्यंत भावुक हो उठती हैं। उनके और नंद के बीच हुए इस संवाद में यशोदा के ममता-भरे तर्कों को सुनकर नंद भी कुछ क्षणों के लिए निरुत्तर हो जाते हैं। वास्तव में, जब कृष्ण मथुरा जा रहे थे, तब नंद ने भी उनकी आँखों में छलकते आँसुओं को देखा था और उनके मन की पीड़ा को महसूस किया था। फिर भी वे अपने पुत्र को उसके कर्तव्य से विचलित नहीं करना चाहते थे। उनके मन में यही विचार था कि यदि माता-पिता ही अत्यधिक भावुक हो जाएँ, तो पुत्र अपने दायित्वों का निर्वाह कैसे कर पाएगा? इसी कारण वे यशोदा के सामने कठोरता का आवरण ओढ़े बैठे रहे और अपने भीतर की विरह-पीड़ा को दबाए रखा, जिसे यशोदा समझ नहीं सकीं। अंततः जब नंद कृष्ण से मिलने के लिए मथुरा जाने को तैयार होते हैं, तब यशोदा के मन में यह आशंका घर कर लेती है कि कहीं वे वहाँ भी कृष्ण से कठोर और संबंधहीन बातें न कह बैठें। एक माँ अपने पुत्र को दुखी नहीं देख सकती। यह उसकी स्वाभाविक भावना है। कवि ने यशोदा की इसी मनोदशा का अत्यंत मार्मिक चित्रण किया है। भले ही कृष्ण अब मथुरा के राजा बन गए हों, पर यशोदा की दृष्टि में वे अभी भी वही कोमल हृदय वाला बालक हैं, जिसे जरा सी पीड़ा भी उन्हें अंदर तक व्यथित कर देती है। यही कारण है कि वे नंद को कृष्ण से कठोर व्यवहार करने से रोकना चाहती हैं और आँसू भरी आँखों से उनके माध्यम से कृष्ण के लिए अपना स्नेहिल संदेश भेजती हैं।

"कहना
उसकी माँ बूढी हो गयी है
उसकी प्रतीक्षा में
जर्जर देह से दही बिलोती है प्रतिदिन
माखन लेकर प्रतीक्षा करती है रोज।"[6]

इन पंक्तियों में माता यशोदा की पुत्र से दूर होने की पीड़ा स्पष्ट झलकती है।एक माँ अपने पुत्र के दूर हो जाने पर रोज उसकी राह देखती है।यह सर्वविदित है कि कृष्ण माखनप्रिय है और बचपन में वह माखन चुराकर खाते थे।अब कृष्ण तो मथुरा जाकर राजा बन गए हैं परन्तु माता यशोदा आज भी उसी तरह दही बिलोते, माखन निकालते हुए उनकी राह देख रहीं हैं कि उनका पुत्र आकर माखन और दही खायेगा।वह यह संदेश कृष्ण तक पहुँचाना चाहती है ताकि कृष्ण जल्दी ही वापिस उनके पास लौट आए।

इस प्रकार लक्ष्मीनारायण शर्मा ने अपनी खंडकाव्य कृति 'वत्सला' में माता यशोदा की ममता को केंद्र में रखते हुए अत्यंत संवेदनशील और भावपूर्ण चित्रण किया है। यशोदा के माध्यम से उन्होंने मातृत्व की उस गहन ममता को उभारा है, जो अपने पुत्र के प्रति हर स्थिति में स्नेह, चिंता और आत्मीयता से भरी रहती है। उनकी ममता इतनी प्रबल है कि वह कृष्ण को केवल एक राजा के रूप में नहीं, बल्कि अपने कोमल बालक के रूप में ही देखती हैं, जिसके सुख-दुःख से उनका हृदय गहराई से जुड़ा हुआ है। यशोदा की इसी ममता के साथ बाबा नंद की कठोरता का विरोधाभास भी कवि ने प्रभावशाली रूप से प्रस्तुत किया है, जिससे उनकी भावनात्मक स्थिति और अधिक मार्मिक हो उठती है। यशोदा की ममता इतनी प्रबल है कि वह किसी भी तर्क या सत्य को स्वीकार करने की स्थिति में नहीं रहती, क्योंकि उसके लिए कृष्ण केवल उसका पुत्र और उसकी आत्मा का हिस्सा है। इस प्रकार कवि ने यशोदा की ममता के माध्यम से मातृत्व की गहराई, संवेदनशीलता और वात्सल्य को अत्यंत हृदयस्पर्शी रूप में चित्रित किया है। 'वत्सला' की यही विशेषता इसे एक श्रेष्ठ काव्य कृति बनाती है और इसके रचनाकार को एक संवेदनशील एवं भावप्रवण कवि के रूप में प्रतिष्ठित करती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ. ओमानंद : सारस्वत (सम्पादक), डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, ग्रन्थावली, रोहतक, शांति प्रकाशन, खंड-चार, पृष्ठ सं. -1381
2. वही, पृष्ठ सं.- 1384
3. वही, पृष्ठ सं.-1382-83
4. वही, पृष्ठ सं.-1385
5. वही, पृष्ठ सं.-1389
6. वही, पृष्ठ सं.-1400

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

ज़िंदगी : अनुभव, संघर्ष और सौन्दर्य का काव्य (मुकेश कुमार ऋषि वर्मा की कविता का एक अध्ययन)

Dr. Tikaram Sarthi "Hasmukh"
Lecturer , Govt. H.S.S. Churteli (Dabhara)
Dist-Sakti (Chhattisgarh)-495688
MO. N. 9755799446

सार (Abstract)

मुकेश कुमार ऋषि वर्मा की कविता “ज़िंदगी” जीवन के बहुआयामी अनुभवों, संघर्षों, पीड़ा और आशा को अभिव्यक्त करती है। यह कविता मानव-जीवन की उन स्थितियों का दर्पण है जहाँ व्यक्ति टूटता भी है, सँभलता भी है; गिरता भी है, उठता भी है। प्रस्तुत शोध आलेख में कविता के भाव, बिंब, भाषा, शिल्प, विषय-वस्तु तथा जीवन-दर्शन का विश्लेषण APA शैली के अनुसार किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि कवि ने जीवन को एक गतिशील, संघर्षपूर्ण किन्तु आशा-उन्मुख प्रक्रिया के रूप में चित्रित किया है।

कुंजी शब्द : जीवन-दर्शन, पीड़ा, संघर्ष, आशा, बिंब-योजना, संवेदना।

प्रस्तावना (Introduction)

हिंदी साहित्य में जीवन-केंद्रित कविताओं की परंपरा अत्यंत समृद्ध रही है। जीवन के संघर्ष, वेदना, आशा और मनोवैज्ञानिक आंदोलनों को कवियों ने अपने-अपने ढंग से अभिव्यक्त किया है। मुकेश कुमार ऋषि वर्मा समकालीन हिंदी काव्यधारा के उन रचनाकारों में हैं जिन्होंने आम मनुष्य के जीवन-अनुभवों को सरल, सहज तथा मार्मिक अभिव्यक्ति दी है।

उनकी कविता “ज़िंदगी” जीवन के अनेक पहलुओं को उद्घाटित करती है—तन्हाई, संघर्ष, पीड़ा, अनुभूति, सौंदर्य, मोह, छल, क्रूरता और अंततः परिवर्तनशीलता। कविता की पंक्तियों में जीवन की कठोर वास्तविकता और उसके भीतर छिपे सौंदर्य का द्वैत रूप उभरता है। यह आलेख कविता का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

कविता का भाव-विस्तार (Thematic Analysis)

1. जीवन की तन्हाई और संघर्ष का चित्रण-

कविता की प्रारम्भिक पंक्तियाँ जीवन की निरंतर चलने वाली प्रक्रिया और उसकी तन्हाई को व्यक्त करती हैं।

“बहुत तन्हा-तन्हा रही जिंदगी, जैसी भी हो गुजरती रही जिंदगी।”

यहाँ कवि जीवन की उदासी के साथ-साथ उसके अनिवार्य प्रवाह को भी स्वीकार करता है। यह मानवीय अस्तित्व का यथार्थवादी चित्रण है।

2. गिरने-उठने का चक्र एवं जीवन की सरलता।

कवि कहता है–

"कभी गिरी तो कभी उठी जिंदगी, बड़ा मजा आया तुझमें ए जिंदगी।"

यहाँ जीवन को एक खेल की तरह देखा गया है जहाँ गिरना भी अनुभव है और उठना भी सीख। कवि का यह जीवन-दृष्टिकोण आशावादी है।

3. समय और हौसले का द्वंद्व।

"वक्त ने ठुकराई हौसलों ने चलाई जिंदगी।"

समय जीवन के निर्माण में बाधक भी है और मार्गदर्शक भी। हौसले वह शक्ति हैं जो व्यक्ति को आगे बढ़ाती हैं। यहाँ कवि ने जीवन-शक्ति की केंद्रीय भूमिका को रेखांकित किया है।

4. पीड़ा की निरंतरता और निखरने की प्रक्रिया।

जिंदगी बार-बार चोट देती है, पर व्यक्ति हर बार निखरता है।

"चोट पर चोट खाती रही जिंदगी, किन्तु क्षण-क्षण निखरती रही जिंदगी।"

इस पंक्ति में संघर्ष से सौंदर्य उत्पन्न होने का दर्शन निहित है।

5. जीवन के अत्याचार और छीन लिए गए स्वत्व।

"मेरा सर्वस्व मुझसे छीन ले गई जिंदगी।"

यह मनुष्य की हताशा और दुख का चरम रूपक है। जीवन को यहाँ एक कठोर, निर्मम शक्ति के रूप में चित्रित किया गया है।

6. सौंदर्य और विनाश का द्वैत।

"नूर चेहरे पर सजाती रही जिंदगी, मेरी अनमोल काया खाती रही जिंदगी।"

यह जीवन का दोहरा स्वरूप है–ऊपरी सौन्दर्य और भीतर क्षरण।

7. भ्रम और मोह का संसार।

"हमेशा झूठे-सच्चे ख्वाब दिखाती रही जिंदगी।"

यह पंक्ति जीवन के छलपूर्ण रूप को उजागर करती है।

8. गम में भी मुस्कुराने का जीवन-दर्शन।

"गम के साये में भी मुस्कुराती रही जिंदगी।"

यहाँ कवि दर्द को स्वीकार कर उससे ऊपर उठने का संदेश देता है।

9. बोध की देर और जीवन की गति।

कविता का अंतिम निष्कर्ष–

"जब तक समझ में तू आई जिंदगी,
मुट्ठी से रेत की तरह निकल गई जिंदगी।"

यह जीवन के क्षणभंगुर होने का गहन दार्शनिक बोध है।

भाषा और शैली (Language and Style)

मुकेश कुमार ऋषि वर्मा की भाषा सरल, संवेदनापूर्ण और सहज लयबद्ध है। कविता में दोहराव शैली ("रही जिंदगी") जीवन के निरंतर प्रवाह और अनुभवों की पुनरावृत्ति का प्रतीक है।

बिंब, जैसे- रेत, नूर, साया, कतरा-कतरा आदि। कविता को दृश्यात्मकता प्रदान करते हैं।

कविता मुक्तछंद में लिखी गई है जो भावों को स्वाभाविक विस्तार देता है।

जीवन-दर्शन (Philosophical Insight)

कविता का केंद्रीय संदेश यह है कि जिंदगी संघर्ष और पीड़ा से बनी है, पर इन सबके बीच मुस्कुराना, उठना, आगे बढ़ना ही मनुष्य की असली ताकत है।

यह कविता अस्तित्ववादी चेतना (existential consciousness) और मानवीय दृढ़ता का दार्शनिक रूप प्रस्तुत करती है।

निष्कर्ष (Conclusion)

"ज़िंदगी" एक संवेदनात्मक, यथार्थवादी और दार्शनिक कविता है जिसमें जीवन की विविध अवस्थाएँ—तन्हाई, संघर्ष, पीड़ा, सौंदर्य, मोह, गम, अनुभूति और क्षणभंगुरता—सुगठित रूप में प्रस्तुत होती हैं।

मुकेश कुमार ऋषि वर्मा की यह रचना सामान्य मनुष्य के अनुभवों को अत्यंत प्रभावी ढंग से अभिव्यक्त करती है।

APA शैली में किया गया यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि कवि का जीवन-दर्शन अत्यंत व्यापक, मानवीय और प्रेरक है।

संदर्भ सूची (References)

1. Mukesh Kumar Rishi Verma- (n-d-)- Zindagi [Poem], Facebook@Internet
2. इन्दौर समाचार (दैनिक न्यूज पेपर),
3. हरिकमल दर्पण (साप्ताहिक समाचार पत्र),
4. ऋषि की दुनिया (ब्लॉग)।

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

मानवाधिकार का अवधारणात्मक विवेचन

डॉ. जगदीश प्रसाद कड़वासरा
शोध निर्देशक :
(सहायक प्रोफेसर)
कला संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय

मोहम्मद रमजान
शोधकर्ता :
कला संकाय
टांटिया विश्वविद्यालय

प्रस्तावना

मानवाधिकार की अवधारणा राज्य के व्यवस्थित स्वरूप अस्तित्व में आने के पश्चात्वर्ती काल से जुड़ी है। इसमें मानव व राज्य का सम्बन्ध परस्पर अन्योन्याश्रित स्वरूप में है। मानव का अस्तित्व राज्य से पूर्व काल से है परन्तु प्रमुख अर्हता जनसंख्या है, जिसके लिए राज्य का कोई अस्तित्व नहीं रहता। मानव उस राज्य के नागरिक कहलाते हैं और राज्य उन्हें नागरिक होने के नाते कुछ अधिकार या शक्तियाँ प्रदान करता है। अधिकार एक प्रकार की शक्ति है जो किसी सम्प्रभु राज्य संस्था द्वारा प्रदान की जाती है। राज्य के बिना अधिकार का कोई औचित्य या प्रासंगिकता नहीं रहती।

अधिकार मानव जीवन की ऐसी अवस्थिति है, जिनके प्राप्त होने पर मानव अपने दैनिक जीवन के समस्त कार्य निर्बाध रूप से जारी रख सकता है। उसे अपने परिवार के पालन पोषण, संस्कृति व सम्पदा का संरक्षण यहाँ तक जीवित रहने की सुविधा प्राप्त रहती है। अठारहवीं शताब्दी में परम्परागत रूप में मानव अधिकार को ऐसे अधिकार के रूप में माना जाता था, जो अहस्तारणीय थे तथा राज्य द्वारा अपने नागरिकों को प्रदान किये गए थे। इन्हें प्राकृतिक अधिकार या मानव को प्रदत्त अधिकार कहा जाता था। मानवाधिकार के अर्थ व व्याख्या को दृष्टिगत रखकर मुख्य रूप से जो दो दृष्टिकोण प्रचलित थे, जिन्हें सैद्धान्तिक या दार्शनिक दृष्टिकोण तथा उपयोगितावादी या व्यावहारिक दृष्टिकोण में विभक्त किया गया था।

सैद्धान्तिक या दार्शनिक दृष्टिकोण के प्रणेता विचारक मानव अधिकारों को पाँच सिद्धान्त स्वीकार करते हैं, जिनमें प्राकृतिक अधिकार सिद्धान्त की अवधारणा व्यापक एवं अन्तर्निष्ठात्मक स्थिति से सम्बद्ध है। इस सिद्धान्त के प्रणेता जॉन लॉक, थामस हॉब्स, स्पिनोजा और रेने डिस्कार्ट्स रहे। इनके अतिरिक्त जीन जेक्स रूसो, मॉण्टेस्क्यू तथा वालटेयर का भी इस विचारधारा में विशिष्ट योगदान रहा है। इन विद्वानों के अनुसार मानव होने के नाते प्राकृतिक रूप में जीवन जीने का अधिकार, सम्पत्ति रखने का अधिकार तथा स्वतंत्रता का अधिकार प्राप्त है। व्यक्ति इन अधिकारों को राज्य द्वारा प्राप्त करता है ओर समाज इन अधिकारों की उपस्थिति को स्वीकार करता है।

भारत में मानवाधिकार

भारत का संविधान सभी नागरिकों को व्यक्तिगत स्वरूपों व सामूहिक स्वरूप में कुछ मौलिक स्वतंत्रताएँ प्रदान करता है, जिनका उल्लेख संविधान के भाग 3 के अनुच्छेद 12 से 35 में वर्णित किया गया है और जिनको न्यायालय भी संरक्षण प्रदान करता है। इन मौलिक अधिकारों में प्रथम समानता का अधिकार है, जिसके अन्तर्गत कानून के समक्ष सभी नागरिकों

को समान माना गया है जिसमें धर्म, जाति, लिंग, जन्म स्थान का कोई भेद नहीं रखा जा सकता। इसके अतिरिक्त रोजगार उपलब्ध कराने में वर्णित योग्यता व अनुभव के अतिरिक्त किसी प्रकार के भेदभाव को वर्जित माना गया है।

समानता के अधिकार के क्रम में अनुसूचित जाति, जनजाति व अन्य पिछड़ा वर्ग तथा कुछ स्थितियों में महिलाओं के लिये आरक्षण का प्रावधान किया गया है, जिसका तात्पर्य यह नहीं है कि वह नागरिकों को समानता के अधिकार का उल्लंघन है। यह आरक्षण उच्च एवं व्यावसायिक शिक्षा व रोजगार क्षेत्र में प्रदान किया गया है। इसका उद्देश्य इन वर्गों को विरासत में मिले निम्न स्तर को समाज की मुख्य धारा में लाना है और इस स्थिति को समानता के अधिकारों का उल्लंघन नहीं कहा जा सकता। इसी प्रकार नगरीय संस्थाओं व पंचायत प्रणाली के तीनों स्तरों पर अनुसूचित जाति, जनजाति के अतिरिक्त महिलाओं को तीस प्रतिशत आरक्षण प्रदान किया गया। जो अनुसूचित जाति, जनजाति व सामान्य श्रेणी में महिलाओं का आरक्षण उसी सीमा तक स्वीकार करता है और इससे आरक्षण में वृद्धि नहीं होगी।

मौलिक कर्त्तव्य

संविधान के बयालीसवें संशोधन के माध्यम से 1976 में नागरिकों के मौलिक कर्त्तव्यों को नागरिकों की पालना के लिए जोड़ा गया। संविधान के भाग चार-क में अनुच्छेद 51क के द्वारा मौलिक कर्त्तव्यों को रखा गया जिनमें नागरिकों से अन्य बातों के अतिरिक्त संविधान को स्वीकार करने और उसमें वर्णित निर्देशों की पालना करने के साथ उच्च आदर्शों को स्वीकार करने व पालन करने की आवश्यकता दर्शाई गई है। जिन्होने नागरिकों को स्वतंत्रता आंदोलन में सही रूप से भाग लेने के लिए प्रेरित किया। इसमें देश की सुरक्षा की व्यवस्था करने के लिए आवश्यकता पड़ने पर अपनी सेवाएँ उपलब्ध कराना अपेक्षित माना गया।

राज्य के नीति निर्देशक तत्व

संविधान में वर्णित नीति-निर्देशक तत्व कानूनी मान्यता नहीं रखते हैं परन्तु देश के मौलिक शासन व्यवस्था के लिए उपयोगी माने गये हैं। देश के सभी राज्यों से यह अपेक्षा की गई है कि इन सिद्धान्तों को जनहित में कानून बनाकर लागू करें। इनमें राज्यों को विभिन्न दायित्व सौंपे गये हैं जो सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक न्याय को सुव्यवस्थित रूप से क्रियान्वित करें। राज्यों को ऐसी नीतियाँ अपनानी चाहिए जिनसे पुरूषों व महिलाओं को जीवन निर्वाह के साधन, समान कार्य के लिए समान वेतन लागू करें। जितने राज्य अपनी आर्थिक क्षमता व विकास की दृष्टि से संभव कर सकें। इसमें कार्य का अधिकार शिक्षा का अधिकार व बेरोजगारी की स्थिति में समुचित सहायता उपलब्ध कराने की व्यवस्था करें।

मानवाधिकार एवं भारतीय संस्कृति

भारतीय संस्कृति में अधिकार की संकल्पना न होकर कर्म की रही है इसके साथ ही समाज में न्याय एवं दण्ड की एकरूपता भी विद्यमान थी। इसके अन्तर्गत समाज के किसी भी वर्ग द्वारा शास्त्र विहित कर्त्तव्य के विरूद्ध आचरण करने पर दण्ड के विधान की प्रक्रिया भी निर्धारित थी। सदियों तक विदेशी शासन के साये में रहते हुए भी भारतीय संस्कृति मानव मूल्यों व मानवाधिकार की पोषक थी तथा स्वयं को बचाए रखने में कुछ सीमा तक सक्षम रही। भारतीय संस्कृति के ह्रास का बड़ा कारण मुस्लिम सैनिकों द्वारा महिलाओं व लड़कियों के जबरन उठाकर ले जाने, धर्म परिवर्तन कर विवाह करने तथा बड़ी संख्या में सैनिक भर्ती के लिए लोगों का धर्म परिवर्तन करना रहा।

निष्कर्ष

मानवाधिकार की बातें केवल कानून पास करने तक ही सीमित नहीं होकर पीड़ित लोगों को सम्बन्ध प्रदान करने के लिए समाज, प्रचार माध्यम, स्वयंसेवी संगठन सार्थक भूमिका का निर्वाह कर सकते हैं। ऐसे मामलों में मुख्य समस्या पीड़ित

परिवार द्वारा पुलिस में रिपोर्ट व न्यायिक प्रक्रिया के दौरान पूरे परिवार की सुरक्षा और सभी प्रभावित व्यक्तियों पर जब तक कठोर कार्यवाही नहीं की जाती, तब तक मानवाधिकार केवल साज-सज्जा का ही अलंकरण बन सकते हैं। मानवीय गरिमा जब तक सबसे दलित व पिछड़े तबके का अस्त्र नहीं बनती, केवल अलंकरण युक्त मानव अधिकार कारगर होना संभव नहीं है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. पाण्डेय अजय कुमार (2017) भारतीय संस्कृति एवं मानवाधिकार, डॉ. पी.के. पाण्डेय का संकलन, पृ. 1- 3
2. भारत सरकार (2018) इण्डिया, (2020), सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पृ. 26-27
3. भारत सरकार (इण्डिया) (2021), सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पृ. 27
4. सिंह कविता (2019) बी.के. पाण्डेय की सम्पादित भारतीय संस्कृति एवं मानवाधिकार, पृ. 15-20
5. श्रीवास्तव कुलदीप कुमार (2022), बी.के. पाण्डेय की सम्पादित भारतीय संस्कृति एवं मानवाधिकार, पृ. 34-36.
6. पाठक महेन्द्र (2021) बी.के. पाण्डेय की सम्पादित भारतीय संस्कृति एवं मानवाधिकार, पृ. 42- 47

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

भाषा और संस्कृति का अन्तर्संबंध- भारतीय संदर्भ में

नरेन्द्र कुमार वर्मा
(सहायक आचार्य)
राजस्थान शिक्षक प्रशिक्षण विद्यापीठ
शाहपुरा बाग जयपुर

सारांश (Abstract)

भारतीय संस्कृति का विकास भाषाओं के माध्यम से हुआ है। वैदिक काल में संस्कृत भाषा ने धार्मिक, दार्शनिक और बौद्धिक परंपराओं को संरक्षित किया। वेद, उपनिषद, ब्राह्मण ग्रंथ, रामायण और महाभारत जैसे महाकाव्य भारतीय सांस्कृतिक चेतना के आधार स्तंभ हैं। कालांतर में प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं ने जनसामान्य की संस्कृति को स्वर दिया। भक्ति और सूफी आंदोलनों ने क्षेत्रीय भाषाओं में साहित्य रचकर सामाजिक समरसता, प्रेम और मानवता का संदेश दिया।

हिंदी, तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम, मराठी, गुजराती, बंगाली, उर्दू, पंजाबी और असमिया जैसी भाषाएँ केवल भाषाई ढाँचे नहीं हैं, बल्कि अपने-अपने क्षेत्रों की सांस्कृतिक पहचान की प्रतिनिधि हैं। लोककथाएँ, लोकगीत, कहावतें, मुहावरे, नृत्य-नाट्य और त्योहार भाषा के माध्यम से ही जीवित रहते हैं। उदाहरणस्वरूप, तमिल संगम साहित्य, बंगाली नवजागरण, हिंदी का भक्ति और आधुनिक साहित्य, तथा उर्दू की ग़ज़ल परंपरा भाषा और संस्कृति के अन्तर्संबंध को स्पष्ट करते हैं। इस प्रकार भाषा संस्कृति को संरक्षित करती है और संस्कृति भाषा को जीवन और अर्थ प्रदान करती है।

मुख्य शब्द (keywords) - बहुसांस्कृतिक समाज, सांस्कृतिक विरासत, लोकसंस्कृति।

प्रस्तावना (Introduction)

भाषा और संस्कृति मानव समाज की पहचान के मूल तत्व हैं। भाषा जहाँ विचारों, भावनाओं और अनुभवों को अभिव्यक्त करने का माध्यम है, वहीं संस्कृति किसी समाज के जीवन-मूल्यों, परंपराओं, विश्वासों, आचार-विचार, कला और सामाजिक व्यवहार का समग्र रूप है। इन दोनों के बीच अत्यंत घनिष्ठ और पारस्परिक संबंध होता है। भारतीय संदर्भ में यह सम्बन्ध और भी अधिक व्यापक तथा गहन दिखाई देता है, क्योंकि भारत एक बहुभाषी, बहुधार्मिक और बहुसांस्कृतिक देश है। यहाँ भाषा केवल संप्रेषण का साधन नहीं, बल्कि सांस्कृतिक चेतना की वाहक और सामाजिक एकता की सेतु है। भारतीय सभ्यता की निरंतरता और विविधता को बनाए रखने में भाषा और संस्कृति का अन्तर्संबंध निर्णायक भूमिका निभाता रहा है।

भारतीय संदर्भ में भाषा और संस्कृति का अन्तर्संबंधशोध के उद्देश्य

1. भारतीय समाज में भाषा और संस्कृति के पारस्परिक संबंध का अध्ययन करना।
2. यह विश्लेषण करना कि भाषा किस प्रकार सांस्कृतिक मूल्यों, परंपराओं और सामाजिक आचार-विचार की संवाहक है।

3. भारतीय भाषाओं के माध्यम से सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण एवं संवर्धन की भूमिका को समझना।
4. क्षेत्रीय भाषाओं और लोकसंस्कृति के आपसी संबंध का मूल्यांकन करना।
5. ऐतिहासिक कालक्रम में भाषा के विकास और सांस्कृतिक परिवर्तनों के प्रभाव का अध्ययन करना।
6. भक्ति, सूफी तथा लोक आंदोलनों में भाषा की भूमिका का विश्लेषण करना।
7. आधुनिक वैश्वीकरण के संदर्भ में भाषा और संस्कृति पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना।
8. शिक्षा, मीडिया और डिजिटल माध्यमों में भाषा के सांस्कृतिक महत्व को स्पष्ट करना।
9. बहुभाषिकता और बहुसांस्कृतिकता के माध्यम से राष्ट्रीय एकता के निर्माण में भाषा की भूमिका को रेखांकित करना।
10. भारतीय संदर्भ में भाषा संरक्षण और सांस्कृतिक पहचान की आवश्यकता को उजागर करना।

आधुनिक संदर्भ में उपयोगिता (Utility in a modern context)

आधुनिक युग में वैश्वीकरण, शहरीकरण और तकनीकी विकास ने भाषा और संस्कृति के स्वरूप को प्रभावित किया है। अंग्रेज़ी और अन्य वैश्विक भाषाओं का प्रभाव बढ़ने से स्थानीय भाषाओं और संस्कृतियों के अस्तित्व पर संकट भी उत्पन्न हुआ है। ऐसे समय में भाषा और संस्कृति के अन्तर्संबंध को समझना और सुदृढ़ करना अत्यंत आवश्यक हो गया है।

शिक्षा के क्षेत्र में मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा ग्रहण करने से बौद्धिक विकास अधिक सहज और प्रभावी होता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति भी भाषाई विविधता और मातृभाषा के महत्व को स्वीकार करती है। मीडिया, सिनेमा, साहित्य और डिजिटल प्लेटफॉर्म भारतीय भाषाओं को नए स्वरूप में प्रस्तुत कर रहे हैं, जिससे सांस्कृतिक प्रसार और संरक्षण दोनों संभव हो रहे हैं।

इसके अतिरिक्त, बहुभाषिकता भारतीय लोकतंत्र की शक्ति है। विभिन्न भाषाओं और संस्कृतियों का सहअस्तित्व सामाजिक सहिष्णुता, आपसी सम्मान और राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देता है। पर्यटन, सांस्कृतिक कूटनीति और वैश्विक संवाद में भी भारतीय भाषाएँ और संस्कृति देश की सॉफ्ट पावर को मजबूत करती हैं।

निष्कर्ष (Conclusion)

निष्कर्षतः, भारतीय संदर्भ में भाषा और संस्कृति का अन्तर्संबंध अविच्छिन्न, गतिशील और पारस्परिक है। भाषा संस्कृति की संवाहक है और संस्कृति भाषा की आत्मा। दोनों के बिना समाज की पहचान अधूरी रह जाती है। भारत की विविधता में एकता की भावना इसी अन्तर्संबंध के कारण संभव हो पाई है। वर्तमान समय में आवश्यकता है कि भारतीय भाषाओं को संरक्षण, संवर्धन और आधुनिक संदर्भों में उपयोग के अवसर प्रदान किए जाएँ, ताकि सांस्कृतिक विरासत सुरक्षित रहे और भावी पीढ़ियाँ अपनी जड़ों से जुड़ी रहें। भाषा और संस्कृति का संतुलित विकास ही भारतीय समाज की निरंतरता, समृद्धि और वैश्विक पहचान का आधार है।

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

ANALYSIS OF NYAYAS (MAXIMS) AS DEPICTED IN INDIAN PHILOSOPHICAL PRINCIPLES

Pulak chan Das
M.A. in Philosophy, B.Ed., NET
School Teacher (Assistant Teacher)

Abstract

Man has been held as the master of this planet because of his capacity to think and seek answers to his inquisitions. With the development of logical faculty within him he has been making keen observation on various natural phenomena unfolded around him Natural phenomenon related with man, animals, plants and various physical attributes have influenced human psyche since ancient times. While flora and fauna have flared human imagination all over the globe physical phenomenon provided a definite direction to the growth of human civilization. In his quest for a settled life man domesticated quite a good number of this biota. He applied his mind over the diverse aspects of human behaviors and devised ways of leading a blissful life. This endeavor led to the evolution of knowledge systems in the form of logic, ethics, literature etc. Knowledge based on exact visualization also grew side by side. Then he started drawing analogies of natural facts like plants and animal behavior with those of human actions. This led to the evolution of thousands of maxims which signifies a moralistic aphorism and also pertains to a philosophical principle. These maxims capture a situation in life, usually with a nugget of words. The aim of the present paper is to provide the modern interpretations of dozens of Indian philosophical maxims with hitherto undeciphered scientific connotation which would help the future generations have an easy grasp over the situation in shaping the thoughts of ancient thinkers in evolution of various philosophical paradigms by which the ocean of information available in ancient literatures will be brought to light?

Keywords: Maxims, Nyayas, Veda, Upanishad, Samhita.

Introduction:

Man has been held as the master of this planet because of his capacity to think and seek answers to his inquisitions. With the development of logical faculty within him he has been making keen observation on various natural phenomena unfolded around him. These observations find their mention in the literary and philosophic texts written over millennia. These texts are full of diverse analogies made with the creatures of this planet including the plants and animal behaviors. There is a need of seeking comparative illustration of these phenomena in the ancient texts written in various parts of the world. This couldhelp make a proper estimation of the cross-cultural nuances in relation

to utility patterns of natural biota. In his quest for a settled life man domesticated quite a good number of this biota. He applied his mind over the diverse aspects of human behavior and devised ways of leading a blissful life. This endeavor led to the evolution of knowledge systems in the form of logic, ethics, literature etc. knowledge based on exact visualization also grew side by side. As the civilization advanced man started making more minute observation in to the natural phenomena both of physical and biological dimensions. He started drawing analogies of plant and animal behaviorwith those of human actions. This led to the evolution of thousands of maxims (called laukikanyaya), which are mentioned in innumerable. Indian texts several of these sutras bear scientific connotations. Scientific advancements in the last few centuries have made it possible to provide elaborate details of the structures and processes inscribed in these texts or sutras.

Meaning of Nyaya:

Nyaya or maxim signifies a moralistic aphorism which pertains to a philosophical principles. The simple metaphors used by the ancient people in the colloquial language later technically termed as Nyaya. A Nyaya or maxim is defined as an expression of general truth or principle. Maxim signifies a didactic statement which pertains to any dogma or philosophy in a context. In Sanskrit, maxim is recognized under the term of Nyaya which captures a situation in life, usually with a nugget of words. They are specifically used when characterizing a situation. Nyayas usually take the form of a common occurrence or a story that can be applied as an aphorism to sum up an event, situations, or circumstance. Nyayas are widely accepted as an authorized tool to express the ancient scientific principles. It is basically seen by the general public as a more logical proposition. They are specifically used when characterizing a situation. By the midst of Sanskrit development, most of texts in classical Sanskrit seen to have consisted of maxims in variegated circumstances. The genesis of this evolution was the influence of Rig-Veda and related vedic books and post-Vedic scriptures like puranas, Upanishads, kavya, Nataka, Darshanas and so on. Different Indian philosophical texts also explain various maxims to enlighten their treatise and for the easy understanding of the topic. Different ancient Indian philosophers found an easy tools for the clarification of the views what they want to put in their lexicon. Later the commentators of these lexicons integrated a number of Nyayas to explore the exact meaning of the actual verses. The purpose of Nyaya in Veda, Upanishads, Darshans or in Sanskrit is to beautify the literature. Thus in a gist, these maxims help for doing research in various fields like literary, scientific, clinical etc.

Types of Nyaya:

The word Nyaya here does not meant for the Nyaya philosophy rather it denotes the one which explains the tradition, determination, logic, applicability and technique of writing of any topic. From the above words the meaning of Nyaya can be denoted as per sir Monier Williams method (paddhati), Rule (a general or universal rule) Niyam(system, karma vyavastha) plan (yojana), judgementNirnaya, standard(mapadanda), principles (siddhanta, way (marga), Logical proof (Yukti, udaharana) conclusion Nirnaya), manner(Niyama). The Nyayamuxims are of two types (1) LaukikaNyaya and the (2) shastriyaNyaya. LoukikaNyayas are the one which are used by the common public in day to day life where as shastriyaNyayas are the one which are used by the authors of the treatise to explore their concepts. Most commonly by using the meaning and gist of LoukikaNyaya, the shastriyaNyayas are put forth by the authors (Granthakaras). The Nyayas like

DandapoopaNyaya, SimhavalokanaNyaya, SthalipulakaNyaya, ShakhandraNyaya, KupamandukaNyaya etc are commonly used in literature as well as day to day life. Moreover the notion of Nyaya depends upon the situation, place, and topic of explanation mainly. To explain the meaning of the topic, these Nyayas helped since vaidikakala. In philosophical texts, mostly the philosophers use nyayas to make the learner understand the concepts in a better and apparent way. The understing of Nyaya is very much necessary to get clear knowledge about the hidden concepts. Thus in a gist, these Nyayas or maximum help for doing research fields like literacy, scientific, clinical etc.

Importance of Nyaya:

Different Vedas, Upanishads, Darshanas, Samhitas contain the information in the coded language in the form of sutras. Many times mere translation may not convey the intent of author, as the author's opinion are depending on time and place. Here the true realization requires reliving the period of samhita which is impossible, to counter this, the Nyayas (maxims) help becomes imperative. The Nyayas convey larger meaning than the sutra. Nyayas(maxims) help to infer the ideology thought process prevailing at that time Therefore, this necessitates the logical steps to be followed in deciphering Nyayas (Maxims).

Methods of Analysis:

Analysis can be done in four steps.

Step 1- First step is padarthajnana (meaning) proper knowledge of the words in Nyaya (maxim).

Step-2. Second step prakriyavijnana (phenomenon). Eliciting phenomenon that is implicit in Nyayas (maxims)

Step-3. The third step sandharbha (context) knowledge of the context in which Nyaya (maxim) is used or discussed

Step-4 The fourth step is Yukti (interpretation). Analysis of padarthajnana, prakriya of Nyaya (maxim) with the sandharbha in different Vedas, Upanishads and darshanas Four maxims orNyayas are taken here for narration which are stand in Darshanas, Upanishads, vedas etc.

Examples of Different Nyayas:

Shilaputraka Nyaya:

The etymological meaning of this nyaya isshila means rock and shilaputraka means a piece of stone. The phenomenon is here a big stone is cut in to sculptures. This Nyaya is explained in different contexts inphilosohical contexts or Sandharbha). This nyaya was explained in samkhya and Vedanta darshana while explaining the evolution theory. The Interpretation of this Nyaya is that sankhya accepts the production of this universe begins with Avyakta which is having three basic qualities like sattva, Rajas and Tamas. From this Mahat is produced and then ahamkar etc. All the later products too have three basic qualities, though named separately. As the size and appearance differs from big stone to small stone but the quality of the material (stone) will be the same (stone is

present in both pieces). In the same way Avyakta, Mahatetc though explained separately but basically produced out from similar things that are trigunas (there) basic qualities). Thus from this Nyaya (maxims) one can understand the clear explanation of sristiutapatti. From this nyaya (maxim) it can be analyzed as that all the later products contain their basic qualities also

Kakadantapareeksha Nyaya:

It is the Maxim of examining theteeth of a crow. kakadanta means the teeth of a crow. This nyaya is almost used in all the fundamental philosophical texts. That is in the context of Anubandha Catustaya. Actually, there is no tooth at all in a crow so, examining a crow's teeth is of no use. This maxim is used to denote any useless or fruitless enquiry while explaining the pratinjna. If the prayojana is not told it may be usless as the kakadantapareeksha. Not even a single factor is explained without any particular aim. Initiation of any kind of research either clinical, literary or any other form should be for the benefit of a large group just like a Kakadantapareeksha Nyaya. prayojana also generates interest in the reader to study a sastra. If no Abidha (title or heading) and prayojana are not mentioned in the beginning of a book, then no person likes to go through that book so if the Anubandhacatustaya is not clear then we can understand the uselessness of a text orsastras.

Pinda-Bramhanda Nyaya:

This Nyaya means the relation between this body and universe. ThisNyaya is explained in the context of pancamahabhuta especially in Vedanta Darshana. It explains the phenomena that what is there in the universe same is resent in the body. In almost every darshans accepts the panchabhoutikatva of each and every object in this universe. This body is also made up of panchamahabhutas only. Acharyas considered the earth/prithivi for the gross body, water/Aap for the moisture of the body, flame/Teja for the temperature of the body, Air/Vayu for the life/ prana of body and so on The tattva which is there in the body(Pinda) also there in the universe (Brahmanda).

Andha-Pangu Nyaya: This Nyaya is found in various philosophical texts such as Tantravartika, Shankarabhashyam, Nyayamanjari and Sankhyakarika to visualize how the initiation of Srishtivikasa or evolution takes place. "Prakriti" is Trigunatmaka as it contains three attributes viz. Sattva, Rajas and Tamas. On contrary to this," Purusha" is Trigunattita or it does not contain any attributes as it is Viveka(wise sagacious person), Vishayi and Chetana (conscious). As Prakriti and Purusha are contrary in nature they cannot produce any factor any factor independently whereas when they are united the creation will commence. Here the blind one is Purusha and the lame is Prakriti. For the Purusha's (soul) contemplation of nature (Prakriti), and for its abstraction, the union of both takes place as that of the lame and blind. The Knowledge of this Nyaya can be used to visualize/understand the concept of Ashraya-ashrayi Sambandha.

Pipeelika Bharaharana Nyaya:

This Nyayameans or the padartha meaning is weight lifting of ant. pipeelika means ant and Bharaharana means weight lifting. In this Nyaya the prakriyavijnana (phenomenon) is that here an ant is lifting an object of higher weight. This also explains the contexts in different Darshans. Here the interpretation is by seeing a well built and nourished body generally one will think he has good bala (strength) and by seeing a person without well built and nourished body one can think he is very

weak. But every time it is not true. Stout person may be weak and person who is lean may have good strength. By the above information one may not be that much convinced or understand. Through this nyaya(maxim) it is easy to understand and remember. Just like an ant which is very small but can carry the things having more weight than it. From this nyaya (maxim) it can be analyzed as, just by seeing the structure one cannot assess bala or strength. So it is clear from this nyaya that physical appearance and strength are not always proportionate.

Suggestions:

From the above examples it can be understood that Nyayas are the common rules or principles in Lokavyavahera. These have been used by our Ancient Indian and convey the idea of the author (1) so Nyayas help to highlight the importance of prakarana (2) It helps to understand the contextual meaning and also cites the hidden meaning (3) It also helps to describe a complex idea in a simple way to include many things which are originally not told directly. The ocean of information available in Darshans, Vedas, Uanishads needs to be brought to light These nyayas lay a significant role in understanding these sastras. The proposed steps can add to the current understanding of the texts. Nyayas are the one which are used by the authors of the treatise and Tikakaras to explore their concepts in an easily understanding way and Nyayas (maxims) having capability to express the meaning inherent in it and the ability to convey several meanings through a few words. We find the usage of a lot of Nyaya (maxims) since from Vedic period continuing to later era. Thepurpose of these Nyayas in Veda, Purana, Kavya, Nataka are used not only for clear understanding of the concepts but also to beautify their transcript. Byreading the verses in different Vedas, Upanishads and Darshanstexts we can get the superficial knowledge but the hidden information of those verses can be assessed by using various Nyayas.

Conclusion:

This communication intends to bring the ancient Indian wisdom to the notice of the present day world, from a new angle of providing modern interpretations to the early observations and thus make an improvement upon the archaic concepts which hold true even today, so far as the genuineness of the visualization is concerned. Keeping in view the significance of the Laukika Nyaya in shaping the human psyche, several texts exclusively devoted to these maxims have been written in the last century. It is high time efforts were made to bring to the notice of the modern world the maxims with hitherto undeciphered scientific connotation. This would help the future generations have an easy grasp over the situation as obtaining in the past and also the role played by respective creatures of the planet in shaping the thoughts of ancient thinkers in evolution of the various philosophical paradigms

References:

- Banerjee S C, Flora and Fauna in Sanskrit Literature, (NayaPrakash, Calcutta), 1980.
- Jacob G A, Laukikanyayanjalih, 2nd edn., TukarammJiwaji, Nirvanasagar Press, Bombay, 1909
- Nadkarnik M, The Indian MateriaMedica, Popular Prakashana,Bombay, 1954.
- Nyayahvali- Sanskrit Maxims and Proverbs., with English Translation and notes source of e-text, WWW.philosophy.ru

- Pandey SV, LaukikaNyayanushilan, AnupamPrakashana, Patna, 1985
- TrakavacaspatiShriTaranath, Vachaspatyam, Chaukhambha Sanskrit Series, Varanasi.
- Udgaonkar S, The recording of traditional knowledge, Curr Sci. 2002.
- Williams monier, Sanskrit English Dictionary, The Clarendon Press, oxford, 1951.

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

The Role of Artificial Intelligence in Educational Research

Dr. Ravindar Kumar
Assistant Professor
Faculty of Education
IASE (Deemed to be University)
Gandhi Vidya Mandir, Sardarshahar (Rajasthan)

Abstract:

In the contemporary era, Artificial Intelligence (AI) has emerged as a revolutionary force that has significantly transformed education and research practices. Its integration into educational research has enabled scholars to move beyond traditional methods by incorporating advanced techniques such as data analytics, pattern recognition, and predictive modeling. AI can efficiently process large and complex datasets with high speed and accuracy, enabling researchers to generate meaningful insights that were previously difficult to obtain. Furthermore, AI plays a vital role in promoting personalized learning by analyzing learners' behavior, interests, and performance trends, thereby supporting adaptive learning systems. It also enhances evidence-based decision-making in educational planning and policy development through data-driven forecasting. However, increased dependence on AI raises critical concerns related to ethics, data privacy, and digital inequality, which require careful attention. This paper provides a comprehensive analysis of AI's role in educational research, highlighting its applications, benefits, challenges, and future possibilities, while emphasizing innovation, inclusivity, and ethical responsibility.

Keywords: Artificial Intelligence, Educational Research, Data Analytics, Machine Learning, Personalized Learning, Adaptive Learning Systems, Predictive Modeling, Automated Evaluation, Educational Innovation, Digital Learning.

Introduction:

Education is a key foundation for the overall development, progress, and empowerment of society. It plays a crucial role in shaping intellectual abilities and driving social, economic, and cultural transformation. Similarly, research is essential for improving educational quality and making it relevant to modern needs. Educational research contributes to the development of new teaching methods, policies, and strategies that make the education system more effective, inclusive, and relevant. Traditional research approaches were often slow, labor-intensive, and dependent on limited resources. Data collection, analysis, and interpretation were complex processes that often resulted in delays and reduced accuracy. Human error also affected the reliability of findings. However, the emergence of Artificial Intelligence has brought a significant transformation in educational research. AI has

made research processes faster, more structured, and highly data-driven. It enables researchers to analyze large datasets efficiently and uncover hidden patterns and trends that were previously difficult to identify. Technologies such as Machine Learning, Deep Learning, and Data Mining further enhance the analysis of educational data, helping researchers understand student performance, learning behavior, and academic progress in depth. This leads to more informed decision-making and the development of learner-centered education systems. Thus, AI has reshaped both the nature and direction of educational research.

Concept of Artificial Intelligence:

Artificial Intelligence refers to advanced systems designed to simulate human intelligence, including thinking, reasoning, learning, and decision-making abilities. Its purpose is not only to process data but also to learn from it and respond appropriately to different situations. AI systems improve over time by learning from experience and correcting errors. It is a major branch of computer science focused on creating intelligent systems capable of independent decision-making, problem-solving, and complex analysis. AI aims to automate tasks that normally require human intelligence, such as language understanding, image recognition, reasoning, and decision-making. AI consists of several subfields, including Machine Learning, which enables systems to learn from data; Deep Learning, which uses neural networks for advanced analysis; Natural Language Processing, which helps machines understand human language; and Computer Vision, which enables interpretation of visual data. Today, AI is widely used across education, healthcare, industry, business, and research, improving efficiency, speed, and accuracy in decision-making processes.

Role of Artificial Intelligence in Educational Research

1. Assistance in Data Analysis

Artificial Intelligence (AI) has significantly transformed and advanced the process of data analysis in educational research. In the contemporary era, education systems generate extremely large and complex datasets that include students' academic performance, attendance records, behavioral patterns, socio-economic background, and online learning activities. Traditionally, analyzing such multidimensional data was a time-consuming and challenging task, often limited by human capacity and manual methods. AI has simplified and strengthened this process through advanced algorithms that not only organize and classify data but also identify hidden patterns, relationships, and trends within it. For instance, AI can determine which factors have the greatest influence on student achievement or identify the conditions under which learning outcomes decline. Moreover, AI enables real-time data analysis, allowing researchers to generate immediate insights and adjust their research focus whenever required. As a result, AI enhances the precision of data analysis and makes educational research more systematic, evidence-based, and comprehensive in nature.

2. Personalized Learning

Personalized learning has become an essential aspect of modern education, and Artificial Intelligence plays a crucial role in making it practical and effective. Every learner has unique abilities, learning speeds, interests, and backgrounds, yet traditional education systems often adopt a uniform teaching approach for all students. AI addresses this limitation by analyzing individual student data and creating customized learning experiences. Adaptive learning systems powered by AI can identify

areas where a student requires additional support, determine suitable learning materials, and adjust the pace of instruction accordingly. For example, if a student struggles in mathematics, AI can provide additional practice exercises, video tutorials, and simplified explanations. Conversely, students who perform well can be offered advanced-level content to further enhance their knowledge. From a research perspective, this capability is highly valuable as it allows researchers to examine differences in learning behavior, cognitive development, and performance patterns. It also helps in identifying the most effective teaching strategies under different learning conditions. Thus, AI strengthens both personalized education and educational research by adding depth and relevance.

3. Prediction and Forecasting

One of the most powerful capabilities of Artificial Intelligence is its ability to make predictions and forecasts, which plays a vital role in educational research. AI models analyze historical as well as real-time data to predict students' future academic performance, success probability, and dropout risks. Such predictive insights enable educational institutions to take timely and proactive measures. For example, if a student is identified as being at risk of dropping out due to poor performance or irregular attendance, institutions can introduce interventions such as counseling, remedial classes, or academic support programs. Furthermore, AI is also highly useful in educational planning and policy-making. By predicting the possible outcomes of educational programs and reforms, it helps policymakers design more effective and practical strategies. Therefore, AI makes the education system more proactive, responsive, and future-oriented.

4. Automated Assessment

Assessment is a fundamental component of the educational process, and Artificial Intelligence has greatly improved its efficiency and accuracy. Traditional evaluation systems are often time-intensive and may suffer from human bias and inconsistencies. AI-based automated assessment systems address these limitations effectively. AI is capable of evaluating not only objective-type questions but also complex forms of assessment such as descriptive answers, essays, and project-based work. It assesses responses based on grammar, structure, logical reasoning, depth of content, and overall presentation. Additionally, AI provides instant feedback to learners, enabling them to quickly identify mistakes and improve their performance. In educational research, this continuous and objective evaluation data is extremely valuable for producing reliable and accurate findings. It also supports large-scale assessments, making national and international comparative studies more feasible. Thus, AI ensures that the evaluation process becomes more transparent, consistent, fair, and efficient.

5. Saving Time and Cost in Research

Artificial Intelligence significantly improves the efficiency of educational research by saving both time and financial resources. In traditional research approaches, processes such as data collection, classification, analysis, and report generation require substantial time, effort, and manpower. AI automates these tasks, making them faster, more accurate, and less labor-intensive. For example, survey data can be collected, organized, and analyzed within a very short time using AI-based tools. This allows researchers to focus more on interpretation, theoretical development, and deep analysis rather than routine processing tasks. Additionally, AI makes high-quality research possible even with limited resources, which is especially beneficial for developing regions and institutions. It also improves research reproducibility, as standardized and automated processes reduce inconsistencies

in outcomes. Therefore, AI not only reduces time and cost but also enhances the structure, efficiency, and overall quality of educational research.

Advantages of Artificial Intelligence in Educational Research

1. Increase in Accuracy and Reliability

Artificial Intelligence (AI) has become a key factor in significantly improving the accuracy and reliability of educational research. In conventional research methodologies, the process of data analysis was heavily dependent on human involvement, which often introduced errors, subjective bias, and limitations in interpretation. However, AI replaces much of this dependency with advanced algorithms and statistical models that process data in a highly objective, consistent, and systematic manner. AI is capable of detecting complex relationships, hidden patterns, and subtle correlations within large datasets that may not be easily identified through manual analysis. This leads to more precise and scientifically valid outcomes. Furthermore, AI-based systems are designed to learn continuously from new data, which gradually improves their performance and enhances the quality of research results over time. Another major advantage of AI is its ability to ensure reproducibility. Under similar conditions, AI systems can produce consistent results, which strengthens the credibility of research findings. As a result, AI enhances reliability, validity, and objectivity—three fundamental pillars of any scientific research process.

2. Effective Management of Big Data

In today's digital era, educational institutions generate massive volumes of data, which include both structured and unstructured forms of information. Managing, organizing, and analyzing such large datasets using traditional methods is extremely challenging and often inefficient. Artificial Intelligence provides an effective solution to this issue through intelligent data processing capabilities. AI-based systems are not only capable of securely storing large amounts of data but also of classifying, filtering, and analyzing it to extract meaningful insights. For instance, data obtained from digital learning platforms—such as student engagement levels, academic performance, and behavioral interactions—can be examined to identify the most effective learning resources and teaching methods. In addition, AI supports real-time data processing, which allows researchers to obtain immediate insights and respond quickly to evolving educational needs. This capability is particularly useful for improving decision-making processes and implementing timely interventions in educational systems. Therefore, AI does not merely manage large datasets; it transforms raw information into meaningful knowledge, thereby making educational research more productive, insightful, and impactful.

3. Automation of the Research Process

Artificial Intelligence has greatly enhanced the efficiency of educational research by automating several complex and time-consuming tasks. In traditional research approaches, activities such as data collection, data entry, classification, analysis, and report writing require considerable time, effort, and human resources. AI automates these processes, enabling faster, more accurate, and more efficient execution of research tasks. For example, AI-powered tools can collect survey data, organize it systematically, and perform detailed analysis within a short span of time. This reduces the workload of researchers and allows them to focus more on conceptual understanding, interpretation, and theoretical development. Moreover, AI improves the quality of literature review processes by analyzing a vast number of academic papers and extracting relevant and updated

information. This helps researchers stay informed about current trends and advancements in their field. Automated data analysis and report generation further streamline the research workflow, allowing high-quality research outputs to be produced in less time. Standardization introduced through automation also ensures consistency and reduces variability in research outcomes, thereby improving transparency and overall research quality.

4. Facilitation of Personalized and Adaptive Learning

Artificial Intelligence plays a significant role in transforming the teaching and learning process into a more personalized and flexible experience. Every learner possesses unique characteristics, including different learning speeds, interests, cognitive abilities, and levels of understanding. AI helps in recognizing these differences and tailoring educational content accordingly. AI-driven adaptive learning systems continuously monitor and analyze student performance data. Based on this analysis, they provide customized learning resources, practice exercises, and feedback that suit individual learning needs. This ensures that each learner receives education aligned with their personal abilities and progress rate. For example, students who struggle in certain subjects receive additional support materials, simplified explanations, and practice opportunities, while advanced learners are provided with more challenging and enriched content to further enhance their knowledge. From a research perspective, this personalization is highly valuable as it enables detailed study of learning behaviors, cognitive differences, and academic performance patterns. It also assists in identifying the most effective instructional methods for different types of learners and educational contexts. Thus, AI promotes a more inclusive, flexible, and learner-centered educational environment while also strengthening the depth and quality of educational research.

5. Support in Policy Formulation

Artificial Intelligence has emerged as a powerful tool in supporting the development, evaluation, and improvement of educational policies. By providing data-driven insights, AI enables policymakers to understand real-world educational challenges and make more informed and accurate decisions. For instance, AI can analyze educational data to identify regions with insufficient resources, detect groups of students who are underperforming, or evaluate policies that are not delivering expected results. Such insights help in designing more targeted and effective educational strategies. Additionally, AI-powered predictive analytics can forecast the possible outcomes of implementing specific policies. This allows policymakers to anticipate potential challenges, risks, and opportunities before actual implementation, leading to more strategic planning. In this way, AI contributes to the creation of educational policies that are evidence-based, transparent, inclusive, and outcome-oriented. It ensures that policy decisions are grounded in factual data rather than assumptions, thereby improving the overall effectiveness of the education system.

Challenges and Limitations

1. Data Privacy

One of the most significant challenges associated with the use of Artificial Intelligence (AI) in educational research is the issue of data privacy and security. Educational institutions and researchers often collect highly sensitive personal information about students, including academic records, behavioral patterns, socio-economic background, and digital learning activities. Since this data is personal in nature, any unauthorized access, misuse, or leakage can seriously violate an

individual's privacy rights. AI systems typically rely on large-scale data collection and processing, which increases the risk of cyberattacks, data breaches, and unauthorized data exploitation. In many cases, users are also not fully aware of how their personal information is being collected, stored, or utilized by AI systems. This lack of transparency further raises privacy concerns. Therefore, strict compliance with data protection regulations, use of advanced encryption methods, and adherence to ethical standards are essential. Ensuring strong data privacy and security measures is a fundamental requirement for the responsible and effective application of AI in educational research.

2. Technical Complexity

Artificial Intelligence is a highly advanced and technically complex field that requires specialized knowledge, training, and skills for its effective implementation. For many researchers and educators, understanding AI tools, operating complex systems, and interpreting analytical outputs correctly can be quite challenging. Technologies such as Machine Learning, Deep Learning, and data analytics demand a strong foundation in programming, mathematics, statistics, and algorithmic thinking. Due to this complexity, a large number of educators and researchers face difficulties in adopting and integrating AI into their research practices. Furthermore, limited access to technical infrastructure and a shortage of trained professionals act as additional barriers. To address these challenges, it is important to promote structured training programs, workshops, and initiatives focused on digital literacy. Such efforts can help researchers and educators develop the necessary skills to effectively utilize AI technologies in educational research.

3. Cost Factor

The implementation and development of Artificial Intelligence-based systems often involve high costs, making it a major limitation in the field of educational research. AI systems require advanced hardware, specialized software, strong data infrastructure, and highly skilled professionals, all of which demand significant financial investment. This becomes particularly challenging for developing countries and educational institutions that operate with limited budgets and resources. In addition to initial setup costs, continuous expenses are also required for system maintenance, regular updates, and cybersecurity protection. Although AI can reduce operational costs and save time in the long term, the initial investment remains a substantial challenge for many institutions. Therefore, collaborative efforts between governments, educational organizations, and private institutions are necessary to make AI technologies more affordable and widely accessible.

4. Ethical Issues

Ethical concerns represent another critical challenge in the application of Artificial Intelligence in educational research. One major issue is algorithmic bias. If the data used to train AI systems is biased or unbalanced, the results generated by these systems may also reflect the same bias, leading to unfair or inaccurate outcomes. Another important concern is the lack of transparency in AI decision-making processes, often referred to as the "black box" problem. In such cases, it becomes difficult to understand how or why a particular decision has been made by an AI system, which raises questions about accountability and trust. From an ethical standpoint, it is essential that AI systems operate in accordance with human values, fairness, equality, and justice. Improper or uncontrolled use of AI can deepen social inequalities and create discrimination in educational opportunities. Therefore, the establishment of clear ethical guidelines, accountability frameworks, and monitoring mechanisms is necessary to ensure that AI is used responsibly, transparently, and in

the best interest of society.

Future Prospects

In the coming years, Artificial Intelligence (AI) is expected to play a transformative role in making educational research more advanced, innovative, and adaptive. With the continuous growth of digital technologies, AI is increasingly being integrated into the education sector, where it is reshaping traditional research methodologies and introducing new approaches to knowledge creation. Future developments such as smart classrooms, virtual learning environments, augmented reality (AR), virtual reality (VR)-based instruction, and data-driven decision-making systems are likely to significantly transform the education system. These advancements will enable researchers to generate quicker, more precise, and more reliable outcomes while addressing complex educational challenges in a more effective manner.

For instance, AI can deeply analyze students' learning patterns, behaviors, and interactions to identify ways of making the learning process more engaging, interactive, and effective. It will also contribute to the promotion of inclusive education by offering personalized learning experiences that cater to students from diverse social, cultural, and academic backgrounds, as well as varying learning abilities. In addition, AI-driven research will encourage greater interdisciplinary collaboration by integrating fields such as education, psychology, data science, and information technology. This integration will make the education system more scientific in approach, flexible in design, and outcome-oriented in implementation. AI is also expected to play an increasingly important role in educational policy formulation, curriculum design, and the improvement of teaching-learning methodologies.

However, alongside these promising opportunities, it is equally important to ensure that ethical standards, transparency, and data security are given top priority in the use of AI technologies. If these critical aspects are managed responsibly and effectively, Artificial Intelligence will significantly contribute to making educational research more accurate, inclusive, impactful, and globally relevant in the future.

Conclusion

Artificial Intelligence (AI) has emerged as a highly transformative and influential tool in the domain of educational research. It has effectively addressed many limitations of traditional research approaches, making the entire process more accurate, data-oriented, and outcome-focused. The integration of AI has not only enhanced the quality, reliability, and speed of research but has also contributed significantly to the development of a more effective, adaptive, and learner-centered education system. With the help of AI, researchers are able to examine complex educational issues in greater depth, process and analyze large volumes of data, and derive meaningful insights that support improvement in various dimensions of education. These include teaching methodologies, student learning outcomes, assessment techniques, and policy formulation. Consequently, the education system is gradually becoming more inclusive and responsive to the diverse needs of learners from different backgrounds, abilities, and learning environments. At the same time, the extensive use of Artificial Intelligence also introduces several important challenges. These include ethical concerns, issues related to data privacy and security, technological complexity, and unequal access to resources. If these challenges are not properly addressed, they may lead to negative implications for both

education systems and research practices. Therefore, it is crucial to establish clear policies, ethical frameworks, and robust security mechanisms to ensure the responsible and regulated use of AI in education. In conclusion, if Artificial Intelligence is implemented in a balanced, transparent, and ethically sound manner, it holds the potential to elevate educational research to a significantly higher level. In the future, AI is expected not only to strengthen research capabilities but also to play a key role in promoting innovation, equality, and quality within the education system.

References

1. Agarwal, J. C. Essentials of Educational Technology. Vikas Publishing House, 2019, pp. 45–62
2. Best, John W., and James V. Kahn. Research in Education. PHI Learning Pvt. Ltd., 2016, pp. 78–95
3. Kothari, C. R. Research Methodology: Methods and Techniques. New Age International Publishers, 2014, pp. 102–120
4. Mangal, S. K. Advanced Educational Psychology. PHI Learning Pvt. Ltd., 2018, pp. 210–230
5. Sharma, R. A. Educational Research and Statistics. Surya Publications, 2017, pp. 134–150
6. Bhatia, K. K. Principles and Practice of Education. Kalyani Publishers, 2015, pp. 98–115
7. Pandey, K. P. Educational Technology. Vinod Pustak Mandir, 2020, pp. 55–70
8. Singh, Yogesh Kumar. Fundamentals of Research Methodology and Statistics. New Age International, 2013, pp. 88–105
9. Siddiqui, Mujibul Hasan. Educational Technology. APH Publishing Corporation, 2016, pp. 67–82
10. Chauhan, S. S. Innovations in Teaching-Learning Process. Vikas Publishing House, 2014, pp. 120–140
11. Nagar, S. L. Educational Research. Laxmi Narain Agarwal Publications, 2018, pp. 150–170
12. Kumar, Ranjit. Research Methodology: A Step-by-Step Guide for Beginners. Sage Publications India, 2019, pp. 200–220
13. Goel, D. R. Educational Technology and Management. Deep & Deep Publications, 2015, pp. 75–90
14. Anand, S. P. Modern Trends in Education. Anmol Publications, 2017, pp. 130–150
15. Gupta, S. P. Statistical Methods. Sultan Chand & Sons, 2018, pp. 95–110
16. Singh, A. K. Tests, Measurements and Research Methods in Behavioural Sciences. Bharati Bhawan, 2012, pp. 180–200
17. Sharma, S. R. Teacher Education and Educational Technology. Anmol Publications, 2016, pp. 145–165
18. Das, R. C. Educational Technology: A Basic Text. Sterling Publishers, 2013, pp. 60–80
19. Jha, M. E-Learning and ICT in Education. Discovery Publishing House, 2021, pp. 25–45
20. Mishra, R. C. Educational Technology. APH Publishing Corporation, 2017, pp. 100–120

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

झारखंड की आदिवासी भाषाएँ : संकटग्रस्त विरासत और संरक्षण की रणनीतियाँ

प्रो. रवि रंजन कुमार
प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
नागालैंड विश्वविद्यालय, कोहिमा

प्रस्तावना : झारखंड अपनी समृद्ध सांस्कृतिक और भाषाई विविधता के लिए विश्व स्तर पर पहचाना जाता है। यहाँ की आदिवासी भाषाएँ संकटग्रस्त विरासत का प्रतीक मात्र नहीं, अपितु एक जीवंत सांस्कृतिक पारिस्थितिकी का संरक्षणीय आधार हैं। संताल, हो, मुंडा, ओरॉंव, खड़िया, भूमिज, बिरहोर, माहिली, बिरजिया, पहाड़िया और असुरी जैसे प्रमुख समुदायों की भाषाएँ महज़ संचार के माध्यम नहीं हैं, बल्कि वे उस गहरे पारिस्थितिक ज्ञान, लोककथाओं और आध्यात्मिक परंपराओं की वाहक हैं, जो सदियों से इस क्षेत्र की पहचान रही हैं। हालाँकि, वैश्वीकरण के इस दौर में ये भाषाएँ अस्तित्व के एक गंभीर संकट का सामना कर रही हैं। यह आलेख इन भाषाओं की वर्तमान स्थिति, उनके विलुप्त होने के कारणों और उनके संरक्षण के लिए आवश्यक रणनीतियों का विश्लेषण करता है।

बीज शब्द : सांस्कृतिक, भाषाई विविधता, भाषाई संरचना, भाषाई संरक्षण, भाषाई भूगोल, पारिस्थितिक ज्ञान।

विश्लेषण : झारखंड की भाषाई संरचना मुख्य रूप से ऑस्ट्रो-एशियाई और द्राविड़ भाषा परिवारों के मिलन स्थल के रूप में देखी जा सकती है। संताली, मुंडारी, हो, खड़िया, भूमिज, माहिली, बिरहोरी, बिरजिया और असुरी जहाँ ऑस्ट्रो-एशियाटिक भाषा परिवार में आने वाली भाषाएँ हैं वहीं कुड़ुख तथा माल्टो क्रमशः ओरॉंव तथा सौरिया पहाड़िया जनजाति की भाषाएँ हैं जो द्राविडियन भाषा परिवार के अंतर्गत आती हैं। ये भाषाएँ महज़ ध्वनियों का समूह नहीं हैं, बल्कि ये प्रकृति के साथ मनुष्यों के आत्मीय संबंधों को अभिव्यक्त करती हैं। इस भाषाई विविधता का भूगोल हमें यह बताता है कि प्रत्येक जनजाति का अपना एक अनूठा विश्वदृष्टि है, जो उनकी मातृभाषा में निहित है। प्रश्न उठता है कि झारखंड में निवास करने वाले प्रत्येक जनजातीय समाज की भाषा उनके उदय काल से ही अलग-अलग थी या इतिहास की उठापटक ने उनकी भाषाओं में अंतर पैदा किए? झारखंड के इतिहासकारों की मानें तो, "झारखण्ड के आदिवासियों की भाषा एक भाषा परिवार में सम्मिलित थीं। क्योंकि झारखण्ड में उराँव और मुण्डा, हो, खड़िया आदि जनजातियाँ एक समान भू-भाग में रहते आये हैं और रह रहे हैं। द्राविड़ भाषा 'कुडुख' और आग्नेय भाषा 'मुण्डारी' आदि में उपर्युक्त सभी तथ्य मौजूद हैं। आज आदिवासी कहने से उपर्युक्त सभी जनजाति आ जाते हैं। किसी समय ये सभी द्राविड़ कहलाते थे। उसी आधार पर उनकी भाषा भी द्राविड़ परिवार थी। मुंडारी लोक कथा एवं अन्य ग्रंथों में भी इसकी चर्चा की गई है।"[1] 1854 ई. के आसपास मैक्स मूलर ने द्राविड़ से कोल को पृथक वर्ग प्रदान कर उसका 'मुण्डा' नामकरण किया। इसका कारण उन्होंने भाषायी मिश्रण और व्याकरणिक अंतर को माना और इसके भाषावैज्ञानिक अध्ययन की जरूरत पर बल दिया। उन्होंने यह इंगित किया कि—"भाषा विज्ञान का अध्ययन, जैसे बोलियों का उत्थान और पतन, या भाषाओं का सम्भावित मिश्रण, सिर्फ शब्दों को लेकर नहीं, बल्कि व्याकरण संबंधी तत्त्वों में भी—भारत के आर्यों, द्राविड़ों और मुंडा निवासियों में भी किया जा सकता है, जब से विभिन्न आक्रान्ताओं और विजेताओं के सम्पर्क में

आए, जैसे—ग्रीक, यू ची, अरब, ईरानी, मुगल और अंत में अंग्रेज।"[2] क्या हम इसे भाषा का विकास मानें या परिवर्तन? का पूर्णतः मिश्रण? झारखंड की आदिवासी भाषाओं के सन्दर्भ में इसे देखने का क्या हमें कोई अलग अपनाना मानदंड होगा या भाषायी परिवर्तन की यह प्रक्रिया यहाँ भी समरूप लागू होगी? डॉ. रामविलास शर्मा का भी मानना है, "भाषा का विकास क्यों होता है, यह जानने से पहले इस बात पर मत स्थिर करना चाहिए कि विकास होता भी है या नहीं। भाषा में परिवर्तन होता है, इस बात से सभी विद्वान् सहमत हैं किन्तु इस परिवर्तन की कोई दिशा भी है या नहीं, इस बारे में मतभेद है।"[3] उन मतभेदों में गए बिना हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि भाषा असंदिग्ध रूप से परिवर्तनशील है। वह एक नदी के समान है जिसमें विभिन्न सहायक नदियाँ अपना जल मिला देते हैं—उसके बाद फिर यह स्पष्ट कर पाना असम्भव हो जाता है कि इस जल समूह में किन नदियों का जल कितना है।

जहाँ तक मैं समझता हूँ कि इसे भाषा के विकास की अपेक्षा भाषायी परिवर्तन की संदर्भात्मक प्रक्रिया के रूप में देखना अधिक उपयुक्त है, क्योंकि यहाँ रचना, व्याकरण और शब्दकोश धीरे.धीरे संशोधित होते रहते हैं, न कि किसी एक क्षण में नये रूप का जन्म। झारखंड की आदिवासी मुंडा भाषाओं के संदर्भ में भी यही प्रक्रिया लागू है, यानी इंडो-आर्यन और द्राविड़ भाषाओं से ध्वनि, शब्दकोश और कुछ वाक्य रचनात्मक प्रभाव आते हैं, किन्तु मुंडा भाषाओं की 'संयोजनात्मक व्याकरणिक संरचना' और 'व्याकरणिक मूल' अपेक्षाकृत संरक्षित रहता है। अतः यहाँ भी भाषायी परिवर्तन की तुलनात्मक.ऐतिहासिक प्रक्रिया समरूप रूप से लागू होती है। इसलिए अलग मानदंड उतना ज़रूरी नहीं जितना आदिवासी समुदाय के जातीय अस्मिता के संदर्भ में इस परिवर्तन की गति, घनत्व और सामाजिक निर्भरता का गहन विश्लेषण। डॉ. सिकरादास तिर्की [4] ने झारखंड की आदिवासी भाषाओं के इतिहास के अध्ययन के सन्दर्भ में इसका गहन विश्लेषण किया है। उनका मानना है—जब तक भाषाओं का व्याकरणिक आधार पर वर्गीकरण नहीं हुआ था तब तक वे खुद को एक ही भाषा समुदाय के मानते थे। कालांतर में झारखण्ड के आदिवासी दो भाषा समुदाय एवं मूल जाति में बँट गई। आदि द्राविड़ भाषा परिवार की भाषा ओराँव जाति की रही और इससे अलग होकर मुण्डा जाति एवं उनकी भाषा ने स्वतंत्र मुण्डारी मूल भाषा 'आग्नेय परिवार'[5] का निर्माण किया। यही कारण है वर्त्तमान ओराँव और मुण्डा जाति की भाषा में निकटतम का संबंध है। घर के सभी सामानों के नाम, व्यक्तियों के नाम, पर्व-त्योहार, रीति-रिवाजों के नाम, देवी-देवताओं के नाम आदि। जाति के दृष्टिकोण से ये भले अलग-अलग हैं पर धर्म के रूप में आज भी इन सबकी एकता बरकरार है। प्राचीनता में कोई भेद नहीं। इसके अतिरिक्त कुडुख और मुण्डारी भाषा में पचास प्रतिशत से अधिक समानताएँ देखी गई हैं। वर्त्तनी में भले भिन्नता आई हो परन्तु उच्चारण एवं अर्थ में दोनों एक ही हैं। उदाहरणस्वरूप शब्दों की कमी नहीं है। इनमें जितनी भिन्नताएँ मानी जा रही हैं, उतनी ही अभिन्नता भी है। इन्हें मौलिक रूप से देखने से ही स्पष्ट हो जा सकता है। मुण्डारी भाषा के अदीठ विद्वान प्रो. दिनेश्वर प्रसाद ने यह शोधकर बतलाया है कि "वैदिक काल में ही, मुण्डा भाषाएँ आग्नेय-एशियाई प्रकार की भाषा से बहुत भिन्न हो गई थीं और अनेकानेक उपभाषाजनित ध्वन्यात्मक परिवर्तनों तथा शब्द-रचना—रचना में प्रत्ययों के समावेश के परिणामस्वरूप एक स्वतंत्र प्रकृति का विकास कर चुकी थीं। इन दोनों बातों से मुण्डा भाषाओं के द्राविड़ीकरण की वह प्रक्रिया आरम्भ होती है जिसने अन्ततोगत्वा उनको अश्लिष्ट योगात्मक भाषाओं का रूप प्रदान किया है।"[6]

प्रो. दिनेश्वर प्रसाद और डॉ. तिर्की के निष्कर्षों से यह स्पष्ट होता है कि प्रारंभिक काल में यह आदिवासी भाषाएँ व्याकरणिक आधार पर वर्गीकृत न होने के कारण एक ही भाषा-समुदाय के रूप में परिचित थीं। कालांतर में ओराँव एवं मुंडा जातियों का विभाजन हुआ, जहाँ ओराँव भाषा आदि द्राविड़ परिवार से संबद्ध रही, जबकि मुंडा भाषा ने स्वतंत्र 'आग्नेय परिवार' स्थापित किया। फिर भी, दोनों में निकटतम संबंध विद्यमान है, जो घरेलू वस्तुओं, व्यक्तिगत नामों, पर्व-त्योहारों, रीति-रिवाजों एवं देवी-देवताओं के नामों में प्रतिबिंबित होता है। वैदिक काल से मुंडा भाषाएँ आग्नेय-एशियाई परिवार से भिन्न हो चुकी थीं। ध्वन्यात्मक परिवर्तन, उपभाषाओं का उदय एवं शब्द-रचना में प्रत्ययों का समावेश इनके स्वतंत्र स्वरूप का आधार बने। विशेष रूप से, 'द्राविड़ीकरण' प्रक्रिया ने इन्हें अश्लिष्ट योगात्मक भाषाओं का रूप प्रदान किया। यह प्रक्रिया 'भाषाई बॉरोइंग' एवं 'भाषाई संपर्क' का परिणाम है, जो द्राविड़ भाषा-परिवार के प्रभाव को इंगित करती है। सांस्कृतिक दृष्टि से, जातीय विभाजन

होते हुए भी धार्मिक एकता—'सरना/सिंगबोंगा' भाषाई साम्य को मजबूत करती है। यह 'भाषा-संरक्षण के माध्यम से सांस्कृतिक पहचान' के सिद्धांत को पुष्ट करता है। झारखंडी आदिवासी भाषाओं का वर्गीकरण 'एकभाषिकता' से 'बहुभाषिकता' की ओर संक्रमण यह भी दर्शाता है कि इससे ही 'वैश्विक भाषा-विकास मॉडल'[7] ने प्रेरणा ग्रहण की हो।

बहरहाल, झारखंड का 'भाषाई भूगोल' किसी भी रूप में स्थिर नहीं रहा है। इसका मूल कारण यहाँ निवासियों का निरंतर विस्थापन, प्रवास, अंतःक्रिया और भौगोलिक अनुकूलन होता रहा है। मुंडा भाषा परिवार, जिसे ऑस्ट्रो-एशियाटिक समूह के अंतर्गत वर्गीकृत किया जाता है, इस क्षेत्र के मूल निवासियों की भाषाई पहचान का आधार है। संताली, मुंडारी, हो और खड़िया जैसी भाषाएँ इस परिवार का प्रतिनिधित्व करती हैं। इनका भौगोलिक विस्तार मुख्य रूप से छोटानागपुर के पठारी क्षेत्रों में है। इन भाषाओं की संरचनात्मक बनावट में 'प्रकृति-केंद्रित' शब्दावली की प्रचुरता यह दर्शाती है कि इनका विकास वनों, पहाड़ियों और नदियों के सान्निध्य में हुआ है। दूसरी ओर, द्राविड़ परिवार की कुड़ुख (ओराँव) और माल्टो भाषा का अस्तित्व इस क्षेत्र में एक विशिष्ट द्वैत को जन्म देता है जिसके बारे में पूर्व में चर्चा हो चुकी है।

गौरतलब है कि हमारी भाषा महज़ विचार का माध्यम नहीं है, बल्कि यह सांस्कृतिक विश्वदृष्टि की वाहक भी है। मुंडा भाषाओं में 'एनिमिज्म' (जीववाद) के जो तत्व मिलते हैं, वे केवल धार्मिक विश्वास नहीं हैं, बल्कि वे भाषा की व्याकरणिक संरचना में भी निहित हैं। उदाहरण के तौर पर, इन भाषाओं में सजीव और निर्जीव के बीच जो वर्गीकरण है, वह बताता है कि कैसे यहाँ के निवासी प्रकृति को एक 'वस्तु' न मानकर एक 'सह-अस्तित्वकारी इकाई' मानते हैं। जब हम कहते हैं कि 'भाषा प्रकृति के साथ आत्मीय संबंधों को अभिव्यक्त करती है', फिर इसका अर्थ यह है कि इन भाषाओं की शब्दावली पारिस्थितिक तंत्र से गहराई से जुड़ी है। कृषि चक्र, ऋतुओं के परिवर्तन, औषधीय पौधों का ज्ञान और वन संसाधनों का उपयोग—इन सबके लिए इन भाषाओं में विशिष्ट शब्दों का संचय है। इन शब्दों का लुप्त होना केवल एक शब्दकोश का ह्रास होना नहीं है, बल्कि उस पारिस्थितिकीय ज्ञान का अंत होना है, जिसने हजारों वर्षों से छोटानागपुर के वनों को संरक्षित रखा है।

जैसा कि हमने पहले भी बात की है कि—झारखंड के 'भाषाई भूगोल' को समझने के लिए औपनिवेशिक काल और उसके बाद हुए औद्योगिक प्रवासन के प्रभाव को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। औद्योगीकरण और शहरीकरण ने इन भाषाओं के भौगोलिक सीमाओं को उस समय भी तोड़ा था, अब उसे दूसरे रूप में तोड़ रहा है। जहाँ पहले भाषाएँ 'भौगोलिक एन्क्लेव' जैसे—मुंडारी भाषी क्षेत्र, कुड़ुख भाषी क्षेत्र, हो भाषी क्षेत्र, संताल भाषी क्षेत्र और खड़िया भाषी क्षेत्र में सुरक्षित थीं, वहीं अब वे एक 'भाषाई मिश्रण' का शिकार हो रही हैं। शहरी केंद्रों जैसे राँची, जमशेदपुर, बोकारो, धनबाद में, जहाँ विभिन्न जनजातीय समुदाय एक साथ रहते हैं, वहाँ 'संपर्क भाषा' के रूप में 'सदानी' भाषा—नागपुरी, खोरठा और कुड़माली का प्रभुत्व बढ़ा है। यह भौगोलिक परिवर्तन इन समुदायों के भीतर भाषाई पहचान के संकट को भी जन्म देता है। यह स्थिति एक ओर भाषाई एकीकरण की ओर संकेत करती है, तो दूसरी ओर मूल मातृभाषाओं के ह्रास की चिंता भी उत्पन्न करती है।

हमारे अब तक के हुए शोध यह बताते हैं कि जिन क्षेत्रों में संसाधनों का दोहन अधिक हुआ है, जैसे- कोयला खदान, आयरन, तांबा, बॉक्साईट का क्षेत्र—वहाँ मूल जनजातीय भाषाओं के बोलने वालों की संख्या में तेजी से गिरावट आई है। यह एक 'भाषाई विस्थापन' की प्रक्रिया है। जब कोई समुदाय अपनी ज़मीन से विस्थापित होता है, तो उसकी भाषा का भौगोलिक आधार भी छिन्न-भिन्न हो जाता है। अतः भाषा का संरक्षण अब सीधे तौर पर भूमि अधिकार और भौगोलिक सुरक्षा से जुड़ गया है। झारखंड की भाषाई विविधता को बचाने के लिए यह आवश्यक है कि हम इसे अध्ययन मात्र की वस्तु न बनाकर 'जीवंत परिसंपत्ति' के रूप में देखें। इसके भूगोल को पुनर्जीवित करने के लिए बहुभाषिक शिक्षा का विस्तार, डिजिटल मैपिंग और स्थानीय स्तर पर भाषाई समुदायों को अपनी संस्कृति को अभिव्यक्त करने के लिए मंच प्रदान करना अनिवार्य है। झारखंड की आदिवासी भाषाएँ इस क्षेत्र की आत्मा हैं। इनका भूगोल केवल मानचित्रों पर नहीं, बल्कि यहाँ के जंगलों, खेतों, लोकगीतों और जनमानस में अंकित है। इस भाषाई भूगोल की रक्षा करना केवल सांस्कृतिक संरक्षण नहीं है, बल्कि यह मनुष्य के उस 'आदिम विश्वदृष्टि' को बचाना है जो प्रकृति के साथ संतुलन में रहने की कला सिखाता है।

झारखंड के शैक्षणिक संस्थानों में आदिवासी भाषाओं को लंबे समय तक प्राथमिकता नहीं मिली, जिससे नई पीढ़ी अपनी जड़ों से कटती गई। अंग्रेजी और हिंदी के प्रभुत्व ने आदिवासी बच्चों के लिए उनकी मातृभाषा में शिक्षा प्राप्त करने के अवसरों को सीमित कर दिया है। रोजगार की तलाश में आदिवासी युवाओं का बड़े शहरों की ओर पलायन करना भाषाई ह्रास का एक बड़ा कारण है। वहाँ वे आजीविका के लिए प्रभुत्वशाली भाषाओं को अपनाने के लिए मजबूर होते हैं, जिससे अपनी मातृभाषा भाषा का उपयोग धीरे-धीरे कम हो जाता है। साथ ही, आधुनिक मीडिया और डिजिटल युग ने बाहरी सांस्कृतिक संरचनाओं को आदिवासी समाज पर थोपा है। इस प्रक्रिया में, आदिवासी भाषाओं की मौखिक परंपराएँ, जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होती थीं, अब कमजोर होने लगी हैं। UNESCO तथा अन्य शोध संस्थाओं की रिपोर्टें इस बात की पुष्टि करती हैं कि भारत की कई भाषाएँ खतरे में हैं, जिनमें झारखंड की आदिवासी भाषाएँ भी शामिल हैं। असुरी, बिरहोर और पहाड़िया जैसी भाषाओं की स्थिति तो और भी चिंताजनक है। भाषाई जनगणना के आँकड़े दर्शाते हैं कि इन भाषाओं के वक्ताओं की संख्या में निरंतर गिरावट आ रही है। यह भाषाई ह्रास केवल शब्दों का लुप्त होना नहीं है, बल्कि यह उस समुदाय की सामूहिक स्मृति और ज्ञान-भंडार का नष्ट होना भी है।

सन्दर्भ एवं टिप्पणी

1. तिर्की, डॉ. सिकरादास; झारखंड का इतिहास; पृ.17; प्यारा केरकेट्टा फाउंडेशन, राँची (झारखंड); सं.2015.
2. मैक्स मूलर; भारत हमें क्या सिखा सकता है?; पृ.24; राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली; 2023.
3. शर्मा, डॉ. रामविलास; भाषा और समाज; पृ.422; राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली; 2010.
4. तिर्की, डॉ. सिकरादास; पूर्वोद्धृत; पृ.17.
5. एथनोलॉग के अनुसार, इस परिवार में वर्तमान में 168 जीवित भाषाएँ हैं जिनकी दो प्रमुख शाखाएँ हैं : मुंडा शाखाः भारत में संताली, मुंडारी, हो, भूमिज, खड़िया, बिरहोरी आदि। मोन-ख्मेर शाखा : वियतनामी, ख्मेर (कंबोडिया), खासी (मेघालय) आदि भाषाएँ आती हैं।
6. प्रसाद, डॉ. दिनेश्वर; 'मुण्डारी और संस्कृत के पारस्परिक संबंध'; झारखंड एन्साइक्लोपीडिया खंड-4; पृ.356; (सं.) रणेन्द्र; वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली; सं.2008.
7. सैपिर-व्हॉर्फ की 'लिंग्विस्टिक रिलेटिविटी', यह बताती है कि कोई व्यक्ति जो भाषा बोलता है, वह असलियत, समझ और सांस्कृतिक दुनिया को देखने के उसके नज़रिए को आकार देती है। यह मॉडल एडवर्ड सैपिर और बेंजामिन व्हॉर्फ द्वारा विकसित की गई है जो यह बतलाती है कि भाषा सिर्फ़ उसे बताने के बजाय सोच पर असर डालती है।

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

हिंदी प्रवासी साहित्य का राजनैतिक और भौगोलिक आयाम

डॉ. बीरम देव
सहायक आचार्य, हिंदी
राजकीय कन्या महाविद्यालय, बूंदी

शोध सार

जब बात प्रवासी संस्कृति की आती है तो यह सवाल लाजिमी लगता है कि- जब कोई भारतीय विदेशी धरती पर रहते हैं तो वे भारतीय संस्कृति के प्रति लगाव रखते हैं, जबकि भारत में रहने पर विदेशी संस्कृति की पैरोकारी करते हैं। इसकी समीक्षा तो विभिन्न दृष्टिकोण से की जा सकती है। पहला वह, अपनी संस्कृति में प्रतिरोधक तत्व पाता है, जो उसे विदेशी धरती पर विदेशी असुरक्षा के विरुद्ध बल प्रदान करता है। दूसरा इतने बड़े विशाल जन समूह में अपनी पहचान खो न जाए इसके लिए वे अपनी संस्कृति से जुड़े रहना हितकर समझते हैं। इसी कारण वह भारतीय जब अपने देश में होते थे तो धार्मिक रीति-रिवाजों के प्रति उनका कोई कट्टरपन नहीं दिखाई देता था वहीं विदेशी भूमि पर वे आवश्यकता से अधिक कट्टर हो जाते हैं।

मुख्य शब्द- प्रतिरोधक, प्रतिरोधक, जनसमूह, संवहन, अपरदन, निक्षेपन, रूढ़िवादिता, बहुसंख्यक, अवधारणात्मक, गर्भाधान, संतानोत्पत्ति।

मूल शोध पत्र

अतः सभ्यता और संस्कृति एक बहती धारा है, जिसे निर्वाह बहने के लिए छोड़ दिया जाना चाहिए। इस पर मानव अपनी ओर से कोई अवरोध न खड़ा करें। नदी की धारा जानती है किसे साथ लेकर चलना है और किसे छोड़ना है। नदी जब बहती है तो मुख्यतः तीन प्रकार के कार्य करती है- संवहन, अपरदन और निक्षेपन। यह धारा पर ही छोड़ देना चाहिए कि वह किसका संवहन करेगी किसका अपरदन और फिर किसका निक्षेपन। यहाँ धारा का मतलब विशाल जनसमूह के मत से हैं। किसी छोटे समूह के मत से नहीं। इसे विशाल सागर रूपी विश्व सभ्यता और संस्कृति में मिलने की छूट मिलनी चाहिए।

सवाल यह है कि भारतीय विदेश जाते क्यों हैं? यहाँ से उन्हें क्या भिन्न लाभ मिलता है? इत्यादि। डॉ. एन. जयराम ने इस संदर्भ में लिखा है- ''विकसित देशों में (अमेरिका, कनाडा, ब्रिटेन) भारतीयों को इस कारण स्थान दिया जाता है क्योंकि सस्ते के साथ-साथ उनमें दक्षता भी है। इन देशों में प्रवासियों और नेटिव (मूल निवासी) में कोई खास भेदभाव नहीं किया जाता। भेदभाव है भी तो रंगभेद के स्तर पर। लेकिन अविकसित देशों में जहाँ अवसरों की कमी है, इसके कारण प्रवासियों और नेटिव में प्रतियोगिता बढ़ जाती हैं।''[1]

डॉ. एन. जयराम ने भी लिखा है- ''जमैका और त्रिनिडाड में भारतीयों को इसाई धर्म में शामिल करने के लिए अथक प्रयास किया गया। वे जमैका में सफल भी हुए क्योंकि वहाँ आर्य समाजी लोग कम संख्या में होने के कारण भारतीयों को बचा नहीं सके। वे त्रिनिडाड और टोबैगों में इसलिए असफल हो गए क्योंकि वहाँ भारतीयों की संख्या अधिक थी, जिसके

कारण आर्य समाजी लोगों ने विरोध किया।''[2]

बहुसंख्यक प्रवासी जो कैरिबियन आये थे उनमें अधिकांश यूनाइटेड प्रोविन्स (संयुक्त प्रांत–उत्तर प्रदेश व बिहार को संयुक्त प्रांत कहते है) से थे। हिन्दू और मुसलमान के अनुपात के संदर्भ में एन. जयराम ने लिखा है- हिन्दू और मुसलमान का औसत इस प्रकार था- 1901 का सेन्सस (आंकड़े) बताता है कि 85 प्रतिशत उत्तर प्रदेश के हिन्दू थे और 14 प्रतिशत मुस्लिम, जबकि बिहार से 92.7 प्रतिशत हिन्दू और 7.3 प्रतिशत मुस्लिम थे। इस प्रकार 1891 में त्रिनिडाड में 85.9 प्रतिशत हिन्दू थे और 13.44 प्रतिशत मुस्लिम।[3]

मनुष्य की जैविकीय रचना में जो आवश्यकताएँ अनिवार्य रूप में निहित है उन्हें हम प्राथमिक आवश्यकताएँ कह सकते हैं। इस कोटि में जीवन- रक्षा, विशेष रूप से भूख-प्यास की तृप्ति तथा यौन- आवश्यकताओं को रखा जा सकता है। ये आवश्यकताएँ अनेक नई आवश्यकताओं को जन्म देती है। उदाहरणार्थ यौन- आवश्यकता की पूर्ति से संबद्ध गर्भाधान, संतानोत्पत्ति, पराश्रयी शिशु की देख-रेख और रक्षा आदि समस्याएँ अपने आप एक के बाद एक आती जाती है और शीत के प्रकोपों से रक्षा के लिए मानव गृह निर्माण करता है।

जब प्रवासी हिन्दू कैरिबियन आये तो उन्होंने अपने धर्म को फिर से अपनाने का प्रयास किया और बदलती हुई चुनौतियों और परिस्थितियों में इसे स्थापित करने का प्रयास भी। किन्तु उन्होंने देखा कि कैरोल सोसायटी को इस पर शंका होने लगी है। इस प्रकार अपने अधिकार दिखाकर इसे रोकने का प्रयास किया। इन दोनों समुदायों के बीच धार्मिक अलगाव या विभेद और कभी-कभी कड़वाहट होने के बावजूद दोनों के बीच में पारस्परिक सम्मान भी था। दोनों के लिए धर्म उनकी पहचान का प्रमुख तत्व था। इस नये संसार में मातृभूमि से दूर, मातृभूमि से ज्यादा दूसरे को साथ लाने का जरिया था।

क्योंकि जब भय का भाव बन जाता है और मनुष्य की कुतूहल वृत्ति और रचनात्मक प्रवृत्ति बंधन हीन होती है तभी मनुष्य पशु सुलभ प्राकृतिकता से ऊपर उठकर समझौते और सहानुभूति के जीवन की ओर अग्रसर होता है।''[4]

अब हम यहाँ भारतीय संस्कृति की चर्चा करना चाहेंगे फिर विश्व संस्कृति के साथ तुलना करने के बाद यह स्पष्ट करना चाहेंगे कि विश्व संस्कृति के अवधारणात्मक मूल्य क्या हो सकते हैं? आदि। इस संदर्भ में हम प्रो. पुरुषोत्तम अग्रवाल की पुस्तक 'संस्कृति, वर्चस्व और प्रतिरोध' की चर्चा करना वाजिब समझेंगे। उन्होंने लिखा है- ''भारतीय की पहचान को वर्तमान भौगोलिक राजनीतिक यथार्थ तक सीमित नहीं किया जा सकता। भारतीय संस्कृति, भारतीय परम्परा, भारतीय नारी सरीखे पदों में भारतीय शब्द का प्रयोग केवल सूचनात्मक ढंग से नहीं किया जा सकता। यहाँ 'भारतीय' शब्द एक विशेष मूल्यबोध और भाव भूमि की व्यंजना करता है।''[5]

उन्होंने आगे लिखा है- ''भारत की संस्कृति पहले भी कहा गया है, अमुक मत सिद्धान्त से बंधी-घिरी नहीं है। वह नागरिक मूल्यों पर आधारित संगम-समागम को स्वीकार करने वाली ऐसी संस्कृति थी और है, जिसमें अतीत की स्वीकृति एवं निजीय जातीय रीति-नीति की स्वतंत्रता है। इसी में नाना देवता, उपासना विधि, तत्वदर्शन और मठ-मंदिर आदि खड़े होते गए।''[6]

भारत की राजनैतिक और भौगोलिक अवस्था इस बात की सूचक है कि भारत पर सदियों से आक्रमण होते रहे हैं। भारत की उत्तर-पश्चिम सीमा की ओर से ग्रीक, शक, यमन, हूण, मंगोल और इस्लाम का आक्रमण हुआ तो समुद्री मार्ग से यूरोपवासियों का आक्रमण तथा विस्तार। इन सारी चीजों ने भारत में एक अस्तव्यस्तता के साथ-साथ सीखने और सिखाने का मौका भी प्रदान किया। इनकी बर्बरता, विस्तारवादी नीति और राजनीतिक सामाजिक पक्षों को छोड़ दिया जाय तो कला और संस्कृति पर गहरा प्रभाव पड़ा। इस ओर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'सभ्यता और संस्कृति' शीर्षक निबंध में संकेत किया है- ''इस प्रकार मूल में भारतीय संस्कृति कई बलवती सभ्यताओं के योग से बनी हैं। आर्य-द्रविड़ और यक्ष नाग सभ्यता की त्रिवेणी से इस महाधारा का आरम्भ हुआ। बाद में अन्य अनेक सभ्य, अर्द्ध सभ्य और अल्प सभ्य जातियों की संस्कृतियाँ धर्म-मत, आचार, परम्परा और विश्वास उसमें घुसते गये। भारतीय-ज्योतिष, जो हमारी संस्कृति के निर्माण का एक जबरदस्त अंग है बहुत कुछ यवनों, बर्बरों, असुरों के विश्वास से प्रभावित है।''[7]

संस्कृति एक ऐसा गूढ़ विषय हैं वास्तव में संस्कृति को परिभाषाबद्ध करना भी एक जटिल प्रक्रिया है। यह काल और समय के परे हैं, क्योंकि किसी काल विशेष में संस्कृति के लिए जो परिभाषा और शब्द समायोजित प्रतीत होता है, कुछ समय बाद वह रूढ़ लगने लगती हैं। श्यामचरण दूबे के शब्दों में कहे तो- संस्कृति शब्द का प्रयोग भिन्न-भिन्न कालों एवं संदर्भो में भिन्न-भिन्न अर्थों में हुआ है।

शुरूआत में, संस्कृति के निर्माण में कई कारक बाधक सिद्ध होते हैं। अस्तव्यस्तता, आशंका, डर आदि के कारण व्यक्ति इस नई चीज को समझ नहीं पाते। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी इस और संकेत किया है। अस्तव्यस्तता, सशंकता और आरक्षणीयता का जहाँ अंत होता है, सिविलाईजेशन या सभ्यता वहीं से शुरू होती है, क्योंकि जब भय का भाव बन जाता है और मनुष्य की कुतूहल वृत्ति और रचनात्मक प्रवृत्ति बंधन हीन होती है तभी मनुष्य पशु सुलभ प्राकृतिकता से ऊपर उठकर समझौते और सहानुभूति के जीवन की ओर अग्रसर होता है।

भारतीय संस्कृति मोक्ष की खोज करती है, इसीलिए उसमें निहित धर्म-भावना दूसरों के प्रति अपने कर्तव्यों, दायित्वों का निर्वाह करने में मूर्त रूप लेती है। जैनेन्द्र कुमार ने 'संस्कृति आस्था और तत्वदर्शन' पुस्तक में कुछ ऐसा ही विचार प्रस्तुत किया है। संस्कृति क्या है? वह हैं जिसमें मनुष्य पशु से अलग पहचाना जा सकता है। पशु भूख में सीधे शिकार पर झपट सकता है मनुष्य में उसके लिए खेती की सोच आती है। उसकी माँग और पूर्ति में एकदम सीधे तोर से तर्क का संबंध नहीं होता। अपने स्वार्थ को उसे परस्परता में से साधना सीखना होता है। इसी में से संस्कारिता को जन्म मिलता है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में कह सकते है कि हिन्दी के प्रवासी साहित्य ने हिन्दी साहित्य की एक नयी दिशा खोली है, एक नया साहित्यिक संसार हमें मिला हैं, एक नया विचार, नयी संवेदना नयी जीवन-दृष्टि तथा नया सरोकार प्रवासी साहित्य ने प्रस्तुत किया है। हिन्दी का पाठक इससे समृद्ध हुआ है और उसे हिन्दी के माध्यम से वैश्विक चेतना की अनुभूति करने का अवसर मिला। जिससे भारतीय लोक कला संस्कृति सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक ताने बाने को भारत में ही नहीं बल्कि पुरे विश्व में एक नयी पहचान दिलाई। अब यह हिन्दी साहित्य का ही अंग है और इसे हिन्दी साहित्य के इतिहास में समुचित स्थान मिलना चाहिए।

संदर्भ

1. डॉ. एन. जयराम, पुस्तक-भारतीय प्रवासी गतिकी और प्रवास, पृष्ठ संख्या-56 संस्करण, 2003
2. डॉ. एन. जयराम, पुस्तक-भारतीय प्रवासी गतिकी और प्रवास, पृष्ठ संख्या-53
3. डॉ. एन. जयराम, पुस्तक-भारतीय प्रवासी गतिकी और प्रवास, पृष्ठ संख्या-133-134
4. हजारी प्रसाद द्विवेदी, हजारी प्रसाद ग्रन्थावली संख्या-9, पृष्ठ संख्या-19
5. पुरुषोत्तम अग्रवाल, संस्कृति वर्चस्व और प्रतिरोध, पृष्ठ संख्या-27
6. जैनेन्द्र कुमार, संस्कृति आस्था और तत्त्वदर्शन, पृष्ठ संख्या-46
7. हजारी प्रसाद द्विवेदी, हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रन्थावली-9, पृष्ठ संख्या-198

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

राजनीतिक संक्रमण के दौर में नेपाल और क्षेत्रीय भू-राजनीति

स्वेता कुमारी
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग
डॉ. लक्ष्मी कुमारी
सहायक प्राध्यापक
वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा, बिहार
ईमेल : Kumariswetask1975@gmail.com
मोबाइल : 9162133822

सारांश

2008 में राजशाही खत्म होने के बाद से, नेपाल राजनीतिक बदलाव के एक लंबे दौर से गुजरा है, जिसमें सरकार में बार-बार बदलाव, कमजोर गठबंधन और संस्थानिक अनिश्चितता रही है। आंतरिक अस्थिरता का यह दौर दक्षिण एशिया, खासकर नेपाल में चीन की रणनीतिक और आर्थिक मौजूदगी के तेजी से विस्तार के साथ हुआ है। इस पृष्ठभूमि में, नेपाल, चीन और भारत के बीच विकसित हो रहे त्रिकोणीय संबंध क्षेत्रीय भू-राजनीति का एक महत्वपूर्ण आयाम बनकर उभरे हैं। यह लेख जांच करता है कि नेपाल में राजनीतिक अस्थिरता ने चीन के लिए रणनीतिक अवसर कैसे पैदा किए हैं और भारत ने इन बदले समीकरणों पर कैसे प्रतिक्रिया दी है। यह नेपाल की विदेश नीति पर संवैधानिक सुधारों, पहचान-आधारित आंदोलनों और गठबंधन की राजनीति के प्रभाव का विश्लेषण करता है। यह अध्ययन बुनियादी ढांचे के विकास, बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव परियोजनाओं, सुरक्षा सहयोग और सॉफ्ट पावर कूटनीति के माध्यम से चीन की बढ़ी भागीदारी की भी पड़ताल करता है। साथ ही, यह नेपाल में भारत की पारंपरिक भूमिका और 2015 के सीमा संकट के बाद विश्वास में आई कमी के बाद उसकी बदली हुई रणनीतियों का आकलन करता है। नेपाल की घरेलू राजनीतिक चुनौतियों को व्यापक क्षेत्रीय शक्ति प्रतिस्पर्धा के संदर्भ में रखकर, यह लेख दिखाता है कि आंतरिक कमजोरी बाहरी प्रभाव को कैसे बढ़ाती है। यह तर्क देता है कि जबकि नेपाल विविध साझेदारियों के माध्यम से रणनीतिक स्वायत्तता चाहता है, लगातार अस्थिरता संतुलित विदेश संबंध बनाए रखने की उसकी क्षमता को सीमित करती है। यह निष्कर्ष निकालता है कि नेपाल में भारत का दीर्घकालिक प्रभाव चीन के साथ रणनीतिक प्रतिस्पर्धा पर कम और विश्वास के पुनर्निर्माण, आर्थिक एकीकरण को गहरा करने और नेपाल की राजनीतिक संवेदनशीलता का सम्मान करने पर अधिक निर्भर करेगा।

परिचय

नेपाल हिमालयी क्षेत्र में एक रणनीतिक रूप से संवेदनशील स्थिति में है, जो दो प्रमुख एशियाई शक्तियों, भारत और चीन के बीच स्थित है। ऐतिहासिक रूप से, नेपाल की विदेश नीति और आर्थिक नियति भौगोलिक निकटता, सांस्कृतिक समानता और ब्रिटिश काल के बाद के शुरुआती दौर में स्थापित संस्थानिक व्यवस्थाओं के कारण भारत से निकटता से जुड़े

हुए थे। 1950 की शांति और मैत्री संधि ने खुली सीमाओं, पारस्परिक आर्थिक अधिकारों और घनिष्ठ राजनीतिक सहयोग की स्थापना करके इन संबंधों को औपचारिक रूप दिया। दशकों तक, भारत नेपाल के प्रमुख व्यापारिक भागीदार, विकास भागीदार और सुरक्षा प्रदाता के रूप में कार्य करता रहा। इस लंबे समय से चले आ रहे रिश्ते ने एक संरचनात्मक असंतुलन पैदा किया, जिसमें नेपाल मार्केट एक्सेस, एनर्जी सप्लाई और लेबर मोबिलिटी के लिए भारत पर बहुत ज्यादा निर्भर था।

2006 में शुरू हुआ और 2008 में राजशाही खत्म होने के साथ खत्म हुआ राजनीतिक बदलाव ने इस ऐतिहासिक पैटर्न को कई महत्वपूर्ण तरीकों से बदल दिया। नेपाल का संवैधानिक राजशाही से संघीय लोकतांत्रिक गणराज्य में बदलना संस्थानिक पुनर्गठन और राजनीतिक पुनर्संरचना की एक जटिल प्रक्रिया थी। जबकि नए गणतांत्रिक ढांचे ने समावेशी शासन और राजनीतिक अस्थिरता का वादा किया था, इसके बजाय इस बदलाव से लंबे समय तक अस्थिरता बनी रही, जिसमें कमजोर गठबंधन, संवैधानिक विवाद और सरकार में बार-बार बदलाव हुए। राजनीतिक संस्थानों की कमजोरी और नेतृत्व की अस्थिरता ने नीतिगत निरंतरता को कमजोर किया और राज्य की सुसंगत दीर्घकालिक रणनीतियों को बनाने की क्षमता को कम कर दिया।

घरेलू अनिश्चितता का यह दौर क्षेत्रीय रणनीतिक माहौल में बड़े बदलावों के साथ हुआ। चीन के तेजी से आर्थिक विकास और बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव की शुरुआत ने बीजिंग को दक्षिण एशिया में एक तेजी से प्रभावशाली खिलाड़ी बना दिया। नेपाल, भारत पर पारंपरिक निर्भरता के विकल्पों और तेजी से विकास के अवसरों की तलाश में, चीन की क्षेत्रीय रणनीति में एक ग्रहणशील भागीदार के रूप में उभरा। चीनी इंफ्रास्ट्रक्चर निवेश, विकास सहायता और राजनयिक जुड़ाव के विस्तार ने नेपाल के बाहरी संबंधों में नई गतिशीलता लाई और भारत के पारंपरिक प्रभुत्व को चुनौती दी।

यह लेख 2008 से नेपाल में राजनीतिक अस्थिरता, चीन के बढ़ते प्रभाव और भारत की बदली प्रतिक्रिया के बीच बातचीत की जांच करता है। यह यह भी देखता है कि नेपाल की घरेलू कमजोरी ने बाहरी प्रतिस्पर्धा के प्रभाव को बढ़ा दिया है, जबकि साथ ही चीन और भारत दोनों की रणनीतियों को भी आकार दिया है। नेपाल के आंतरिक राजनीतिक विकास को क्षेत्रीय शक्ति परिवर्तन के व्यापक संदर्भ में रखकर, यह अध्ययन इस बात पर प्रकाश डालता है कि छोटे राज्यों में घरेलू परिवर्तन बड़ी शक्तियों की प्रतिद्वंद्विता के साथ कैसे जुड़ते हैं और क्षेत्रीय व्यवस्था को नया आकार देते हैं।

साहित्य की समीक्षा

इस अध्ययन से सम्बंधित विद्वानों के साहित्य को मोटे तौर पर तीन आपस में जुड़े खंडों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः नेपाल के राजनीतिक बदलाव का विश्लेषण, दक्षिण एशिया में चीन की बढ़ती भूमिका का अध्ययन, और बदलते भू-राजनीतिक माहौल में भारत-नेपाल संबंधों की जाँच।

नेपाल के राजनीतिक बदलाव पर शोध संघर्ष के बाद के पुनर्निर्माण और लोकतंत्र को मजबूती देने की कठिनाईयों पर जोर देता है। थापा और सिजापति (2016) माओवादी विद्रोह और उसके राजनीतिक आंदोलन में बदलने का एक व्यापक विवरण देते हैं, जिसमें संघीय पुनर्गठन, प्रतिनिधित्व और समावेशन के अनसुलझे मुद्दों पर जोर दिया गया है। उनका तर्क है कि पहचान-आधारित शिकायतों और संस्थागत कमजोरी के बने रहने से स्थिर शासन की शक्ति कम हुई। राणा (2020) भी इसी तरह देखते हैं कि नेतृत्व में बार-बार बदलाव और गठबंधन की अस्थिरता ने प्रशासनिक क्षमता को कम किया और सुसंगत सार्वजनिक नीति बनाने को सीमित किया। ये अध्ययन राजनीतिक अस्थिरता की संरचनात्मक जड़ों और शासन पर इसके प्रभावों को उजागर करते हैं।

विद्वता की दूसरी धारा नेपाल और व्यापक दक्षिण एशियाई क्षेत्र में चीन के बढ़ते प्रभाव पर केंद्रित है। बराल (2018) बताते हैं कि बेल्ट एंड रोड इनिशपिएटिव के लॉच के बाद चीन की भागीदारी प्रतीकात्मक कूटनीति से रणनीतिक साझेदारी में विकसित हुई। बुनियादी ढाँचे और कनेक्टिविटी परियोजनाओं में चीनी निवेश को विकास के अवसर और रणनीतिक लाभ के संभावित स्रोत दोनों के रूप में चि त्रित किया गया है। शर्मा (2021) चीनी वित्त पोषित परियोजनाओं के आर्थिक प्रभावों

की जाँच करते हैं, जिसमें ऋण निर्भरता और दीर्घकालिक वित्तीय संवेदनशीलता के जोखिम पर जोर दिया है। ब्रूस्टर (2017) नेपाल को चीन की व्यापक समुद्री और महाद्वीपीय रणनीतियों के भीतर रखता है, यह सुझाव देते हुए कि हिमालयी कनेक्टिविटी के भारत के लिए दीर्घकालिक सुरक्षा निहितार्थ हो सकते हैं।

साहित्य का तीसरा भाग भारत-नेपाल संबंधों और भारत के पारंपरिक प्रभुत्व के चरण का विश्लेषण करता है। पंत (2019) का तर्क है कि चीन की आर्थिक कूटनीति और नेपाल द्वारा रणनीतिक स्वायत्तता के दावे ने भारत के प्रभाव को कम किया है। 2015 के सीमी संकट के अध्ययन नेपाल में जनसमत को नया आकार देने और साझेदारी के विविधीकरण में तेजी लाने में इसकी भूमिका को रेखांकित करते हैं (बराल, 2018; राणा, 2020)। आचार्य (2014) इन घटनाक्रमों को क्षेत्रीय व्यवस्था के व्यापक परिवर्तन के भीतर रखते हैं, जिसकी विशेषता घटती एकध्रुवीयता और बढ़ती रणनीतिक प्रतिस्पर्धा है।

इन योगदानों के बावजूद, मौजूदा अध्ययन अक्सर नेपाल की आंतरिक अस्थिरता, चीन के उदय और भारत की प्रतिक्रिया को अलग-अलग घटनाओं के रूप में मानते हैं। कुछ ही विश्लेषण इन आयामों को एक एकीकृत ढाँचे में सम्मिलित करते हैं जो बताता है कि आंतरिक कमजोरी बाहरी प्रभाव को कैसे प्रभावित करती है। यह लेख नेपाल की विदेश नीति की दिशा तय करने में आंतरिक राजनीतिक अस्थिरता और क्षेत्रीय रणनीतिक प्रतिस्पर्धा के बीच तालमेल की जाँच करके इस कमी को पूरा करने की कोशिश करता है।

कार्यप्रणाली

यह अध्ययन वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक तरीकों पर आधारित एक गुणात्मक अनुसंजान डिजाइन का उपयोग करता है। डेटा के प्राथमिक स्रोतों में अकादमिक प्रकाशन, नीति दस्तावेज, सरकारी रिपोर्ट और अंतर्राष्ट्रीय संगठनों और थिंक टैंक द्वारा किए गए विश्लेषण शामिल हैं। माध्यमिक साहित्य नेपाल के राजनीतिक परिवर्तन और क्षेत्रीय भू-राजनीति को समझने के लिए सैद्धांतिक और अनुभव आधार प्रदान करता है, जबकि आधिकारिक दस्तावेज संस्थागत विकास और विदेश नीति के रूझानों पर प्रकाश डालते हैं।

विश्लेषणात्मक ढाँचा राजनीतिक अर्थव्यवस्था और भू-राजनीति को जोड़ता है, जो नेपाल को एक प्रतिस्पर्धी क्षेत्रीय वातावरण में एक छोटे राज्य के रूप में देखता है। यह अध्ययन नेपाल के विदेश नीति व्यवहार और बाहरी अभिनेताओं की प्रतिक्रियाओं को समझाने के लिए छोटे-राज्य कूटनीति, रणनीतिक संतुलन और शक्ति संक्रमण के सिद्धांतों पर आधारित है। तीन विश्लेषणात्मक आयाम जाँच का मागदर्शन करते हैंः आंतरिक राजनीतिक अस्थिरता, चीन की बढ़ती भागीदारी, और भारत का रणनीतिक पुर्नसन्तुलन।

राजनीतिक विकास, बुनियादी ढाँचा पहलों और राजनयिक बातचीत में बार-बार होने वाले पैटर्न की पहचान करने के लिए विषयगत सामग्री विश्लेषण का उपयोग किया जाता है। तुलनात्मक विश्लेषण प्रमुख घटनाओं से पहले और बाद में बाहरी प्रभाव में बदलाव का आकलन करता है, विशेष रूप से 2015 के संविधान के लागू होने और बेल्ट एंड रोड पहल में नेपाल के शामिल होने के बाद। व्याख्यात्मक विश्लेषण सम्प्रभुता, रणनीतिक स्वायत्तता और क्षेत्रीय प्रतिद्वन्द्रिता से सम्बन्धित आख्यानों की जाँच करता है।

यह अध्ययन माध्यमिक स्रोतों और सार्वजनिक रूप से उपलब्ध डेटा पर निर्भरता से सीमित है, जो गोपनीय राजनयिक वार्ताओं या आंतरिक निर्णय लेने की प्रक्रियाओं को शामिल नहीं कर सकता है। फिर भी, कई स्रोतों में त्रिकोणीयकरण विश्वसनीयता बढ़ाता है और विकसित हो रही गतिशीलता की एक व्यापक तस्वीर प्रदान करता है।

2008 के बाद नेपाल में राजनीतिक अस्थिरता

2008 में राजशाही के उन्मूलन ने नेपाल में एक नए राजनीतिक युग की शुरुआत की, लेकिन साथ ही लंबे समय तक अस्थिरता ही पैदा की। राजशाही से संघीय लोकतंत्र में संक्रमण के लिए राजनीतिक संस्थाओं के पुनर्गठन, शक्ति संबंधों

पर फिर से बातचीत और प्रतिस्पर्धी पहचान के दावों के सामंजस्य की आवश्यकता थी। ये प्रक्रियाएँ विवादास्पद और लंबी साबित हुई।

पहली संविधान सभा एक सर्वसम्मत संविधान बनाने में संघर्ष करती रही, जिससे बार-बार विस्तार और अंततः विघटन हुआ। राजनीतिक दल संघीय सीमाओं, चुनावी प्रणालियों और प्रतिनिधित्व तंत्र पर विभाजित रहे। 2015 के संविधान के लागू होने से संघवाद और गणतंत्रवाद को संस्थागत रूप दिया गया, लेकिन यह अंतर्निहित तनावों को हल करने में विफल रहा। मधेसी और थारू समुदायों के विरोध प्रदर्शनों ने गहरी शिकायतों को उजागर किया और शासन को बाधित किया।

गठबंधन की राजनीति ने स्थिरता को और कमजोर किया। लगातार सरकारें कार्यक्रमगत सामंजस्य के बजाय बदलते गठबंधनों के माध्यम से बनीं। प्रधानमंत्रियों ने शायद ही कभी पूरे कार्यकाल पूरे किए और कैबिनेट में फेर-बदल नियमित हो गया। इस अस्थिरता ने प्रशासनिक क्षमता को कमजोर किया और दीर्घकालिक निवेश को हतोत्साहित किया। गवर्नेंस की कमियाँ इंफ्रास्ट्रक्चर प्रोजेक्ट्स में देरी, धीमी आर्थिक सुधार और सीमित सर्विस डिलीवरी के रूप में सामने आईं। राजनीतिक संस्थाओं पर लोगों का भरोसा कम हुआ, जबकि राष्ट्रवादी भावना को ज्यादा अहमियत मिली। इस कमजोरी की वजह से बाहरी ताक तों को असर डालने का मौका मिला और इसने नेपाल की वैकल्पिक पार्टनरशिप की तलाश को आकार दिया।

नेपाल में चीन की बढ़ती भूमिका

पिछले एक दशक में चीन की व्यापक दक्षिण एशियाई रणनीति के हिस्से के रूप में नेपाल के साथ उसका जुड़ाव और गहरा हुआ है। बीजिंग के लिए, नेपाल तिब्बत के पास एक रणनीतिक बफर और चीन को दक्षिण एशिया से जोड़ने वाले संभावित गलियारे दोनों के रूप में काम करता है। इसलिए नेपाल में स्थिरता चीन की आंतरिक सुरक्षा चिंताओं के साथ-साथ उसकी कनेक्टिविटी की महत्वाकांक्षाओं से डीप जुड़ी हुई है।

2016 में बेल्ट एंड रोड इनिशिपिएटिव फ्रेमवर्क समझौते पर हस्ताक्षर एक महत्वपूर्ण मोड़ था। चीनी वित्त पोषित परियोजनाओं ने सड़कों, पनबिजली और दूरसंचार में महत्वपूर्ण बुनियादी ढाँचे की कमियों को दूर किया। इन पहलों ने नेपाल के व्यापार मार्गों में विविधता लाई और भारतीय पारगमन गलियारों पर निर्भरता कम की।

आर्थिक जुड़ाव को सॉफ्टपावर कूटनीति द्वारा पूरक बनाया गया था। छात्रवृत्ति, भाषा प्रशिक्षण कार्यक्रम और सांस्कृतिक आदान-प्रदान ने नेपाली अभिजात वर्ग और युवाओं के बीच सदभावना पैदा की। पर्यटन को बढ़ावा देने और मीडिया आउटरीच ने लोगों के बीच संबंधों को और मजबूत किया।

प्रशिक्षण कार्यक्रमों और सैन्य सहायता के माध्यम से सुरक्षा सहयोग का भी मामूली विस्तार हुआ। हालांकि पैमाने में सीमित, इन पहलों ने नेपाल की रक्षा साझेदारी के विविधीकरण का प्रतीक था और चीन को एक विश्वसनीय भागीदार के रूप में धारणाओं को मजबूत किया।

2015 में भारत के साथ संकट के बाद गैर-हस्तक्षेप और सम्प्रभुता के सम्मान पर चीन के जोर का गहरा असर हुआ। अपने जुड़ाव को विकासात्मक संदर्भो में प्रस्तुत करके, बीजिंग ने बिना किसी स्पष्ट राजनीतिक शर्त के पारंपरिक प्रभाव के विकल्प के रूप में खुद को स्थापित किया।

भारत की पारंपरिक भूमिका और उभरती चुनौतियाँ

नेपाल के साथ भारत के संबंध ऐतिहासिक रूप से आर्थिक एकीकरण, सांस्कृतिक समानता और सुरक्षा सहयोग पर आधारित रहे हैं। खुली सीमाओं ने गतिशीलता और प्रेषण प्रवाह को सुविधा जुदा बनाया, जबकि विकास सहायता ने बुनियादी ढांचा और क्षमता निर्माण का समर्थन किया। भारत ने नेपाल की शांति प्रक्रिया और लोकतांत्रिक आंदोलनों में भी केन्द्रीय भूमिका निभाई।

हालांकि, 2015 की सीमा बाधा एक महत्वपूर्ण मोड़ था। ईंधन और आवश्यक वस्तुओं की कमी ने व्यापक असंतोष

पैदा किया और भारतीय जबरदस्ती की कहानियों को मजबूत किया। हालांकि नई दिल्ली ने नाकाबंदी लगाने से इन्कार किया, लेकिन इस घटना ने विश्वास को कम किया और भारत के नैतिक अधिकार को कमजोर किया।

चीन के बाद के जुड़ाव ने नेपाल के विभिन्नीकरण को तेज किया। भारत ने अपने दृष्टिकोण को फिर से समायोजित करके जवाब दिया, साझेदारी और आपसी सम्मान पर जोर दिया। विकास सहायता का विस्तार किया गया, कनेक्टिविटी परियोजनाओं में तेजी लाई गई और राजनयिक ऑउटरीच को तेज किया गया। रक्षा सहयोग और आपदा प्रतिक्रिया तंत्र को मजबूत किया गया, जबकि BIMSTEC के माध्यम से क्षेत्रीय बहुपक्षवाद को बढ़ावा दिया गया।

फिर भी, भारत को विषमता की धारणाओं और ऐतिहासिक शिकायतों से उत्पन्न संरचनात्मक बाधाओं का सामना करना पड़ता है। विश्वास का पुनर्निर्माण एक केन्द्रीय चुनौती बनी हुई है। घरेलू अस्थिरता और बाहरी प्रतिस्पर्धा का आपसी तालमेल।

नेपाल की राजनीतिक अस्थिरता ने संस्थागत स्वायत्तता और नीतिगत तालमेल को कमजोर करके बाहरी प्रभाव का बढ़ा दिया। कम समय तक चलने वाली सरकारों ने तुरंत वैधता पाने के लिए विदेशी फंड़ों वाले प्रोजेक्टों पर काम किया, अक्सर बिना किसी व्यापक रणनीतिक मूल्यांकन के। इस वजह से चीन का विस्तार हुआ और भारत को अपनी पारंपरिक भूमिका का बचाव करने के लिए मजबूर होना पड़ा।

नेपाल ने विभिन्न साझेदारियों के जरिए स्वायत्तता को ज्यादा से ज्यादा बढ़ाने के मकसद से संतुलन बनाने की रणनीति अपनाई। हालांकि इस तरीके से राजनयिक प्रभाव बढ़ा, लेकिन लगातार अस्थिरता ने प्रतिस्पर्धी संबंधों के प्रभावी प्रबंधन को सीमित कर दिया।

भारत के रणनीतिक विकल्प

भारत का लंबे समय का प्रभाव जीरो-सम प्रतिस्पर्धा के बजाय विश्वास को फिर से बनाने और आर्थिक एकीकरण को गहरा करने पर निर्भर करता है। प्राथमिकता वाले क्षेत्रों में कनेक्टिविटी, निजी क्षेत्र का निवेश, संस्थागत क्षमता निर्माण और लोगों के बीच संबंध शामिल हैं। संप्रभुता और राजनीतिक संवेदनशीलता का सम्मान स्थायी साझेदारी के लिए आवश्यक है।

निष्कर्ष

नेपाल में 2008 के पश्चात् उत्पन्न राजनीतिक संक्रमण ने देश की आन्तरिक स्थिरता और विदेश नीति दोनों को गहराई से प्रभावित किया है। बार-बार सरकारों का परिवर्तन, संविधान निर्माण की जटिल प्रक्रिया, पहचान-आधारित आंदोलनों तथा संस्थागत कमजोरियों ने शासन की प्रभावशीलता को सीमित किया। इस आन्तरिक अस्थिरता ने न केवल नेपाल की नीति-निर्माण क्षमता को कमजोर किया, बल्कि बाहरी शक्तियों के लिए भी हस्तक्षेप और प्रभाव विस्तार के नए अवसर उत्पन्न किए। इस संदर्भ में चीन का उदय केवल आर्थिक सहयोग तक सीमित नहीं रहा, बल्कि वह धीरे-धीरे नेपाल की रणनीतिक प्राथमिकताओं को भी प्रभावित करने लगा।

चीन की बढ़ती उपस्थिति ने पारंपरिक भारत-नेपाल संबंधों की संरचना में महत्वपूर्ण परिवर्तन उत्पन्न किया है। अवसंरचना विकास, बेल्ट एण्ड रोड पहल, व्यापार विस्तार और सांस्कतिक कूटनीति के माध्यम से चीन ने नेपाल में अपनी सॉफ्ट और हार्ड पावर दोनों को सुदृढ़ किया। इसके परिणामस्वरूप भारत की ऐतिहासिक भूमिका को नई चुनौतियों का सामना करना पड़ा। 2015 के अवरोध जैसी घटनाओं ने द्विपक्षीय विश्वास को क्षति पहुँचाई औरनेपाल में भारत के प्रति जनमत को प्रभावित किया। यद्यपि हाल के वर्षों में भारत ने कूटनीतिक पुनर्संतुलन, विकास सहायता और सम्पर्क परियोजनाओं के माध्यम से अपनी स्थिति सुधारने का प्रयास किया है, फिर भी प्रतिस्पर्धात्मक रणनीति के स्थान पर सहयोगात्मक दृष्टिकोण अधिक प्रभावी सिद्ध हो सकता है।

यह अध्ययन दर्शाता है कि नेपाल की दीर्घकालीन स्थिरता और रणनीतिक स्वायत्तता का मार्ग आन्तरिक संस्थागत सुदृढ़ीकरण और संतुलित विदेश नीति में निहित है। भारत और चीन दोनों के साथ समन्वयित और पारदर्शी संबंध ही नेपाल

के राष्ट्रीय हितों की रक्षा कर सकते हैं। भारत के लिए यह आवश्यक है कि वह अपनी नीति में संवेदनशीलता, पारस्परिक सम्मान और दीर्घकालीन विकास सहयोग को प्राथमिकता दे। निष्कर्षतः, नेपाल का प्रकरण यह स्पष्ट करता है कि छोटे राज्यों की आन्तरिक राजनीति क्षेत्रीय शक्ति संतुलन को गहराई से प्रभावित करती है और स्थिरता ही सतत् कूटनीतिक संतुलन की आधारशिला होती है।

संदर्भ सूची (References)

- आचार्य, अ. (2014), अमेरिकी विश्व व्यवस्था का अंत, कैम्ब्रिज, यूकेः पॉलिटी प्रेस।
- बराल, ल. र. (2018), नेपाल की विदेश नीति और चीन कारक, एशियन अफेयर्स, 49(3), 457-472।
- ब्रूस्टर, ड. (2017), भारत और चीन समुद्र मेंः हिन्द महासागर में नौसै िनक प्रभुत्व की प्रतिस्पर्धा, ऑक्सफोर्ड, यूकेः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
- नेपाल सरकार. (2015), नेपाल का संविधान. कानमाण्डू, नेपालः गर्वनमेंट प्रेस।
- पंत, ह. वि. (2019), भारत की पड़ोसी नीति और चीन का उदय, इन्टरनेशनल अफेयर्स, 95(6), 1279-1295।
- शर्मा, स. (2021), नेपाल में चीन की बेल्ट एंड रोड पहलः अवसर और चुनौतियाँ, साउथ एशियन सर्वे, 28(2), 215-232।
- राणा, प. ब. (2020), नेपाल में राजनीतिक संक्रमण और विदेश नीति, जर्नल ऑफ एशियन स्टडीज, 79(4), 911-928।

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

सुरेन्द्र वर्मा के नाटकों में स्त्री-पुरुष-सम्बन्ध

श्रीकांत सिंह
शोध निर्देशक
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग
कॉलेज ऑफ कॉमर्स आट्र्स एंड साइंस कॉलेज पटना, बिहार

राजन कार्तिकाय
शोधार्थी
पाटलिपुत्र विश्व विद्यालय पटना बिहार
मो.9709851006
gmailid: rajankan220387@gmail.com

शोध सारांश

समकालीन हिंदी नाटककार सुरेंद्र वर्मा अत्याधुनिक नाट्याकाश के वैसे महत्वपूर्ण प्रकाशवान सितारे हैं, जिन्होंने अपने नाटकों में स्त्री-पुरुष-संबंधों की जटिलता, मनोवैज्ञानिक द्वंद्व, सामाजिक व्यवस्था और लैंगिक असमानता का गहन, गंभीर चित्रण किया है। उनके संपूर्ण नाट्य साहित्य में पारंपरिक नैतिकता और आधुनिक दृष्टिकोण के मध्य आत्मिक टकराहट अत्यंत गहराई तक दृष्टिगत होती है।

इनके प्रख्यात नाटक 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक', 'आठवां सर्ग', 'शकुंतला की अंगूठी' और 'कैद-ए-हयात' आदि नाटकों में स्त्री की स्वतंत्र सत्ता, उसकी अनंत इच्छाएं तथा पुरुष वर्चस्व के साथ आभ्यांतरिक एवं बाह्य संघर्ष को मनोवैज्ञानिक आधार पर गहराई से रेखांकित किया है।

प्रस्तुत शोधालेख सुरेंद्र वर्मा के प्रमुख नाटकों का विश्लेषण करते हुए स्पष्ट करता है कि उनके नाट्य साहित्य में स्त्री-पुरुष का संबंध मात्र प्रेम अथवा दांपत्य-जीवन तक ही सीमित नहीं है, अपितु वो पारिवारिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा मनोवैज्ञानिक आयामों से आबद्ध -व्यापक विमर्श के अंग हैं।

बीजशब्द - नाट्याकाश, प्रकाशवान सितारे, मनोवैज्ञानिक द्वंद्व, वर्चस्व, अस्तित्व, संघर्ष,नियोग प्रथा, पारम्परिक रूढ़ियां, सहचरी, शारीरिक द्वंद्व।

प्रस्तावना

भारतेंदु नाट्यालोक से आलोकित, प्रसाद- नाट्य -सुमन से सुरभित भारतीय नाट्य -परिवेश के प्रकाश में समकालीन हिंदी नाटककारों ने पारिवारिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक यथार्थ को पूर्णतरू नवीन दृष्टिकोण से प्रकाशित किया है। इस सारस्वत क्रांतिकारी परंपरा के पथ पर समकालीन यथार्थवादी नाटककार सुरेंद्र वर्मा का नाम अनलाक्षरों में अंकित है। इन्होंने ऐतिहासिक, पौराणिक और समकालीन प्रसंगों के प्रकाश में स्त्री-पुरुष संबंधों को मनोवैज्ञानिक आधार पर पुनर्पारिभाषित करने का सफल प्रयास किया है।

नाटककार सुरेंद्र वर्मा ने नाट्य विद्या के माध्यम से पारंपरिक रूढ़ियों को विखंडित कर, उत्तर आधुनिक और मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से स्त्री-पुरुष-संबंध को गहराई से रेखांकित किया है। वे नारी को मात्र मां, पत्नी या बहन के रूप में ही नहीं, अपितु एक स्वतंत्र मनुष्य और सहचरी के रूप में भी चित्रित किया है। उनके नाटकों में यही संबंध प्रेम, यौनिकिता, सत्ता, संघर्ष

और मुक्ति संदर्भ के चतुरास घूमते हुए प्रतीत होते हैं।

सुरेंद्र वर्मा के नाटकों में स्त्री-पुरुष संबंधों के मुख्य आयाम

(क) पारंपरिक रूढ़ियों को चुनौती नाटककार सुरेंद्र वर्मा ने अपने यथार्थवादी मनोवैज्ञानिक नाटकों के माध्यम से सड़ी-गली पारिवारिक और सामाजिक कुत्सित, मानवता विरोधी परंपराओं और युगों से स्थापित रूढ़िवादी मान्यताओं को अपने नाटकों में सीधी चुनौती दी है।

(ख) स्त्री की स्वतंत्र पहचान, स्त्री अस्मिता की अडिगता अपने नाटकों के माध्यम से सुरेंद्र वर्मा ने स्त्री की स्वतंत्र पहचान -निर्माण -पथ को प्रशस्त किया है और स्त्री अस्मिता की अडिगता को गहराई से रेखांकित किया है। उनकी प्रख्यात नाटक 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' प्रसंग प्रकाश से प्रकाशित है, जिसमें शिलवती के माध्यम से स्त्री की यौनिक और भावनात्मक स्वतंत्रता की चर्चा गंभीरता से करते हैं।

(ग) नियोगप्रथा तथा देह की मुक्ति 'सूर्य की अंतिम किरण से सूरज की पहली किरण तक' नाटक में ही नियोग प्रथा के माध्यम से विवाहित नारी की घुटन और अपनी मर्जी से शारीरिक संबंध बनाने के अधिकार का चित्रण सहजता के साथ किया गया है।

(घ) मनोवैज्ञानिक द्वंद्व से गुजरते उनके पात्र सुरेंद्र वर्मा जी के स्त्री - पुरुष पात्र अक्सर प्रेम, सृजन और शारीरिक -मानसिक द्वंद की गलियों से गुजरते हुए प्रतीत होते हैं। ऐसे ही प्रसंगो से प्रकाशित हैं, उनका बहुचर्चित और सफल मंचित नाटक 'आठवां स्वर्ग'। इसमें नायक कालिदास और नायिका मल्लिका के माध्यम से मनोवैज्ञानिक द्वंद्व का प्रकटीकरण किया गया है।

(ङ) मनुष्य और नर सहचारी के रूप में स्त्री सुरेंद्र वर्मा जी नारी को पुरुष की दासी, भोग्या मात्र के रूप में नहीं, बल्कि सम्मान के सिंहासन पर श्रेष्ठ सहचरी, आत्मिक मित्र के रूप में ही देखते हैं, जो अपनी अस्मिता रक्षार्थ संघर्षिणी बनकर त्रिया शोषकों से लड़ती है।

(च) दांपत्य जीवन और प्रेम प्रसंग में तनाव इनकी नाट्य कृतियों से स्पष्ट होता है कि समकालीन दांपत्य जीवन तथा युवक युवतियों का प्रेम प्रसंग पूर्णतरू तनाव का शिकार हो गया है। इसका जमीनी संदर्भ 'द्रोपती' सहित नाटकों में भी पाया जाता है। वैसे मुख्य रूप से इनके नाटक 'द्रोपती' में समकालीन जीवन में स्त्री पुरुष के मध्य निरंतर जटिल होते पति-पत्नी, प्रेमी-प्रेमिका आदि रिश्ते-नातो में आबद्ध नर-नारी संबंध और अकेलेपन का चित्रण गहराई के साथ मनोवैज्ञानिक आधार पर किया है।

वस्तुतः सुरेंद्र वर्मा ने अपने नाटकों में स्त्री को देवी की अवधारणा से उतर कर मुकम्मल मनुष्य के रूप में रेखांकित किया है। इन्होंने अपने नाटकों में स्त्री - पुरुष-संबंध को पारंपरिक खोखली मर्यादाओं से मुक्त यथार्थवादी और उत्तर आधुनिक दृष्टिकोण से देखा है। उनके नाटकों में स्त्री- पुरुष-संबंध मात्र प्रेम अथवा वैवाहिक बंधन नहीं, अपितु काम चेतना, देह चेतना तथा व्यक्तिगत स्वतंत्रता के धरातल पर भी विनिर्मित किए गए हैं।

स्त्री-पुरुष-संबंध

समकालीन नाटककार सुरेंद्र वर्मा के यथार्थवादी नाटकों में स्त्री- पुरुष - संबंध बहु आयामी है। इनके नाटकों में स्त्री-पुरुष संबंध पारंपरिक प्रेम अथवा विवाह की सीमा से बहुत आगे है। इसके कारण यह संबंध अत्यधिक जटिल, मनोवैज्ञानिक और बहु आयामी हो गया है। वर्मा जी ने नर-नारी-संबंधों को मात्र शारीरिक अथवा भावनात्मक स्तर तक ही नहीं देखा, अपितु व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर बौद्धिक, पारिवारिक, सामाजिक और अस्तित्ववादी जमीन पर उसका पूर्णतरू परीक्षण भी किया है।

स्त्री-पुरुष-संबंधों की बहू आयामी प्रकृति का मुख्य तत्व है- 'काम' और प्रेम का यथार्थवादी चित्रण। स्त्री - पुरुष -

संबंधों में वर्मा जी ने 'काम' के महत्व को निरूसंकोच रेखांकित किया है, जो अश्लील नहीं, अपितु मनोवैज्ञानिक है। इस मुख्य तत्व का पूर्ण प्रकाश मिलता है- इनके प्रख्यात नाटक 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' में जिसमें नायिका शीलवती के माध्यम से एक ओर विवाह के पारंपरिक मूल्यों को चुनौती दी गई है, तो दूसरी ओर शीलवती द्वारा नियोग (पति के अलावा अन्य पुरुष से संतान की प्राप्ति) विधि को स्वीकृति भी दी गई है, जो देह की आवश्यकता और नारी - चेतना के चमत्कार को गहराई से रेखांकित करता है। गिरीश रस्तोगी के अनुसार इस नाटक में प्रेम और काम को स्त्री- पुरुष के बीच भावनात्मक संतुलन के रूप में दिखाया गया है।(1)

सुरेंद्र वर्मा अंकित 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली के किरण तक' नाटक में स्त्री द्वारा पूर्णता की तलाश और पुरुष के अधूरेपन के द्वंद्व को अत्यंत सूक्ष्म स्तर पर व्यक्त किया गया है। इस नाटक की नायिका शीलवती का पति अधूरा है, जिसके कारण राज्य के उत्तराधिकारी की प्राप्ति हेतु राज महिषी शीलवती को नियोग-प्रथा के लिए,मात्र एक रात के लिए उपपति -चयन हेतु बाध्य किया जाता है, जो वस्तुतः पुरुषवादी हितों के संरक्षण के लिए नारी की प्राकृतिक भावनाओं की आहुति देने के तुल्य ही है।

यथा...."नगाड़े की ध्वनि। फिर उदघोषक का स्वर- ' मल्लराज्य के हर नागरिक को... सूचना दी जाती है... कि आज से ठीक एक सप्ताह बाद... पूर्णमासी की संध्या को... राजमहिषी शीलवती...धर्मनटी बनाकर... राजप्रांगण में उतरेगी। मल्लराज के प्रत्येक नागरिक को... एक रात के लिए.... सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक... उत्पत्ति के रूप में चुनेगी... नगाड़े की ध्वनि।(2)

इस उदघोष में कहने के लिए उद् घोषक अपनी इच्छा के अनुसार कह रहा है, लेकिन वास्तव में क्या शीलवती की इच्छा भी इसमें शामिल है? यह प्रश्न पितृसत्तात्मक समाज में एक स्त्री की विडम्बनात्मक स्थिति को ही दर्शाता है।

भारतीय संस्कृति में मातृत्व को अत्यंत सम्मानजनक दृष्टि से देखा जाता रहा है। माता बनने पर ही नारी पूर्ण समझी जाती है। माता बनाकर नारी को जीने का सहारा मिलता है। उसके जीवन में पुरुष (पति) के प्रेम का अभाव होने पर, उसकी पूर्णता वह अपनी संततियों से कर लेती है।

महामात्य जब शीलवती को पर-पुरुष से शारीरिक संबंध बनाकर मां बनने के लिए उत्प्रेरित करते हुए जब कहते हैं- "इस असंवेदनशील प्रलाप के लिए अपने आप को बिल्कुल भूल जाएं... पलके मूंद ले...बिल्कुल ढीला छोड़ दें-शरीर को... पांचों इंद्रियों को अचेतन करके भाव -तंत्र को निर्जीव बना लें... और मन की आंखों से लगातार केवल भावी परिणाम की ओर देखे... अबोध मुद्रा... घुंघराली अलकें... दूधिया दांत.... नारीत्व की सार्थकता... मातृत्व की तृप्ति....।(3)

उदाहरण से स्पष्ट होता है कि उत्तराधिकारी प्राप्त करने के लिए वह राजमहिषी पर दबाव डाल रहा है, लेकिन राजमहिषी उसकी अमर्यादित बातों को सुनती-सुनती आक्रोशित हो गई और उसने बुलंद स्वर में महामात्य की बात को काटती हुई कहने लगी- नारीत्व की सार्थकता मातृत्व में नहीं, बल्कि पुरुष के संयोग-सुख में है। नाटककार ने शीलवती के माध्यम से समकालीन नारी का चित्रांकन किया है, जिससे स्पष्ट होता है कि आज की स्त्री केवल त्याग की मूर्ति, देवी और दासी बनकर नहीं रहना चाहती। वह भी अपनी मानवीय आवश्यकताओं किसी मर्यादा के नाम पर तिलांजलि देनेवाली नहीं।

इस नाटक में प्रेम और काम को स्त्री-पुरुष के बीच संतुलन के रूप में देखा गया है।

समकालीन नाटककार सुरेंद्र वर्मा ऐतिहासिक/पौराणिक प्रसंगों में आधुनिकतावाद का उपयोग करके समकालीन नर-नारी-संबंध को उजागर करते हैं। ऐसे ही उनके 'द्रौपदी' नाटक में भी किया गया है। पौराणिक पात्रों के माध्यम से आधुनिक दांपत्य जीवन की घुटन, असुरक्षा और मानसिक द्वंद्वों को प्रकाशित किया गया है।

'द्रौपदी' नाटक में विवाहेतर जीवन की विसंगतियों से बिखरे परिवार गंभीर त्रासदी है। नाट्य-नायक मनमोहन, जो नाट्य -नायिका सुरेखा का पति है, लेकिन उसका व्यक्तित्व खंडित है। उसका चरित्र अनैतिक, अर्थ लोलुप, महत्वाकांक्षी, कामुक और आत्मान्वेषी भी है। उसका ये अलग अलग रूप ही सुलेखा के लिए अलग-अलग पांच पति बन चुके हैं। इसे स्पष्ट करते हुए सुरेखा कहती है "मेरे पति एक नहीं है, यथा कि अब वो आदमी एक नहीं, एक से ज्यादा है। वह कहती है कि वह

कभी मुझे ऊपर से छूकर ही संतोष पा लेता है, तो कभी मेरी बोटी - बोटी नोंच डालता है।"[4]

इस उद्धरण से स्पष्ट होता है कि मनमोहन का व्यक्तित्व एक नहीं है। इसी आधार पर नाटक कथा आगे बढ़ती है, जो शनैः-शनैः पारिवारिक बिखराव और उसी में घूटते व्यक्ति की त्रासदी तक पहुंच जाती है। इस नाटक के संदर्भ में नाट्य आलोचक गिरीश रस्तोगी ने लिखा है- "मानवीय संबंधों के बिखरने, टूटने और साथ ही बदलते नैतिक मूल्यों और काम संबंधों को केंद्र में रखकर संपूर्ण नाटक लिखा गया है। समकालीन परिस्थितियों के दबाव से व्यक्ति किस प्रकार टुकड़ों में बंट जाता है और एक साथ कई जिंदगियां जीता है और इसलिए कुंठित होता है।"[5]

इस उदाहरण से स्पष्ट होता है कि आज के अधिकांश मनुष्य एक साथ कई जिंदगियां जीते हैं, जिसके कारण उनके व्यक्तित्व खंडित हो जाते हैं। खंडित जीवन में स्त्री - पुरुष - संबंध भी खंडित-दंडित हो जाते हैं।

कला सत्ता के अंतराल में भी सुरेंद्र वर्मा जी ने स्त्री पुरुष के संबंध को गहराई से रेखांकित किया है। महाकवि कालिदास प्रनीत 'कुमारसंभवम्' के आठवें सर्ग के आधार पर लिखित सुरेंद्र वर्मा कृत 'आठवां सर्ग' नाटक में कला-सत्ता और नर- नारी - संबंधों के अंतर संबंधों को मनोवैज्ञानिक आधार पर अत्यंत गहराई के साथ रेखांकित किया है।

वस्तुतः यह नाटक कला की स्वतंत्रता, सत्ता के अहंकार और इन दोनों चक्कियों के बीच पिसते हुए स्त्री पुरुष संबंधों की त्रासदी पूर्ण कहानी का मूल है।

आठवां सर्ग नाटक का नायक कालिदास अपने महाकाव्य कुमारसंभवम में शिव - पार्वती के प्रेम और संयोग का वर्णन करते हैं, लेकिन आठवें सर्ग में काम-क्रीड़ा के मांसल चित्रण के कारण उन पर अश्लीलता फैलाने का गहरा आरोप लगाया जाता है।

समकालीन नाटककार सुरेंद्र वर्मा ने स्त्री पुरुष संबंधों को विविध रूपों के आधार पर गहराई से चित्रण किया है। इनके नाटकों से स्पष्ट होता है कि समकालीन परिवेश में स्त्री चेतना अपने अधिकारों के प्रति निरंतर सजग हो रही है, जिसके कारण वह पारंपरिक लक्ष्मण रेखाओं को मिटाकर पुरुष के साथ मित्रवत संबंध को ही स्वीकार रही है। यही कारण है कि वर्मा जी के 'कैद- ए-हयात' नाटक में मंजिलसेन कहती है - "उसे बेटी, बहन, प्रेमिका,पत्नी और मां बनने के साथ अपनी निजी पहचान चाहिए। तभी वह समाज की स्वायत्त इकाई बनाकर अपने व्यक्तित्व का विकास कर पाएगी।"[6]

निष्कर्ष

संपूर्ण शोधालेख से स्पष्ट होता है कि सुरेंद्र वर्मा के नाटकों में स्त्री-पुरुष -संबंध पारंपरिक रीतियों से बंधे हुए नहीं, बल्कि व्यक्तिगत, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक परिवर्तनों के बीच लगातार पुनर्परिभाषित होने वाले रिश्ते के रूप में रेखांकित किए गए हैं।

संदर्भ सूची

1. समकालीन हिंदी नाटककार गिरीश रस्तोगी - लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण -2008- पृष्ठ संख्या -62.
2. 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' -सुरेंद्र वर्मा - राधा कृष्ण प्रकाशन- 1975, नयी दिल्ली, पृष्ठ संख्या - 28.
3. वही........... पृष्ठ संख्या -49.
4. तीन नाटक (नाटक संग्रह) -सुरेंद्र वर्मा , भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन-2005. पृष्ठ संख्या 26.
5. समकालीन हिंदी नाटककार गिरिश रस्तोगी- लोगभारती प्रकाशन, इलाहाबाद,वर्ष - 2008, पृष्ठ संख्या -62
6. कैद ए हयात -सुरेंद्र वर्मा, वाणी प्रकाशन --1983, पृष्ठ संख्या -50.

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

कृत्रिम बुद्धिमत्ता : अवधारणा से क्रांति तक शिक्षा और समाज के परिप्रेक्ष्य में

डॉ. अनु पाण्डेय
असिस्टेंट प्रोफेसर
श्री आई.जे.पटेल बीएड.कॉलेज, मोगरी- 388345, आनंद, गुजरात
मोबाइल : 9376101020
ईमेल : dranutripathi84@gmail.com

21वीं सदी विज्ञान और तकनीक की तीव्र प्रगति का युग है। इस युग में "कृत्रिम बुद्धिमत्ता" अर्थात Artificial Intelligence (AI) ने मानव जीवन के लगभग प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है। आज मोबाइल फोन, सोशल मीडिया, ऑनलाइन शिक्षा, चिकित्सा, बैंकिंग, उद्योग, परिवहन तथा प्रशासनिक कार्यों में AI का व्यापक उपयोग हो रहा है। AI केवल तकनीकी विकास का माध्यम नहीं है, बल्कि यह मानव जीवन की कार्यशैली, सोच, शिक्षा, रोजगार और सामाजिक संबंधों को भी परिवर्तित कर रही है। वर्तमान समय में AI को चौथी औद्योगिक क्रांति का प्रमुख आधार माना जा रहा है। यह तकनीक मानव की बुद्धि का अनुकरण करते हुए निर्णय लेने, समस्याओं को हल करने तथा सीखने की क्षमता विकसित करती है। AI के बढ़ते प्रभाव ने अनेक अवसरों के साथ-साथ गंभीर चुनौतियाँ भी उत्पन्न की हैं। अतः AI के सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक प्रभावों का अध्ययन अत्यंत आवश्यक हो जाता है।

१. कृत्रिम बुद्धिमत्ता : परिभाषा, उत्पत्ति और मूल अवधारणाएँ

१.१ मूल परिभाषा (Basic Definition)

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence AI) कम्प्यूटर विज्ञान की वह शाखा है जिसमें मशीनों को इस प्रकार प्रशिक्षित किया जाता है कि वे मानव मस्तिष्क के समान सोचने, सीखने, निर्णय लेने और समस्याओं को हल करने में सक्षम हो सकें। सरल शब्दों में, AI वह तकनीक है जो मशीनों को श्बुद्धिमानश् बनाती है। प्रसिद्ध कम्प्यूटर वैज्ञानिक जॉन मैकार्थी (John McCarthy) ने 1956 में पहली बार श्Artificial Intelligenceश् शब्द का प्रयोग किया था। उनके अनुसार -"AI वह विज्ञान और इंजीनियरिंग है जो बुद्धिमान मशीनें, विशेषकर बुद्धिमान कंप्यूटर प्रोग्राम बनाती है।"[1] कहा जा सकता है कि, AI एक ऐसी प्रणाली है जो अपने पर्यावरण को देखती है, डेटा एकत्र करती है और उस डेटा के आधार पर स्वयं निर्णय लेती है।

१.२ AI की उत्पत्ति (Origin of AI)

AI का इतिहास उतना ही पुराना है जितना मानव की यह जिज्ञासा कि- क्या कोई मशीन सोच सकती है? 1936 में महान गणितज्ञ एलन ट्यूरिंग (Alan Turing) ने 'Universal Turing Machine' की अवधारणा प्रस्तुत की। वर्ष 1950 में एलन ट्यूरिंग ने एक ऐतिहासिक प्रश्न पूछा था : ''क्या मशीनें सोच सकती हैं?"। एलन ट्यूरिंग ने अपने शोधपत्र में

लिखा - 'I propose to consider the question, 'Can machines think ?''[2] अतः माना जा सकता है कि उनके इस प्रश्न ने आधुनिक AI को जन्म दिया। और फिर उन्होंने प्रसिद्ध 'Turing Test' प्रस्तावित किया। यदि कोई मशीन किसी इंसान से बातचीत में इस तरह व्यवहार करे कि परीक्षक यह न पहचान सके कि वह मशीन है या इंसान तो वह मशीन 'बुद्धिमान' मानी जाएगी।

वर्ष 1956 में Dartmouth Conference में जॉन मैकार्थी, मार्विन मिन्स्की, नाथनियल रोचेस्टर और क्लॉड शैनन जैसे वैज्ञानिकों ने मिलकर AI को एक विधिवत शोध क्षेत्र के रूप में स्थापित किया। यही AI का आधिकारिक जन्म माना जाता है।

१.३ मूल अवधारणाएँ (Core Concepts)

AI अनेक तकनीकों का समुच्चय है। AI की कई महत्वपूर्ण उप-शाखाएँ और अवधारणाएँ हैं जिन्हें समझना आवश्यक है :

- मशीन लर्निंग (Machine Learning ML) : यह AI की वह शाखा है जिसमें कम्प्यूटर स्वयं डेटा से सीखते हैं। जितना अधिक डेटा, उतना बेहतर प्रदर्शन। उदाहरण Netflix की सिफारिश प्रणाली।
- डीप लर्निंग (Deep Learning) : यह मानव मस्तिष्क की तंत्रिका प्रणाली के समान कार्य करने वाली प्रणाली है। यह मशीन लर्निंग का एक उन्नत रूप है जो मानव मस्तिष्क की तंत्रिका संरचना (Neural Networks) की नकल करता है। इसमें लाखों-करोड़ों डेटा बिंदुओं से पैटर्न पहचाने जाते हैं।
- प्राकृतिक भाषा प्रसंस्करण (Natural Language Processing – NLP) : यह मशीनों को मानव भाषा समझने और उसमें उत्तर देने योग्य बनाता है। ChatGPT, Google Translate इसके उदाहरण हैं।
- कम्प्यूटर विज़न (Computer Vision) : AI को छवियाँ और वीडियो पहचानने की क्षमता देता है। चेहरा पहचान (Face Recognition) इसका उदाहरण है।
- रोबोटिक्स (Robotics) : भौतिक मशीनों को AI से युक्त कर स्वायत्त कार्य करने योग्य बनाना।

२. इतिहास, वर्तमान विकास और भविष्य की संभावनाएँ

२.१ AI का ऐतिहासिक विकास

AI का इतिहास उत्थान और पतन के कई दौरों से गुज़रा है। 1950-1970 के दशक को श्स्वर्णिम युगश कहा जाता है जब शोधकर्ता बेहद उत्साहित थे। 1974-1980 और 1987-1993 में 'AI Winter' आई अर्थात् धन और रुचि दोनों कम हो गए क्योंकि परिणाम अपेक्षाओं के अनुरूप नहीं थे। 1997 में IBM के Deep Blue ने विश्व शतरंज चैम्पियन गैरी कास्पारोव को हराया यह AI की एक ऐतिहासिक जीत थी। 2011 में IBM Watson ने Jeopardy! क्विज़ शो जीता। 2016 में Google DeepMind के AlphaGo ने गो खेल के विश्व चैम्पियन को पराजित किया। 2022 में ChatGPT के लॉन्च ने पूरी दुनिया को चौंका दिया और AI को आम जनता के बीच ला खड़ा किया।

AI का विकास कई चरणों में हुआ है

 घ 1950 का दशक : ट्यूरिंग टेस्ट एवं प्रारंभिक अवधारणाएँ।

घ 1960:70 : विशेषज्ञ प्रणालियों (Expert Systems) का विकास

घ 1980:90 : कंप्यूटर क्षमता में वृद्धि एवं डेटा आधारित प्रणालियाँ।

घ 1997 : IBM के Deep Blue ने विश्व शतरंज चैंपियन को पराजित किया।

घ 2010 के बाद : बिग डेटा, क्लाउड कंप्यूटिंग और डीप लर्निंग का विस्तार।

घ वर्तमान समय : Generative AI, Chatbots, Virtual Assistants और Self-driving Cars का विकास।

२.२ वर्तमान विकास (Current Developments : 2024-2026)

आज AI का विकास अभूतपूर्व गति से हो रहा है। OpenAI के GPT-4o और Claude 3.5 जैसे बड़े भाषा मॉडल (LLMs) इतने सक्षम हो गए हैं कि वे लेख लिखना, कोड बनाना, चित्र समझना और जटिल प्रश्नों के उत्तर देना सब कुछ कर सकते हैं। Google का Gemini Ultra, Meta का LLaMA और Mistral जैसे ओपन-सोर्स मॉडल AI को और लोकतांत्रिक बना रहे हैं।

Multimodal AI : जो एक साथ टेक्स्ट, छवि, ऑडियो और वीडियो समझे 2025 में मुख्यधारा में आ गई है। Agentic AI जो स्वयं निर्णय लेकर कई चरणों के कार्य पूर्ण कर सके का विकास तेज़ी से हो रहा है। AI Chip (जैसे NVIDIA H100) और म्कहम AI (मोबाइल पर AI) भी नई संभावनाएँ खोल रहे हैं।

२.३ भविष्य की संभावनाएँ (Future Scope)

AI का भविष्य अत्यंत विस्तृत और क्रांतिकारी है। Artificial General Intelligence (AGI)-मानव जैसी बहुआयामी बुद्धिमत्ता– अगले 10-20 वर्षों में संभव हो सकती है। Quantum Computing के साथ AI का संयोग एक नई तकनीकी क्रांति लाएगा। स्वास्थ्य, कृषि, जलवायु परिवर्तन, अंतरिक्ष अनुसंधान सभी क्षेत्रों में AI का गहरा प्रभाव पड़ने वाला है। भारत की दृष्टि से, National AI Mission और भारत AI जैसी पहलें देश को AI में आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में कार्य कर रही हैं।

३. रोज़गार पर प्रभाव : नई नौकरियाँ, खोई नौकरियाँ

३.१ AI से खतरे में पड़ी नौकरियाँ

AI के विस्तार से कई पारंपरिक नौकरियाँ खतरे में हैं। McKinsey Global Institute के अनुसार, 2030 तक विश्व में लगभग 30 करोड़ नौकरियाँ AI से प्रभावित हो सकती हैं। दोहराव वाले, नियमित और पूर्वानुमान योग्य कार्य सबसे अधिक खतरे में हैं। Goldman Sachs के अर्थशास्त्रियों Briggs और Kodnani (2023) के अनुसार : ''यदि Generative AI अपनी प्रतिश्रुत क्षमताओं को पूरा करती है, तो श्रम बाज़ार में व्यापक व्यवधान आ सकता है- लगभग 30 करोड़ पूर्णकालिक नौकरियाँ स्वचालन के संपर्क में आ सकती हैं।''[3]

डेटा एंट्री और क्लर्किकल कार्य, बैंकिंग और बीमा में दस्तावेज़ प्रसंस्करण, कारखानों में असेंबली लाइन कार्य, टेलीफोन ऑपरेटर और ग्राहक सेवा के निचले स्तर के पद, ट्रांसपोर्ट (स्वचालित वाहनों से ड्राइवरों पर खतरा), और बेसिक लेखांकन और बहीखाता– ये सभी क्षेत्र AI से सर्वाधिक प्रभावित होंगे।

३.२ AI से निर्मित नई नौकरियाँ

हालाँकि, इतिहास यह बताता है कि हर तकनीकी क्रांति ने नौकरियाँ छीनी भी हैं और नई नौकरियाँ बनाई भी हैं। AI भी इसका अपवाद नहीं है। विश्व आर्थिक मंच (WEF) के अनुसार, AI 2025 तक 9.7 करोड़ नई नौकरियाँ उत्पन्न कर सकता है।

AI इंजीनियर और मशीन लर्निंग विशेषज्ञ, डेटा वैज्ञानिक और डेटा विश्लेषक, AI नैतिकता अधिकारी (AI Ethics Officer), Prompt Engineers, AI प्रशिक्षक और ट्यूनर, साइबर सुरक्षा विशेषज्ञ, Robotics टेक्नीशियन, AI-ऑगमेंटेड स्वास्थ्यकर्मी, और AI नीति एवं नियमन विशेषज्ञ– ये सभी नई श्रेणियाँ उभर रही हैं।

३.३ भारत के संदर्भ में

भारत के लिए यह स्थिति विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। NASSCOM के अनुसार, भारत का IT क्षेत्र AI की मदद से 2025 तक 5 लाख करोड़ रुपये का उद्योग बन सकता है। भारत में युवा जनसंख्या और तकनीकी प्रतिभा के बल पर AI क्षेत्र में वैश्विक नेतृत्व की संभावना है। परंतु इसके लिए Reskilling और Upskilling– अर्थात् नए कौशल सीखना– अत्यंत आवश्यक है। सरकार के 'Skill India' और 'Digital India' कार्यक्रम इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

४. मनुष्यों पर AI का प्रभाव : शारीरिक और मनोवैज्ञानिक

४.१ शारीरिक प्रभाव (Physical Impacts)

AI का मानव स्वास्थ्य और शरीर पर गहरा और बहुआयामी प्रभाव पड़ रहा है। सकारात्मक दृष्टि से, AI-आधारित चिकित्सा निदान (जैसे Google Deep Mind का Retinal Scan AI जो आँखों की बीमारी पहले पहचानता है) जीवन बचाने में सहायक है। सर्जिकल रोबोट्स (Da Vinci Surgical System) अधिक सटीक ऑपरेशन संभव बना रहे हैं। Wearable AI Devices - जैसे स्मार्टवॉच-रक्तचाप, हृदय गति और रक्त शर्करा की निगरानी करती हैं। DeepMind के शोधकर्ताओं ने 2018 में घोषणा की : ''हमारा AI सिस्टम 50 से अधिक गंभीर नेत्र रोगों के उपचार के लिए, विश्व के अग्रणी नेत्र विशेषज्ञों के समान सटीकता से, रोगियों को सही दिशा में भेजने की सिफारिश कर सकता है।''[4]

नकारात्मक शारीरिक प्रभावों में - स्क्रीन टाइम में वृद्धि से आँखों पर दबाव और नींद की समस्याएँ; शारीरिक गतिविधि में कमी क्योंकि AI अधिकांश काम स्वयं करने लगा है; लंबे समय तक डिवाइस उपयोग से गर्दन और पीठ दर्द (Tech Neck); और अल्ट्रा-प्रोसेस्ड फूड की डिलीवरी AI द्वारा सरल होने से अनुचित खानपान– ये सभी चिंताजनक हैं।

४.२ मनोवैज्ञानिक प्रभाव (Psychological Impacts)

AI का मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव एक जटिल और गहन विषय है। सकारात्मक रूप से, AI-आधारित मानसिक स्वास्थ्य ऐप्स (जैसे Woebot) अवसाद और चिंता में सहायक हैं। व्यक्तिगत शिक्षा और मनोरंजन से जीवन की गुणवत्ता सुधरती है। दूरदराज़ के क्षेत्रों में AI टेलीमेडिसिन द्वारा मनोचिकित्सा तक पहुँच संभव हो रही है।

AI से पड़ने वाले नकारात्मक मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं। AI-जनित 'Filter Bubble'– जहाँ सोशल मीडिया एल्गोरिद्म केवल वही दिखाते हैं जो हम देखना चाहते हैं– एकांगी सोच और ध्रुवीकरण बढ़ाता है। तकनीक का अधिकाधिक उपयोग आमने-सामने के संबंधों में व्यवधान तथा एकाकीपन बढ़ा रहा है। इसे 'Technoference' का नाम दिया गया है। नौकरी छिन जाने का भय (Job Anxiety) और AI से प्रतिस्पर्धा का तनाव भी मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहा है।

AI-generated Deepfakes और Misinformation से समाज में अविश्वास और भ्रम की स्थिति बन रही है। "Parasuraman & Riley (1997) के अनुसार Automation Bias वह प्रवृत्ति है जिसमें मनुष्य स्वचालित प्रणालियों पर अनुचित रूप से निर्भर हो जाते हैं और विरोधाभासी जानकारी की उपेक्षा करते हैं।"[5]

४.३ सामाजिक और नैतिक प्रभाव

AI का समाज पर व्यापक प्रभाव है। Privacy का हनन– जब AI-आधारित Surveillance Systems नागरिकों की हर गतिविधि पर नज़र रखें– एक गंभीर चुनौती है। Harvard Business School की प्रोफेसर शोशाना ज़ुबॉफ़ ने 2019 में चेताया :"'Surveillance Capitalism एकतरफ़ा रूप से मानव अनुभव को व्यवहार संबंधी डेटा में बदलने के लिए मुफ़्त कच्चे माल के रूप में दावा करता है।''[6] ज़ुबॉफ़ बताती हैं कि AI-आधारित निगरानी प्रणालियाँ व्यक्तिगत डेटा को व्यवहार संबंधी अधिशेष में बदल देती हैं जिसे 'मशीन इंटेलिजेंस' के ज़रिए भविष्यवाणी उत्पादों में परिवर्तित किया जाता है।

५. शिक्षा में AI का उपयोग : उपयोग के मामले और उदाहरण

५.१ AI और शिक्षा का नया युग

शिक्षा क्षेत्र में AI एक क्रांतिकारी परिवर्तन ला रहा है। न्छौम्ब्ध के अनुसार, AI शिक्षा में सुलभता, समानता और गुणवत्ता– तीनों को एक साथ बढ़ा सकता है। भारत जैसे विशाल देश में जहाँ 25 करोड़ से अधिक छात्र हैं और शिक्षकों की कमी है, AI एक गेम-चेंजर साबित हो सकता है।

वर्ष 1984 में शिक्षा मनोवैज्ञानिक बेंजामिन ब्लूम ने सिद्ध किया : "सर्वश्रेष्ठ सीखने की स्थिति– व्यक्तिगत ट्यूटरिंग–

में औसत छात्र, पारंपरिक कक्षा के औसत छात्र से 2 sigma ऊपर प्रदर्शन करता है।"[7]

चूँकि हर बच्चा अलग गति से सीखता है अतः AI इस व्यक्तिगत अंतर को पहचानकर प्रत्येक छात्र के अनुसार पाठ्यक्रम तैयार कर सकता है। उदाहरण– Khan Academy का 'Khanmigo' AI ट्यूटर प्रत्येक छात्र के प्रदर्शन का विश्लेषण करके उनके लिए अनुकूलित अभ्यास और व्याख्या प्रस्तुत करता है। Carnegie Learning का MATHia प्लेटफ़ॉर्म गणित में छात्रों की कमज़ोरियाँ पहचानकर लक्षित अभ्यास देता है।

५.३ स्वचालित मूल्यांकन (Automated Assessment)

AI शिक्षकों का बोझ कम करते हुए त्वरित और सटीक मूल्यांकन कर सकता है। Turnitin जैसे टूल्स साहित्यिक चोरी (Plagiarism) पकड़ते हैं और AI-generated content की भी पहचान करने लगे हैं। Gradescope AI-आधारित ग्रेडिंग सिस्टम है जो हस्तलिखित उत्तरों को भी मूल्यांकित कर सकता है। ब्ैम् और कई IITs अब AI-assisted evaluation की ओर बढ़ रहे हैं जहाँ बड़े पैमाने पर परीक्षाओं का मूल्यांकन तेज़ और निष्पक्ष होता है।

५.४ भाषा और अनुवाद (Language & Translation)

भारत जैसे बहुभाषी देश में AI का यह उपयोग अत्यंत महत्वपूर्ण है। Google Translate अब 100 से अधिक भाषाओं में AI-आधारित अनुवाद करता है। Microsoft Translator कक्षाओं में Real-Time Translation सुविधा देता है जिससे विभिन्न भाषाओं के छात्र एक साथ पढ़ सकते हैं। iTranslate Voice और Bhashini (भारत सरकार की पहल) हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में AI अनुवाद को सुलभ बना रहे हैं। AI-powered Speech-to-Text से दिव्यांग छात्रों को विशेष सहायता मिल रही है।

५.५ वर्चुअल क्लासरूम और AI ट्यूटर

ब्टप्क्-19 के बाद ऑनलाइन शिक्षा को नई गति मिली और AI ने इसे और प्रभावशाली बना दिया। ब्वनतेमतं और मकग पर AI-powered recommendations छात्रों को उनकी रुचि के कोर्स सुझाते हैं। Duolingo का AI भाषा सीखने को एक खेल की तरह बनाता है और छात्र की गलतियों से सीखकर अगले प्रश्न तैयार करता है। 'Socratic by Google' ऐप छात्रों के प्रश्नों का AI से उत्तर देता है– गणित, विज्ञान, इतिहास सभी में। भारत में छच्ज्म्स् और क्पोंं पोर्टल पर AI-based adaptive learning की सुविधाएँ विकसित हो रही हैं।

५.६ विशेष शिक्षा (Special Education)

AI ने दिव्यांग छात्रों के लिए शिक्षा की संभावनाएँ असीमित कर दी हैं। Microsoft का 'Seeing AI' दृष्टिबाधित छात्रों को पाठ्यपुस्तकें पढ़ने में सहायता करता है। Otter-ai जैसे AI ट्रांसक्रिप्शन टूल बधिर छात्रों के लिए व्याख्यान को टेक्स्ट में बदलते हैं। Eye&tracking AI technology ऐसे छात्रों को कम्प्यूटर नियंत्रित करने देती है जो हाथ नहीं हिला सकते। भारत में 'Sugamya Bharat' जैसे कार्यक्रमों के साथ AI का संयोग दिव्यांग शिक्षा को क्रांतिकारी रूप से बदल सकता है।

५.७ शिक्षकों की भूमिका और AI

AI शिक्षकों को प्रतिस्थापित नहीं करेगा, बल्कि उन्हें सशक्त करेगा। Administrative Tasks (जैसे उपस्थिति, रिपोर्ट कार्ड, सूचनाएँ) AI द्वारा स्वचालित होने से शिक्षकों के पास बच्चों के साथ अधिक समय होगा। Learning Analytics के ज़रिए शिक्षक समझ सकते हैं कि कौन से छात्र किस विषय में पिछड़ रहे हैं और समय पर हस्तक्षेप कर सकते हैं। AI Content Creation Tools (जैसे Magic School AI) शिक्षकों को पाठ योजनाएँ और परीक्षा प्रश्न-पत्र बनाने में सहायता करते हैं।

निष्कर्ष

कृत्रिम बुद्धिमत्ता 21वीं सदी की सबसे महत्वपूर्ण तकनीकी क्रांति है। यह न केवल उद्योगों और अर्थव्यवस्था को बदल

रही है, बल्कि मानव जीवन के हर पहलू -शिक्षा, स्वास्थ्य, कार्य, संबंध और मनोविज्ञान -को पुनर्परिभाषित कर रही है।

अंत में, AI एक उपकरण है- और किसी भी उपकरण की तरह, इसकी उपयोगिता और हानिकारकता पूरी तरह इस बात पर निर्भर है कि इसे कैसे उपयोग किया जाता है। एक जागरूक, शिक्षित और नैतिक समाज ही AI की शक्तियों का सही उपयोग कर मानवता का भला कर सकता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची (References)

1. https://www-formal.stanford.edu/jmc/whatisai.pdf
2. https://academic.oup.com/mind/article/LIX/236/433/986238
3. https://www.gspublishing.com/content/research/en/reports/2023/03/27/d64e052b-0f6e-45d7-967b-d7be35fabd16.html
4. https://deepmind.google/discover/blog/a-major-milestone-for-the- treatment-of-eye-disease/
5. https://doi.org/10.1518/001872097778543886
6. Zuboff, S. (2019). The age of surveillance capitalism: The fight for a human future at the new frontier of power (p. 1). PublicAffairs / Hachette Book Group. ISBN: 978-1610395694
7. https://doi.org/10.3102/0013189X013006004

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

दक्षिण एशिया पर बाहरी शक्तियों का प्रभाव तथा क्षेत्रीय राजनीति

डॉ. रिन्कू
सहायक प्राध्यापक, रक्षा अध्ययन विभाग
जे.पी.जी.सी. रादौर, यमुनानगर

सारांश

दक्षिण एशिया विश्व का एक अत्यंत महत्वपूर्ण क्षेत्र है। इसमें भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, श्रीलंका, भूटान, मालदीव और अफ़ग़ानिस्तान जैसे देश शामिल हैं। यह क्षेत्र भौगोलिक दृष्टि से एशिया, यूरोप और अफ्रीका को जोड़ने वाले मार्ग पर स्थित है, जिससे अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और समुद्री यातायात के लिए इसका विशेष महत्व है। हिंद महासागर, अरब सागर और बंगाल की खाड़ी के कारण यह क्षेत्र सामरिक रूप से भी महत्वपूर्ण बन जाता है। दक्षिण एशिया विश्व की लगभग एक-चौथाई जनसंख्या का निवास स्थान है। यहाँ की विशाल और युवा जनसंख्या इसे मानव संसाधन की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण बनाती है। आर्थिक क्षेत्र में भी दक्षिण एशिया का योगदान बढ़ रहा है। कृषि, उद्योग, सूचना प्रौद्योगिकी और सेवा क्षेत्र में इस क्षेत्र के देशों की भूमिका वैश्विक अर्थव्यवस्था में लगातार सशक्त हो रही है। बाहरी शक्तियों का हमेशा से ही भारत में हस्तक्षेप रहा है प्राचीन काल से अगर हम देखें तो भारत अलग-अलग समय पर अलग-अलग देशों का उपनिवेशक रहा है यहां की प्राकृतिक संपदा, यहां की रीति रिवाज, यहां की युवा जनसंख्या, विश्व का सबसे बड़ा बाजार, बाहरी शक्तियों को भारत की तरफ आकर्षित करता है।

मुख्य शब्द : दक्षिण एशिया, सुरक्षा, सामरिक महत्व, भौगोलिक संरचना।

भूमिका

दक्षिण एशिया विश्व का एक अत्यंत महत्वपूर्ण भू-राजनीतिक क्षेत्र है। यह क्षेत्र जनसंख्या, प्राकृतिक संसाधनों, सामरिक स्थिति और ऐतिहासिक विरासत के कारण सदैव बाहरी शक्तियों के आकर्षण का केंद्र रहा है। बाहरी शक्तियों का हस्तक्षेप यहाँ की राजनीति, अर्थव्यवस्था और सुरक्षा व्यवस्था को गहराई से प्रभावित करता रहा है। सांस्कृतिक और ऐतिहासिक दृष्टि से दक्षिण एशिया का विश्व में विशेष स्थान है। यहाँ की कला, साहित्य, योग, आयुर्वेद और धार्मिक परंपराओं ने विश्व संस्कृति को गहराई से प्रभावित किया है। इस प्रकार भौगोलिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और रणनीतिक कारणों से दक्षिण एशिया का विश्व में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में बाहरी शक्तियों का प्रभाव

औपनिवेशिक काल में ब्रिटेन ने दक्षिण एशिया पर लंबे समय तक शासन किया। ब्रिटिश नीतियों ने सीमाओं का कृत्रिम

निर्धारण किया, जिससे भारत-पाकिस्तान विभाजन, कश्मीर समस्या और क्षेत्रीय तनाव उत्पन्न हुए। स्वतंत्रता के बाद भी शीत युद्ध के दौरान अमेरिका और सोवियत संघ ने इस क्षेत्र को अपने प्रभाव क्षेत्र में लाने की कोशिश की।

प्रमुख बाहरी शक्तियाँ और उनका प्रभाव

1. संयुक्त राज्य अमेरिका

संयुक्त राज्य अमेरिका की दक्षिण एशिया नीति मुख्य रूप से रणनीतिक, सुरक्षा और आर्थिक हितों पर आधारित है। अमेरिका इस क्षेत्र को एशिया, मध्य एशिया और हिंद-प्रशांत को जोड़ने वाले महत्वपूर्ण भू-राजनीतिक क्षेत्र के रूप में देखता है। आतंकवाद से निपटना, परमाणु प्रसार को रोकना, समुद्री मार्गों की सुरक्षा और चीन के बढ़ते प्रभाव को संतुलित करना अमेरिका की दक्षिण एशिया नीति के प्रमुख उद्देश्य रहे हैं। इसी कारण अमेरिका भारत के साथ अपने संबंधों को मजबूत करता है, जबकि पाकिस्तान के साथ उसके संबंध परिस्थितियों और हितों के अनुसार बदलते रहे हैं। अमेरिका का भारत को रणनीतिक साझेदार बनाना भारत की क्षेत्रीय भूमिका को सशक्त करता है और शक्ति संतुलन भारत के पक्ष में झुकता है। इससे भारत-पाकिस्तान और भारत-चीन संबंधों पर भी असर पड़ता है। वहीं, पाकिस्तान को दी जाने वाली या रोकी जाने वाली अमेरिकी सहायता उसकी क्षेत्रीय नीति और सुरक्षा दृष्टिकोण को प्रभावित करती है। अफ़ग़ानिस्तान में अमेरिका की भूमिका ने भी पूरे दक्षिण एशिया की राजनीति और सुरक्षा स्थिति को लंबे समय तक प्रभावित किया है। आर्थिक और कूटनीतिक स्तर पर अमेरिका की नीति दक्षिण एशिया में सहयोग और प्रतिस्पर्धा दोनों को प्रभावित करती है। व्यापार, निवेश और अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं में अमेरिकी प्रभाव के कारण क्षेत्र के देशों की आर्थिक नीतियाँ और आपसी संबंध प्रभावित होते हैं। इस प्रकार, संयुक्त राज्य अमेरिका की नीति दक्षिण एशिया की क्षेत्रीय राजनीति को संतुलन, सहयोग और तनाव-तीनों रूपों में प्रभावित करती है।

चीन का दक्षिण एशिया में हस्तक्षेप

चीन का दक्षिण एशिया में हस्तक्षेप पिछले कुछ दशकों में लगातार बढ़ा है। इसका मुख्य उद्देश्य अपने आर्थिक, रणनीतिक और सुरक्षा हितों को सुरक्षित करना है। चीन "बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव (BRI)" के माध्यम से पाकिस्तान, श्रीलंका, बांग्लादेश और नेपाल जैसे देशों में बड़े स्तर पर निवेश कर रहा है। पाकिस्तान में चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारा (CPEC) चीन की दक्षिण एशिया नीति का सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण है। इसके अलावा चीन सीमावती देशों के साथ सीमा, व्यापार और बुनियादी ढांचे से जुड़े मुद्दों में भी सक्रिय भूमिका निभा रहा है। चीन का यह बढ़ता हस्तक्षेप दक्षिण एशिया की क्षेत्रीय राजनीति को गहराई से प्रभावित कर रहा है। सबसे बड़ा प्रभाव भारत-चीन संबंधों पर पड़ा है। सीमा विवाद, हिंद महासागर में चीन की बढ़ती उपस्थिति और पड़ोसी देशों में चीनी प्रभाव ने भारत की सुरक्षा और विदेश नीति को अधिक सतर्क बना दिया है। इसके परिणामस्वरूप भारत अमेरिका और अन्य देशों के साथ रणनीतिक सहयोग बढ़ा रहा है, जिससे क्षेत्रीय शक्ति संतुलन बदल रहा है। दक्षिण एशिया के छोटे देशों की राजनीति पर भी चीन का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। आर्थिक सहायता और ऋण के माध्यम से चीन इन देशों की नीतियों और कूटनीतिक झुकाव को प्रभावित करता है। इससे कई बार इन देशों में भारत और चीन के बीच संतुलन बनाने की राजनीति देखने को मिलती है। कुल मिलाकर, चीन का दक्षिण एशिया में हस्तक्षेप क्षेत्रीय राजनीति को प्रतिस्पर्धा, शक्ति संतुलन और रणनीतिक गठबंधनों की दिशा में ले जा रहा है। इससे सहयोग के अवसर तो बढ़े हैं, लेकिन साथ ही तनाव, अविश्वास और भू-राजनीतिक प्रतिस्पर्धा भी तेज़ हुई है, जो दक्षिण एशिया की स्थिरता को प्रभावित कर रही है।

रूस का दक्षिण एशिया में हस्तक्षेप

रूस का दक्षिण एशिया में हस्तक्षेप मुख्यतः रणनीतिक, सैन्य, कूटनीतिक और ऊर्जा सहयोग के रूप में दिखाई देता

है, जिसका क्षेत्रीय राजनीति पर गहरा प्रभाव पड़ता है। शीत युद्ध के समय से ही भारत रूस (पूर्व में सोवियत संघ) का प्रमुख रणनीतिक साझेदार रहा है, विशेषकर रक्षा सहयोग, हथियारों की आपूर्ति और अंतरराष्ट्रीय मंचों पर राजनीतिक समर्थन के कारण, जिससे भारत की क्षेत्रीय शक्ति को मजबूती मिली। दूसरी ओर, हाल के वर्षों में रूस ने पाकिस्तान के साथ भी सीमित लेकिन बढ़ते हुए सैन्य और ऊर्जा संबंध विकसित किए हैं, जिससे दक्षिण एशिया की पारंपरिक शक्ति-संतुलन की राजनीति में नया आयाम जुड़ा है। अफगानिस्तान के संदर्भ में रूस की सक्रियता, विशेषकर तालिबान से संवाद और क्षेत्रीय स्थिरता पर जोर, अमेरिका के प्रभाव को संतुलित करने की उसकी नीति को दर्शाती है। रूस, चीन के साथ मिलकर बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था को बढ़ावा देता है, जिसका प्रभाव दक्षिण एशिया में अमेरिकी प्रभाव को चुनौती देने के रूप में देखा जाता है। ऊर्जा परियोजनाओं, परमाणु सहयोग और हथियार सौदों के माध्यम से रूस क्षेत्रीय देशों की आंतरिक और बाहरी नीतियों को प्रभावित करता है। कुल मिलाकर, रूस का हस्तक्षेप दक्षिण एशिया की राजनीति में शक्ति-संतुलन, रणनीतिक स्वायत्तता और बहुपक्षीय कूटनीति को मजबूत करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक बन गया है।

यूरोपियन संघ में अन्य वैश्विक शक्तियों का दक्षिण एशिया पर प्रभाव

यूरोपीय संघ और अन्य वैश्विक शक्तियों का दक्षिण एशिया पर प्रभाव मुख्यतः आर्थिक, कूटनीतिक, सामरिक और वैचारिक स्तरों पर दिखाई देता है, जो क्षेत्रीय राजनीति को बहुआयामी रूप से प्रभावित करता है। यूरोपीय संघ दक्षिण एशिया के देशों के लिए एक बड़ा व्यापारिक और निवेश साझेदार है तथा मानवाधिकार, लोकतंत्र, जलवायु परिवर्तन और सतत विकास जैसे मुद्दों पर अपनी नीतियों के माध्यम से क्षेत्रीय राजनीति को प्रभावित करता है, जिससे कई देशों की आंतरिक नीतियों और कानूनों पर भी दबाव पड़ता है।

बाहरी शक्तियों का दक्षिण एशिया की क्षेत्रीय राजनीति पर प्रभाव

दक्षिण एशिया की क्षेत्रीय राजनीति पर बाहरी शक्तियों का प्रभाव कई बार नकारात्मक रहा है। शीत युद्ध के दौरान अमेरिका और सोवियत संघ के हस्तक्षेप ने राजनीतिक अस्थिरता, सैन्य शासन और लोकतांत्रिक संस्थाओं की कमजोरी को बढ़ावा दिया, जबकि अफगानिस्तान जैसे देशों में लंबे समय तक संघर्ष और अस्थिरता बनी रही। बाहरी देशों के सैन्य और तकनीकी समर्थन ने भारत-पाकिस्तान तथा भारत-चीन के बीच हथियारों की होड़ और सुरक्षा तनाव को बढ़ाया। साथ ही, ऋण, सहायता और निवेश के कारण कई देश आर्थिक रूप से बाहरी शक्तियों पर निर्भर हो गए, जिससे उनकी नीतिगत स्वतंत्रता प्रभावित हुई। बाहरी गठबंधनों और आपसी अविश्वास के कारण क्षेत्रीय सहयोग भी कमजोर पड़ा तथा SAARC जैसे संगठन अपेक्षित सफलता हासिल नहीं कर सके।

बाहरी शक्तियों का दक्षिण एशिया की राजनीति पर सकारात्मक प्रभाव

दक्षिण एशिया की राजनीति पर बाहरी शक्तियों का कई मामलों में सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। अमेरिका, यूरोपीय संघ, जापान और चीन जैसे देशों ने बुनियादी ढाँचे, व्यापार और तकनीकी क्षेत्रों में निवेश कर आर्थिक विकास, रोजगार और तकनीकी क्षमता को बढ़ावा दिया। अंतरराष्ट्रीय संगठनों और बाहरी शक्तियों ने स्वतंत्र चुनाव, न्यायिक सुधार, मानवाधिकार और प्रशासनिक प्रशिक्षण के माध्यम से लोकतांत्रिक संस्थाओं को मजबूत किया। संयुक्त राष्ट्र और अन्य मध्यस्थताओं ने क्षेत्रीय शांति, संघर्ष-निवारण और कूटनीतिक संवाद को प्रोत्साहित कर सैन्य तनाव कम करने में मदद की। साथ ही, सुरक्षा और आतंकवाद-रोधी सहयोग, खुफिया जानकारी साझा करने तथा आपदा-प्रबंधन ने क्षेत्रीय स्थिरता को बढ़ाया। शिक्षा, स्वास्थ्य, छात्रवृत्तियों, टीकाकरण और तकनीकी सहयोग जैसी पहलों ने मानव विकास और सामाजिक प्रगति में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया।

दक्षिण एशिया की राजनीति में बाहरी शक्तियों के हस्तक्षेप की चुनौतियाँ

दक्षिण एशिया भौगोलिक स्थिति, जनसंख्या, संसाधनों और सामरिक महत्व के कारण हमेशा से बाहरी शक्तियों के आकर्षण का केंद्र रहा है। अमेरिका, चीन, रूस और यूरोपीय देशों का इस क्षेत्र में बढ़ता हस्तक्षेप कई बार विकास और सहयोग के अवसर देता है, लेकिन इसके साथ-साथ अनेक गंभीर राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक चुनौतियाँ भी उत्पन्न करता है। सबसे बड़ी चुनौती राष्ट्रीय संप्रभुता पर प्रभाव की है। बाहरी शक्तियाँ आर्थिक सहायता, सैन्य सहयोग या कूटनीतिक दबाव के माध्यम से दक्षिण एशियाई देशों की आंतरिक नीतियों को प्रभावित करने का प्रयास करती हैं। इससे स्वतंत्र निर्णय-निर्माण की क्षमता कमजोर होती है और कई बार सरकारों को जनता के हितों के बजाय बाहरी हितों के अनुसार नीतियाँ बनानी पड़ती हैं, जिससे राजनीतिक असंतोष और अस्थिरता बढ़ती है। दूसरी महत्वपूर्ण चुनौती यह है कि दक्षिण एशिया महाशक्तियों की भू-राजनीतिक प्रतिस्पर्धा का मैदान बनता जा रहा है। अमेरिका-चीन प्रतिद्वंद्विता, रूस की रणनीतिक वापसी और अन्य शक्तियों की सक्रियता ने क्षेत्र को शक्ति-संतुलन की राजनीति में उलझा दिया है। इसका परिणाम यह होता है कि पड़ोसी देशों के बीच विश्वास की कमी बढ़ती है और सहयोग की बजाय प्रतिस्पर्धा व टकराव की प्रवृत्ति मजबूत होती है। सुरक्षा असंतुलन और हथियारों की दौड़ भी एक बड़ी चुनौती है। बाहरी शक्तियाँ अपने रणनीतिक हितों के लिए क्षेत्रीय देशों को हथियार और सैन्य तकनीक उपलब्ध कराती हैं। इससे शक्ति संतुलन बिगड़ता है और सैन्य खर्च बढ़ता है, जो विकासशील देशों के लिए आर्थिक रूप से हानिकारक होता है। साथ ही, छोटे विवाद भी बड़े संघर्ष में बदलने का खतरा बढ़ जाता है। आर्थिक दृष्टि से ऋण और निर्भरता की समस्या गंभीर होती जा रही है। बाहरी निवेश और बुनियादी ढाँचा परियोजनाएँ अल्पकालिक विकास तो लाती हैं, लेकिन भारी कर्ज़ के कारण देशों की आर्थिक स्वतंत्रता सीमित हो जाती है। इससे नीति-निर्माण पर बाहरी प्रभाव बढ़ता है और दीर्घकाल में आर्थिक संकट की आशंका उत्पन्न होती है। इसके अतिरिक्त, बाहरी हस्तक्षेप से क्षेत्रीय संगठनों की भूमिका कमजोर पड़ती है। इस प्रकार, दक्षिण एशिया की राजनीति में बाहरी शक्तियों का हस्तक्षेप अनेक जटिल चुनौतियाँ पैदा करता है। इनसे निपटने के लिए आवश्यक है कि क्षेत्रीय देश आपसी सहयोग बढ़ाएँ, अपनी संप्रभुता की रक्षा करें और बाहरी संबंधों को संतुलित व विवेकपूर्ण ढंग से संचालित करें।

निष्कर्ष

दक्षिण एशिया पर बाहरी शक्तियों का प्रभाव गहरा और बहुआयामी रहा है। इस प्रभाव ने जहाँ विकास और वैश्विक जुड़ाव को बढ़ाया, वहीं राजनीतिक अस्थिरता और तनाव को भी जन्म दिया। जहाँ एक ओर उन्होंने सुरक्षा, निवेश और तकनीक उपलब्ध कराई, वहीं दूसरी ओर राजनीतिक अस्थिरता, सैन्य तनाव, आर्थिक निर्भरता और कमजोर क्षेत्रीय सहयोग जैसी समस्याएँ भी उत्पन्न की। भविष्य में दक्षिण एशियाई देशों को सामूहिक रूप से अपनी क्षेत्रीय राजनीति को मजबूत करते हुए बाहरी हस्तक्षेप को संतुलित करना होगा, तभी यह क्षेत्र स्थिरता, शांति और विकास की ओर अग्रसर हो सकेगा।बाहरी शक्तियों का दक्षिण एशिया की क्षेत्रीय राजनीति पर प्रभाव गहरा और व्यापक रहा है।

संदर्भ (References)

Buzan, Barry. People, States and Fear. Harvester Wheatsheaf.
Cohen, Stephen P. India: Emerging Power. Brookings Institution Press.
Jetly, Nancy. International Politics of South Asia. Sage Publications.
Bajpai, Kanti et al. India's Foreign Policy: A Reader. Oxford University Press.
Bose, Sugata& Ayesha Jalal. Modern South Asia. Routledge

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

जायसी का लोक

अभिजीत सिंह
शोधार्थी, दिल्ली विश्वविद्यालय

'लोक' शब्द भारतीय साहित्य में प्राचीन काल से प्रयुक्त होता रहा है। गीता में कहा गया है कि- 'अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तम।' अतः वैदिक मत के समानांतर चलने वाले अशास्त्रीय और असंस्कृत मत का लोक शब्द के अर्थ में प्रयोग हुआ है। भक्त कवियों ने स्थान विशेष के रूप में 'लोक' शब्द का प्रयोग किया है। स्वयं जायसी की पंक्ति है कि-

''तीन लोक चौदह खण्ड सबै परै मोहि सूझि।''।।96।। जायसी

वर्तमान समय में 'लोक' शब्द का प्रयोग अंग्रेजी के Public शब्द के अर्थ में प्रयुक्त होता है। डॉ. नामवर सिंह का मानना है कि हिन्दी साहित्यालोचना में 'लोक' शब्द का 'जनता' के अर्थ में प्रयोग सर्वप्रथम आचार्य रामचंद्र शुक्ल द्वारा किया गया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने प्रबंधात्मकता की कोटि निर्धारित करते हुए प्रबंधात्मक काव्य में तीन गुणों का समावेश आवश्यक माना- 1. संबंध निर्वाह, 2. कथा के गंभीर और मार्मिक स्थलों की पहचान और 3. दृश्यों की स्थानागत विशेषता अर्थात् (Local Colour)

किसी रचनाकार के काव्य में विद्यमान लोकपक्ष को जानना हो तो उसका सबसे आसान तरीका उस रचनाकार के काव्य में विद्यमान जन्म-प्रेम-विवाह आदि के गीत, लोक कथाओं आदि के वर्णन को जानना चाहिए। जायसी के काव्य में विद्यमान 'दृश्यों की स्थानगत विशेषताओं' के आधार पर हम जायसी के 'लोक' को जानने का प्रयास करेंगे—

भले ही, विजयदेवनारायण साही ने जायसी के 'सिंहल-लोक' को यूटोपिया कहा हो लेकिन जायसी ने जिस प्रकार से 'सिंहलद्वीप' का वर्णन किया है वह भारतीय लोक की समृद्धि और कुशलता का चित्र प्रस्तुत करता है। सिंहलद्वीप में सरवर, पनघट, बगीचों, बावलियों और बाजार का वैभव देखने योग्य है। सिंहलद्वीप में घरों को महाजन धवल श्री से रंगते हैं। आज हम अपने घरों को अनेक प्रकार से सजाने के लिए सबसे पहले रंग करवाते हैं। 15वीं-16वीं शताब्दी में भारतीय अपने घरों को रंगने के लिए धवल श्री (खड़िया मिट्टी या रोली) से रंगते थे।

''सोन रूप भल भलउ पसारा। धवल सिरी पोतहिं घर बारा।।''

जायसी सिंहलद्वीप में रहने वाली 'पद्मिनी-जाति' की स्त्रियों का वर्णन भारतीय परंपरा के अनुसार करते हैं। जायसी ने भारतीय परंपरा में रूढ़ लंक सिंघिनी, सारंग नयनी, हंसगामिनी, कोकिलं बयनी- गुणों को ही पदमिनी जाति की स्त्रियों में दिखाये हैं।

हिंदू समाज में ज्योतिष और पत्रा का प्रयोग प्रत्येक शुभ अवसर पर किया जाता है। सिंहल-लोक के राजा ने अपनी पुत्री के जन्म के समय जन्म-पत्री का निर्माण कराया जिसके अनुसार वह 'कन्या' राशि में जन्मी, कन्या राशि, उत्तरा फाल्गुनी के तीसरे चरण में जन्म लेने के कारण उसका आद्यक्षर 'प' है और नाम रखा गया - पद्मावती।

''कन्यारासि उदय जग कीया। पद्मावती नाम उस दीया।''

पत्रा के अनुसार पद्मावती का विवाह रत्नसेन के साथ होना तय हुआ। रत्नसेन गाजे-बाजे के साथ बारात लेकर निकलता

है और जब बारात का आगमन सिंहललोक में होता है तो पद्मावती की उत्सुकता देखने योग्य है। रत्नसेन के जनवासे में जाने से पूर्व पद्मावती धौराहर (अटारी) पर चढ़कर सखियों संग रत्नसेन को देखने का प्रयत्न करती है। द्वार पर बारात आने पर 'वर' को देखने की जैसी उत्सुकता भारतीय समाज में पाई जाती है उसका बहुत सटीक वर्णन जायसी ने किया है।

'विवाह' भारतीय जनता के बीच प्रतिष्ठा और रीति-रिवाजों से सम्पन्न समारोह है। जहाँ नृत्य-गायन के साथ-साथ भोजन का विशेष प्रबंध रहता है। पद्मावती के विवाह-समारोह में बनने वाले पकवानों की लम्बी सूची जायसी ने दी है। 'बादशाह भोज' के दौरान भी जायसी ने पकवानों की लम्बी सूची दी है। इस फहरिस्त में 16 प्रकार के चावलों का उल्लेख किया गया है। यह गौरतलब है कि इसमें दाउदखानी, ढेला आदि धान अवध-प्रदेश में प्रसिद्ध है जबकि रायभोग, रौदा, कपूरकान्त इत्यादि अवध प्रदेश के आस-पास (जैसे- मिथिला, मुजफ्फरपुर, चम्पारण) के क्षेत्र में पाए जाने वाले चावल के प्रकार हैं। इससे पता चलता है कि जायसी को कृषि की भी जानकारी थी।

'लोक' की अभिव्यक्ति भाषा के द्वारा स्वर प्राप्त करती है। भाषा ही हमारे विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम है। नागमती के विरह-वर्णन में जायसी ने अवधी भाषा के जिस सौन्दर्य को निखारा है उसी के कारण आचार्य रामचंद्र शुक्ल को कहना पड़ा है कि- ''नागमती का विरहवर्णन हिंदी साहित्य में एक अद्वितीय वस्तु है।'' जायसी ने लोक भाषा के माध्यम से हृदय हाथ में सजा कर प्रस्तुत किया है। पद्मावत में बाराह-मासा की परंपरा का निर्वाह करते हुए जायसी जब बैसाख महीने का वर्णन करते हैं तो पहली बारिश के लिए अवधी के चलते शब्द 'दवँगरा' का प्रयोग करते हैं। अत्यधिक गर्मी पड़ने से सरोवर सूखने लगते हैं और धरती में दरारें आने लगती हैं लेकिन बारिश पड़ने से पुनः स्थिति सामान्य हो जाती है। नागमती भी इसी प्रकार की प्रिय-मिलन की कल्पना करती है—

''सरवर हिया घटत निति जाई। टूक टूक होइकै बिहराई।।
बिहरत हिया करहु पिउ! टेका। दीठि दवँगरा मेरवहु एका।।''

भाषा के साथ स्थानीय लोकोक्तियों का प्रयोग जायसी की भाषा को विलक्षण बना देता है। जायसी ने अवधी की प्रसिद्ध लोकोक्ति -'पीछे कै का अउबे झोली बुझावै'- का प्रयोग किया है। जिससे उनके काव्य में स्थानगत विशेषताएँ और अधिक उभर कर आयी हैं। वह नागमती का वियोग वर्णन करते हुए कहते हैं कि—

''तुम्ह बिनु कंता धनि हरूई तन तिनुवर भा डोल।
तेहि पर बिरह जराइ कै चहै उड़ावा झोल।।''

प्रस्तुत पद में 'झोल' शब्द, अवधी का चलता शब्द है और लोकोक्ति में 'राख' के अर्थ में प्रयुक्त होता है। यथा- मरने के बाद क्या तुम मेरी राख बुझाने के समय आओगे। ''पद्मावत काव्य का अनुशीलन करते हुए जिस बात की गहरी छाप मन पर पड़ती है वह यह कि इसके कवि ने भारत-भूमि की मिट्टी के साथ अपने को कितना मिला दिया था। जायसी सच्चे पृथिवी-पुत्र थे। वे भारतीय जनमानस के कितने सन्निकट थे इसकी पूरी कल्पना करना कठिन है। गाँव में रहने वाली जनता का जो मानसिक धरातल है, उसके ज्ञान की जो उपकरण सामग्री है, उसके परिचय का जो क्षितिज है, उसी सीमा के भीतर हर्षित स्वर से कवि ने अपने गान का स्वर ऊँचा किया है। जनता की उक्तियाँ, भावनाएँ और मान्यताएँ मानों स्वयं छंद में बँधकर उनके काव्य में गुँथ गई है।'' अतः जायसी के काव्य में लोक भारतीय संस्कृति और समाज के तादात्म्य से निर्मित हुआ है।

संदर्भ

1. अग्रवाल, वासुदेव शरण- पद्मावत, साहित्य सदन, चिरगाँव (झाँसी), संस्करण- प्रथम पृष्ठ 108
2. शुक्ल, रामचंद्र- जायसी ग्रंथावली, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, तृतीय संस्करण-2020, पृष्ठ 201
3. वही, पृष्ठ 205

4. वही, पृष्ठ 49
5. वही, पृष्ठ 330
6. वही, पृष्ठ 329
7. अग्रवाल, वासुदेव शरण- पद्मावत, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, संस्करण-2021 पृष्ठ 9

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

मोहन राकेश का अनुवाद साहित्य : उपलब्धि और सीमाएँ

मलय गोप
शोधार्थी, हिन्दी विभाग
नागालैंड विश्वविद्यालय, कोहिमा- 797004
संपर्क : 6200408028

शोध-सार : इस शोध.पत्र का केन्द्रीय उद्देश्य मोहन राकेश के अनुवाद.साहित्य को आधुनिक हिंदी अनुवाद-सिद्धांत के परिप्रेक्ष्य से विश्लेषित करना है, जिसमें उनकी अनूदित रचनाओं के भाषाई, भावनात्मक एवं दार्शनिक स्तर पर अर्थ-स्थानांतरण की सीमाएँ तथा उपलब्धियाँ उजागर की जा सकें। मोहन राकेश ने अपने अनुवादों में न केवल साहित्यिक गद्य व नाट्य.साहित्य का भाषांतर किया, बल्कि मूल पाठ के सांस्कृतिक व ऐतिहासिक परिवेश को भी हिंदी पाठक-समुदाय के लिए एक नया अनुवाद.संदर्भ बनाकर प्रस्तुत किया, जिससे भिन्न भाषाओं के बीच साहित्यिक संवाद स्थापित होता है। इस संदर्भ में शोध-पत्र में मोहन राकेश के अनुवादों में भाषा.स्तरीय विकृति, अर्थ-संकोच और भाव-संक्रमण की विशेषताएँ पर विचार किया गया है, जहाँ मूल पाठ के संदर्भ तथा अनुवाद.पाठ के नये सांस्कृतिक माध्यम के बीच गतिशील अंतर-संबंध का विश्लेषण किया गया है। तथा, अर्थ की सीमाओं को विशेष रूप से उन त्रुटियों, भ्रमों और सांस्कृतिक अनुवाद-समस्याओं के रूप में उद्घाटित किया गया है, जहाँ मोहन राकेश के अनुवाद में मूल भावनाओं या दार्शनिक निहितार्थों का आंशिक विघटन या विकृति हुई है। साथ ही, उनकी उपलब्धियाँ उन निर्माणात्मक तकनीकों के रूप में चिह्नित की गई हैं, जिनसे अनुवाद-पाठ स्वतंत्र साहित्यिक रचना के रूप में पाठकीय अनुभव को समृद्ध करता है, न कि केवल शाब्दिक अनुवाद के रूप में सीमित रहता है। यह शोध-पत्र यह स्थापित करता है कि मोहन राकेश के अनुवाद.साहित्य ने हिंदी अनुवाद-परम्परा में न केवल भाषाई बहुआयामिकता का निर्माण किया, बल्कि अर्थ.विस्तार और अर्थ-सीमा के द्वैत को एक लचीले साहित्यिक आयाम में परिवर्तित कर दिया, जिसने आधुनिक हिंदी अनुवाद-साहित्य की सैद्धांतिक व व्यावहारिक समझ को गहराई प्रदान की है।

बीज शब्द : अनुवाद-साहित्य, अनुवाद-सिद्धांत, अर्थ-स्थानांतरण, सीमाएँ एवं उपलब्धियाँ, अर्थ.विस्तार एवं अर्थ-सीमा।

विश्लेषण : मोहन राकेश (1925-1972) नई कहानी आंदोलन के स्तंभ थे, जिन्होंने संस्कृत नाटकों जैसे 'मृच्छकटिकम्' (शूद्रक) एवं 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' (कालिदास) का हिंदी अनुवाद किया। ये अनुवाद न केवल भाषाई रूपांतरण हैं, अपितु सांस्कृतिक संवाद के माध्यम भी, जहाँ प्राचीन अर्थों को समकालीन संदर्भों से जोड़ा गया। अनुवाद सिद्धांतों के अनुसार, 'शब्दानुशब्द' की अपेक्षा 'अर्थानुशब्द' अनुवाद मोहन राकेश की रणनीति रही, जो अर्थ की अखंडता बनाए रखने का प्रयास दर्शाती है। कहने की आवश्यकता नहीं कि मोहन राकेश के अनुवादों ने हिंदी में प्राचीन नाट्य परंपरा को पुनर्जीवित किया। 'मृच्छकटिकम्' में चाणक्य-संस्कृत की जटिल संरचना को सरल, प्रवाहपूर्ण हिंदी में परिवर्तित कर सामाजिक व व्यंग्यात्मक तत्वों को उभारते हुए, इसे मंचीय बनाया। इसी प्रकार 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' में काव्यात्मक अलंकारों को आधुनिक संवेदना से समन्वित कर प्रेम, प्रकृति एवं राजनैतिक द्वंद्व को जीवंत किया, जिससे हिंदी रंगमंच को समृद्धि मिली। इनकी उपलब्धियाँ अनुवाद को सृजनात्मक प्रक्रिया के रूप में स्थापित करती हैं, जहाँ भाषा सीमाओं का अतिक्रमण कर साहित्यिक

मूल्य सृजित होते हैं। जयदेव तनेजा ने लिखा है, “जीवन हो या लेखन राकेश दुनिया के व्याकरण के खिलाफ चलने के आदी थे। उनके लेखन का बुनियादी सरोकार अनुभूति और अभिव्यक्ति के बीच कम-से-कम दूरी रखते हुए लिखना था। वे अपनी अनुभूति और उसकी यथासम्भव सम्पूर्ण अभिव्यक्ति के बीच भाषा या व्याकरण के किसी नियम, कानून और परम्परा को हस्तक्षेप नहीं करने देते थे। इसलिए भाषा-विज्ञान एवं व्याकरण की दृष्टि से राकेश की अनेक अभिव्यक्तियाँ दोषपूर्ण एवं अशुद्ध प्रतीत हो सकती हैं। परन्तु कई बार राकेश निरर्थक ध्वनियों-उद्‌घारों के सार्थक प्रयोग और कुछ भ्रष्ट शब्दों-वाक्यांशों या अभिव्यक्तियों को अपेक्षित अर्थ एवं प्रभाव के सम्पूर्ण सम्प्रेषण की दृष्टि से जानबूझकर इस्तेमाल करते हैं - विशेषतः नाटकों के संवादों में। उस तथाकथित अशुद्ध प्रयोग का महत्त्व शुद्ध प्रयोग के मुकाबले कहीं ज्यादा होता है।”[1] बेशक़, वे भाषा के नियमों - व्याकरण और परंपरा - को अनुभूति के मार्ग में बाधा नहीं बनने देते। अनुवाद-विज्ञान की नज़र से उनके वाक्य ‘दोषपूर्ण एवं अशुद्ध’ लग सकते हैं, लेकिन यह जानबूझकर किया गया प्रयोग है। इसका उद्देश्य अपेक्षित अर्थ एवं प्रभाव का ‘सम्पूर्ण सम्प्रेषण’ करना है। यहाँ ‘अशुद्ध प्रयोग’ का महत्व ‘शुद्ध प्रयोग’ से कहीं अधिक बताया गया है। क्योंकि नाटक में संवाद वास्तविक जीवन की नकल होते हैं - लोग बोलचाल में व्याकरणिक शुद्धता का पालन नहीं करते। मोहन राकेश का यह प्रयोग पात्रों की प्रामाणिकता को बढ़ाता है और भावनाओं को तीव्र बनाता है। जैसे, कोई गुस्सैल पात्र ‘भ्रष्ट भाषा’ में चीखे, तो उसका प्रभाव शुद्ध हिंदी से ज्यादा गहरा होगा। यह तकनीक नाट्य-भाषा को जीवंत बनाती है, जहाँ ध्वनि और लय अर्थ से ऊपर उठ जाते हैं।

प्रसिद्ध भाषाविज्ञानी डॉ. भोलानाथ तिवारी अनुवाद-कार्य में अनुवादक को इसी ‘ध्वनि-व्यवस्था’ पर ध्यान देने की बात करते हैं। उन्होंने स्पष्ट रूप से यह लिखा है, “किसी भाषा के ठीक उच्चारण के लिए उस भाषा के संयुक्त स्वर, संयुक्त व्यंजन, अनुनासिक स्वर, स्वरानुक्रम, व्यंजनानुक्रम, बलाघात, सुरलहर, संगम तथा आक्षरिक विभाजन आदि का ध्यान रखना बहुत आवश्यक है। ध्वनि-वैज्ञानिक स्तर पर अनुवादक के लिए यह संकेत बहुत आवश्यक है कि उसे अनुवाद में यथासाध्य उपर्युक्त दृष्टियों से लक्ष्य भाषा की प्रकृति को अपने ध्यान में रखना चाहिए और कहीं भी स्रोत भाषा की ध्वनि-व्यवस्था का उस पर प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए।”[2] अर्थात् अनुवादक के पास उसके ‘लक्ष्य भाषा’ की ध्वनि-व्यवस्था होनी आवश्यक है। ख़ासकर हिन्दी नाटकों में यह कार्य दुर्लभ था। मोहन राकेश द्वारा ‘मृच्छकटिकम्’ और ‘अभिज्ञानशाकुंतलम्’ के अनुवाद-कार्य से पूर्व “आधुनिक हिन्दी रंगमंच के पास संस्कृत के प्रकाण्ड पंडितों द्वारा किए गए वे प्रामाणिक किन्तु रंग-चेतनाविहीन अकादमिक अनुवाद उपलब्ध थे या फिर संस्कृत से अनभिज्ञ रंगकर्मियों द्वारा अंग्रेज़ी के माध्यम से किए गए अराजक एवं कामचलाऊ अनुवाद थे।”[3] बेशक़ नाट्य-क्षेत्र में ऐसे समय में एक ऐसे अनुवादक की ऐतिहासिक आवश्यकता थी जो संस्कृत नाट्य-परंपरा एवं उसकी रंग-धर्मिता का सैद्धांतिक-व्यावहारिक ज्ञाता होने के साथ-साथ हिन्दी भाषा, साहित्य और नाटक का अधिकारी ज्ञाता और रचनाकार भी हो। यह सभी विशेषताएँ उस समय मोहन राजेश में सम्यक रूप से मौजूद थीं। उन्होंने इन दोनों ही नाटकों का अनुवाद किसी बाहरी दबाव या विवशता के तहत नहीं बल्कि अपनी आंतरिक इच्छा के कारण किए थे। अकारण नहीं उन्होंने ‘अभिज्ञानशाकुंतलम्’ की भूमिका लिखते हुए इस बात की ओर इशारा की है कि, “हर दूसरी-तीसरी पीढ़ी के बाद, और नहीं तो भाषा की दृष्टि से ही, इन रचनाओं के नए-नए अनुवाद की आवश्यकता पड़ती रहेगी। इस तरह अनुवाद भी आज के लिए है - आने वाले कल को इसका स्थान किसी और अनुवाद को लेना होगा।”[4] हालाँकि मेरा यह कहना ग़लत नहीं होगा कि मोहन राकेश के अनुवाद के बाद भी इन दोनों नाट्यानुवाद-पाठ्य और मंचन - दोनों ही दृष्टियों से इससे बेहतर कोई अनुवाद-कार्य नहीं हुआ है।

‘मृच्छकटिकम्’ के एक दृश्य में जहाँ बातें न संस्कृत में स्पष्ट हो रही हैं न हिन्दी में। वैसी स्थिति में अनुवादक मोहन राकेश अपनी ओर से कुछ जोड़ते हुए लिखते हैं - “चारुदत्त का चेट वर्द्धमानक जिसके प्रवेश या उपस्थिति का पहले संकेत नहीं है। सुविधा की दृष्टि से यह वाक्य रदनिका से बुलवाया जा सकता है।”[5] ताकि नाट्य-मंचन में कोई अवरोध न आए। यह मोहन राकेश ही कर सकते हैं। वैसे ही, ‘नमः’ शब्द के लिए ‘नमस्कार’[6] शब्द मोहन राकेश ही जोड़ सकते हैं। साथ ही, नाटक में पात्रों के असंगत नाम को भी कथा के अनुसार सुधारते चलते हैं। जैसे - मूल नाटक में ‘चटी’ की जगह अपने

अनुवाद में उसे वे 'रदनिका'[7] करते हैं ताकि यह अत्यधिक सुस्पष्ट हो।

इन संस्कृत नाटकों के अतिरिक्त मोहन राकेश ने अंग्रेज़ी साहित्य से कई अमूल्य कृत्तियों का हिन्दी अनुवाद किया जो आज भी अपने अनुवाद-व्यवहार के कारण 'मिल का पत्थर' हैं। इंग्लैंड में जन्मे सुप्रसिद्ध साहित्यकार ग्रेहम ग्रीन के विश्वविख्यात उपन्यास 'द एंड ऑफ़ द अफ़ेयर' का हिन्दी अनुवाद 'उस रात के बाद' 1960 में प्रकाशित हुआ। अमरीका के न्यूयॉर्क शहर के जूनियर क्लेरेंस डे के आत्मकथात्मक हास्य उपन्यास 'लाइफ़ विद द फ़ायर' का हिन्दी अनुवाद 'जो कहें पापा जो करें पापा' 1961 में प्रकाशित हुआ। स्वीडिश-अमरीकी लेखिका एदिता मॉरिस के सुप्रसिद्ध उपन्यास 'फ़्लॉवर ऑफ़ हिरोशिमा' का हिन्दी अनुवाद 'हिरोशिमा के फूल' नाम से 1965 में प्रकाशित हुआ। ब्रिटेन की सुप्रसिद्ध रचनाकार हेनरी जेम्स के उपन्यास 'पोट्रेट ऑफ़ ए लेडी' का हिन्दी अनुवाद 'एक औरत का चेहरा' नाम से प्रकाशित हुआ। ग़ौरतलब है कि इन अंग्रेज़ी उपन्यासों का हिन्दी अनुवाद मोहन राकेश की सृजनात्मक चेतना के विस्तार के रूप में देखा गया क्योंकि "यह उपन्यास उनके भी बेसब्र और प्रयोगशील जीवन से मिलते-जुलते हैं। सम्भव है अनुवाद के लिए इस रचना को चुनने का यह भी एक कारण रहा हो!"[8] कहने की आवश्यकता नहीं कि अनुवादक के पास दोनों भाषाओं के साथ-साथ 'विज्ञान, शिल्प और कला तीनों की विशेषताएँ'[9] होती हैं जिनके सहारे ही वह एक अनुवाद सामग्री नहीं अपितु एक रचनात्मक संसार का सृजन कर रहा होता है। यह महज़ संयोग नहीं कि, "एक भाषा का विद्वान् एक अच्छा लेखक हो सकता है परन्तु एक अच्छा अनुवादक नहीं हो सकता। एक अच्छे अनुवादक के लिए कम-से-कम दो भाषाओं का अच्छा ज्ञान आवश्यक है। इसलिए कहा जाता है कि लेखक होना आसान है, अनुवादक होना कठिन है।"[10] बेशक़, मोहन राकेश इस कठिन क्षेत्र की साधना कर रहे थे। दूसरी उन्होंने अनुवाद के लिए नाट्य और उपन्यास-विधा को चुना। उपन्यास या नाटकों में - वह चाहे सामाजिक हो, आंचलिक हो या ऐतिहासिक हो - उसके अनुवाद में सबसे बड़ी कठिनाई होती है उसके वातावरण के पुनः निर्माण की, और इस सन्दर्भ में स्रोत और लक्ष्य भाषाओं में जितनी सांस्कृतिक दूरी होती है उतनी ही अनुवाद में कठिनाई होती है। विदेशी परिवेश, भौगोलिक नाम, देश-काल-भेद, शब्द - सभी वातावरण के पुनः निर्माण में कठिनाई प्रस्तुत करते हैं। इस दृष्टि से भी मोहन राकेश एक सधे हुए रचनाकार साबित हुए हैं इसमें कोई दो राय नहीं है।

'द एंड ऑफ़ द अफ़ेयर' उपन्यास का अनुवाद 'उस रात के बाद' करते हुए मोहन राकेश ने पात्रों के नाम में भी ध्वनि साम्य को देखते हुए सुधार की है। जैसे मूल अंग्रेज़ी उपन्यास में मुख्य पात्र को बैंडिक्स (Bendix) सम्बोधित किया गया है। उसकी जगह अनुवादक मोहन राकेश बैंड्रिक्स सम्बोधन करते हुए लिखते हैं - 'बैंड्रिक्स की जगह कई पुस्तकों में बैंडिक्स (Bendix) भी पाया जाता है।'[11] यह उनका अपना संशोधन है - हिन्दी संसार के ध्वनि और भाव साम्य के लिए। वहीं उपन्यासकार हेनरी के कथन को हिन्दी वाला बनाते हुए वे कुछ इस तरह की व्यंजना के साथ आते हैं - "धोखा खाया हुआ पति मज़ाक का विषय होता है, धोखा खाया हुआ प्रेमी नहीं। बल्कि वह एक सम्मानित व्यक्ति ही समझा जाता है। साहित्य भी उसी का पक्ष लेता है। धोखा खाए हुए प्रेमी का दुख दुख ही समझा जाता है, उपहास का विषय नहीं।"[12] बिल्कुल एक विदेशी परिवेश को हिन्दी के वातावरण में ढालना ही सुबोध अनुवादक की दक्षता मानी जाती है। इस दक्षता में मोहन राकेश के महत्व को स्वीकार करने में हम पाठकों को कोई हिचक नहीं है। वहीं एक शब्द 'वेदर-हाउस'[13] के लिए उन्होंने हिन्दी में - "एक खिलौना, जिसमें एक घर तथा स्त्री और पुरुष की आकृतियाँ बनी रहती हैं। अच्छे और बुरे मौसम के अनुसार वे बारी-बारी से बाहर निकलते रहते हैं।"[14] उसी तरह से 'लाइफ़ विद द फ़ायर' उपन्यास के हिन्दी अनुवाद 'जो कहें पापा जो करें पापा' में एक जगह आए 'नाइट्स ऑफ़ लेबर' के लिए 'एक आरम्भिक श्रमिक संस्था'[15] नाम देना देश-काल, परिस्थिति, परिवेश और वातावरण के अनुसार हुआ है।

अपने अनुवाद-कार्य के दरमियान होने वाली परिस्थितियों का ज़िक्र करते हुए उन्होंने हिन्दी के अनुवादकों के समक्ष एक 'लंबी रेखा' खींच दी है। 'द पोर्ट्रेट ऑफ़ ए लेडी' का अनुवाद 'एक औरत का चेहरा' के लिए भूमिका के तौर पर उन्होंने 'अनुवादकीय' लिखा है जिसमें उनकी बातों को ग़ौर से देखा जाना चाहिए - "हेनरी जेम्स ने जिस सामर्थ्य के साथ अपनी भाषा का प्रयोग किया है, उसकी एक माँग यह थी कि अनुवाद की भाषा में भी उतनी ही सामर्थ्य हो, और दूसरी कि उसी

सामर्थ्य के साथ उसका प्रयोग किया जाए। यह लगभग असम्भव जान पड़ता था - इसमें सीमाएँ भाषा की भी थीं और समय की भी। दूसरी चुनौती अनुवाद को अनुवाद की कृत्रिमता से बचाते हुए अपनी भाषा की सहज अन्विति में अर्थ-सम्प्रेषण की थी। चुनौती इसके अतिरिक्त भी कई स्तरों पर थी, जैसे- मूल लेखक के बिम्ब-विधान को ज्यों-का-त्यों बनाए रखने के स्तर पर और इन सब चुनौतियों से लड़ते हुए इस कार्य को पूरा करने में एक साल निकल गया। साल के अन्त तक जितनी थकान हो गई थी, उसने और भी छः महीने कुछ काम नहीं करने दिया। फिर भी यह बात मन में बनी रही कि जो मैं चाहता था, उसके लिए अभी कम-से-कम साल भर का समय और चाहिए था। परन्तु उतना समय क्या किसी भी स्थिति में मैं दे पाता? और उतना समय दिया जा सके, इसके लिए अपेक्षित आर्थिक सुविधा हो पाती? यह बात हमें हिन्दी में किए जा रहे अनुवाद-कार्य के एक और पक्ष पर ले आती है। बहुत-से अनुवाद हिन्दी में बहुत आसानी से कर दिए जाते हैं - बड़े-बड़े क्लासिक्स के अनुवाद महीनों-हफ़्तों में छप-छपाकर सामने आ जाते हैं। परन्तु उन्हें क्या वास्तव में अनुवाद कहा जा सकता है? मुझे लगता है कि ऐसे अनुवाद अनुवाद न होकर एक तरह का दोहरा अन्याय है - हिन्दी के साथ और मूल रचनाओं के साथ। परन्तु यहाँ क्योंकि अनुवाद-सम्बन्धी दृष्टि ही कुछ दूसरी है - अनुवाद का काम अनुवाद के लिए न होकर कुछ थोड़ा-बहुत लाभ देने या पाने की सम्भावना से होता है - इसलिए आए दिन विश्व की महानतम रचनाएँ तीसरे दर्जे की अपठनीय कृतियों में बदलकर हमारे सामने आती रहती हैं। हमें इससे कुछ नहीं होता, क्योंकि अनुवाद का यह अर्थ हमारे यहाँ स्वीकृत-सा ही है। अनुवाद होते हैं, पुस्तकें छपती हैं और पुस्तकालयों में चली जाती हैं। कितने लोग इन पुस्तकों को पढ़ते हैं, इसका कुछ अनुमान पुस्तकालयों में इन पुस्तकों की चिटों पर लगी मोहरों को देखकर लगाया जा सकता है।"[16] बेशक़, यह किसी भी अनुवादक का बेहद ईमानदार कथन है, जिससे होकर ही उसने अपने अनुवाद-सृजन की यात्रा पूरी की है। लेकिन यह प्रश्न शायद अनुत्तरित ही रहेगा कि - क्या पुस्तकालयों में अपनी नाम से पुस्तकों की ढेर लगाने वाले अनुवादक ऐसा कर पा रहे हैं?

हालाँकि कुछ-कुछ जगहों पर मोहन राकेश से भी चूक हुई है जिसकी ओर मेरी एक इशारा होगी कि उनके द्वारा की गई संस्कृत नाटकों के अनुवाद में बहु-अन्योन्याश्रित पदावलियाँ हिंदी की समानार्थकता से टकराती हैं, फलस्वरूप 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' के सूक्ष्म भाव-भंगिमाएँ जैसे- शकुंतला का वन्य-रस अपूर्ण रह जाते हैं। सांस्कृतिक संदर्भों का ह्रास, जैसे प्राचीन रीति-रिवाजों का आधुनिक पाठकों से अलगाव, अर्थ की सीमा रेखांकित करता है। मोहन राकेश की 'Sense for Sense' विधि भले ही शब्द-केंद्रित अनुवाद से श्रेष्ठ हो, किंतु स्रोत-भाषा की लय, छंद एवं प्रतीकात्मकता का कुछ नुकसान अवश्य हुआ। कुल मिलाकर मोहन राकेश का अनुवाद-साहित्य हिंदी को वैश्विक साहित्य से जोड़ने की कड़ी बन पाई है, जहाँ सीमाएँ भी नवीन-सृजन को जन्म देती हैं।

सन्दर्भ एवं टिप्पणी

1. तनेजा, जयदेव; संपादकीय-मोहन राकेश रचनावली, खंड-1; पृ.19; राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली; सं.2011.
2. तिवारी, भोलानाथ; अनुवाद विज्ञान : सिद्धांत एवं प्रविधि; पृ.330; किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली; सं.2019.
3. तनेजा, जयदेव; संपादकीय; पूर्वोद्धृत-खंड-11; पृ.9.
4. राकेश, मोहन; पूर्वोद्धृत; पृ.205.
5. वही, पूर्वोद्धृत; पृ.35.
6. वही, पूर्वोद्धृत; पृ.60.
7. वही, पूर्वोद्धृत; पृ.66.
8. तनेजा, जयदेव; संपादकीय; पूर्वोद्धृत-खंड-13; पृ.11.
9. तिवारी, भोलानाथ; पूर्वोद्धृत; पृ.52.

10. नज़ीर, डॉ. आरिफ़, हिन्दी में अनुवाद की भूमिका और द्विभाषी कम्प्यूटरीकरण (शोध); पृ.32; अनंग प्रकाशन, नयी दिल्ली; सं.2005.
11. राकेश, मोहन; पूर्वोद्धृत-खंड-12; पृ.20.
12. वही, पूर्वोद्धृत; पृ.30.
13. वेदर हाउस (Weather House) को एक आम अनुवाद की भाषा में 'मौसम घर' कहा जा सकता है, लेकिन मोहन राकेश इसके लिए दूसरा अनुवाद निर्धारित करते हैं।
14. राकेश, मोहन; पूर्वोद्धृत-खंड-12; पृ.32.
15. वही, पूर्वोद्धृत; पृ.199.
16. राकेश, मोहन; अनुवादकीय, पूर्वोद्धृत-खण्ड-13; पृ.16.

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

समकालीन हिंदी कविता में सांप्रदायिकता

डॉ. मनोज कुमार
सह-प्रोफेसर
हिंदी विभाग, सत्यवती कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय

भूमिका

हिंदी की समकालीन कविता अपने समय की मुखर अभिव्यक्ति है। नयी कविता के बाद अस्तित्व में आई समकालीन हिंदी कविता ने यथार्थ और मोहभंग, सामाजिक राजनीतिक विसंगतियां, आम आदमी के संघर्ष, उसकी पीड़ा, मानसिक द्वंद्व, अकेलापन तथा महिला, दलित-आदिवासी द्वंद्व, स्वर को अभिव्यक्ति प्रदान की है। समकालीन हिंदी कविता अपने समय के साथ चलती है। अपने समाज के साथ जीती है। अपने समय के सवालों को पाठकों के सामने रखती है। इस कविता ने नयी कविता के बाद के विभिन्न काव्यांदोलनों की जलवायु को महसूस किया है। ताजी कविता, अकविता, बीट कविता, नवगीत, सचेतन कविता, प्रतिबद्ध कविता और जनवादी कविता इत्यादि में; प्रतिमानों से असंतुष्टि सामाजिक असंतोष, लघु मानव की पीड़ा, आपातकाल और नक्सलबाड़ी आंदोलन का प्रभाव लक्षित होता है। इसके साथ ही समकालीन हिंदी कविता जाति विद्वेष, धार्मिक उन्माद इत्यादि के सवाल को भी उठाती है जिससे सांप्रदायिक सद्भाव को खतरा महसूस होता है।

साम्प्रदायिकता और उसकी परिभाषा

भारतीय समाज विविधताओं से भरा हुआ समाज है। यहाँ विभिन्न सामाजिक संरचनाओं के लोग, विभिन्न प्रकार के विचार रखने वाले, विभिन्न संस्कृतियों, नस्लों और धार्मिक समूह को मानने वाले लोग एक साथ रहते हैं। अनेकता में एकता की ऐसी सामूहिकता किसी अन्य देश के समाज में दिखाई नहीं देती है। भारत में विभिन्न प्रकार के सम्प्रदाय और पंथ प्राचीन काल से एक साथ गतिशील हैं। लेकिन इसकी गतिशीलता में कभी-कभार रूकावट भी आती है। जिसका सबसे बड़ा कारण धार्मिक और साम्प्रदायिक श्रेष्ठता को स्थापित करने वाले लोग होते हैं। धार्मिक और साम्प्रदायिक श्रेष्ठता स्थापित करने का परिणाम साम्प्रदायिकता के रूप में हमारे सामने आता है। यही साम्प्रदायिकता को जन्म देने का कारण बनता है। इसका परिणाम भयावह होता है। यह एक संकीर्ण विचारधारा है, जिसका उपयोग धार्मिक समूहों के मध्य नफरत फैलाने, अविश्वास को बढ़ावा देने के लिए किया जाता है। राजनीतिक लामबंदी करने के लिए इसका इस्तेमाल राजनीतिक समूह करते हैं। ऐसी विचारधारा ही साम्प्रदायिक दंगों, लिंचिंग और सामाजिक अलगाव की जड़ है।

'साम्प्रदायिकता' को लेकर विभिन्न विद्वानों ने इसकी अलग-अलग परिभाषाएं दी हैं। श्री रामयेरेन्कर के अनुसार -''साम्प्रदायिकता अपने समुदाय की सोच को कट्टरता के साथ पालन करने की प्रवृत्ति से जन्म लेती है, क्योंकि इसका संबंध धार्मिक समुदाय से होता है, इसलिए इसका झुकाव धर्म तथा धर्म से जुड़े आयामों की ओर विशेष रूप से होता है।''[1] सतीश सेठ ने साम्प्रदायिकता की परिभाषा देते हुए लिखा है ''साम्प्रदायिकता एक सोच है जो दो समुदायों के बीच संबंधों में धीरे-धीरे

दरार डालती हैं।[2] सामुदायिकता पर अपने विचार रखते हुए पुरुषोत्तम अग्रवाल ने लिखा है ''साम्प्रदायिकता का अर्थ है- हिंसा और छद्म पर आधारित अन्यायपरक विचारधारा।''[3] इन परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि अपने धर्म का वर्चस्व प्रतिस्थापित करने हेतु दूसरे के धर्म, सम्प्रदाय, मान्यताओं पर अविवेकपूर्ण विचार थोपना और उन्हें साबित करने के लिए हिंसा का सहारा लेना। साम्प्रदायिक होना या साम्प्रदायिकता है। इस तरह की प्रवृत्ति दुनिया के सभी समाजों में दिखाई देती है।

साम्प्रदायिकता का इतिहास

भारत में साम्प्रदायिकता का इतिहास पुराना है। मध्यकाल में औरंगजेब के द्वारा कुछ ऐसे कार्य किए गए हैं जिन्हें धार्मिक दृष्टि से असहिष्णु कहा जा सकता है। मंदिरों को तोड़ना, जबरन धर्मांतरण, सिख गुरु की हत्या इत्यादि से इसका संकेत मिलता है। साम्प्रदायिकता का वर्तमान स्वरूप अंग्रेजों के आगमन के बाद दिखाई देता है। हालाँकि सन् 1857 के समय हिंदू-मुस्लिम एकजुट होकर सामने आए, लेकिन प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के बाद अंग्रेज 'फूट डालो राज करो' की नीति से अपने मकसद में कामयाब होते चले गए। सन् 1905 का बंगाल विभाजन साम्प्रदायिकता को आधार बनाकर ही किया गया। सन् 1906 में मुस्लिम लीग की स्थापना का आधार भी यही था। इसके साथ सन् 1909 में मार्ले-मिंटो सुधार, सन् 1932 में कम्यूनल अवार्ड, सन् 1940 में पाकिस्तान की मांग और भारत विभाजन का आधार भी साम्प्रदायिकता ही थी। आजादी के बाद सन् 1984 में सिख विरोधी दंगे, सन् 1989 में घाटी से कश्मीरी पंडितों का निष्कासन, मेरठ दंगे, सन् 1992 में बावरी मस्जिद विवाद, सन् 2002 में गुजरात में दंगे, सन् 2013 में मुज़फर नगर दंगे साम्प्रदायिकता की ही उपज थे।

साहित्य पर प्रभाव

साम्प्रदायिकता का प्रभाव केवल समाज पर ही नहीं पड़ा है बल्कि उस समाज के साहित्य पर भी पड़ा है। धर्म की श्रेष्ठता की जंग में साहित्य मनुष्यता का पक्षधर है। साहित्य साम्प्रदायिकता के बुनियादी सवालों से टकराता है। उसके कारणों की तह तक पहुँचने का रास्ता बताता है, और मनुष्यता के सामने सबक रखता है। आजादी के बाद का हिंदी साहित्य ऐसे सवालों को रेखांकित करता है। हिंदुस्तान जिन परिस्थितियों में सन् 1947 में आजाद हुआ उसकी पृष्ठभूमि बहुत भयावह है।

आजादी और देश के बंटवारे के दरम्यान साम्प्रदायिक सोच ने सदियों तक साथ रहे दो कौमों को किस मोड़ पर ला खड़ा किया है इसकी तस्वीर साहित्य में देखी जा सकती है। मोहन राकेश, भीष्म साहनी, राही मासूम रज़ा, यशपाल का कथा साहित्य साम्प्रदायिकता से प्रभावित है। भीष्म साहनी का 'अमृतसर आ गया', मोहन राकेश की कहानी 'शहर में कर्फ्यू', 'मलबे का मालिक', यशपाल का 'झूठा सच', राही मासूम रज़ा का 'आधा गाँव', 'ओस की बूंद' इत्यादि साम्प्रदायिकता से प्रभावित रचनाएँ हैं।

समकालीन हिंदी कविता पर साम्प्रदायिकता का प्रभाव

आजादी के बाद की हिंदी कविता ने भी साम्प्रदायिकता की आंच को महसूस किया है। रामा शंकर 'विद्रोही' की कविता 'नूर मियाँ' मुसलमानों की पहचान, भेदभाव और उनके पलायन को रेखांकित करती है। सूरमा बेचने वाले 'नूर मियाँ' मुल्क के तकसीम होते ही अपनी पहचान खो देते हैं। उनकी नयी पहचान पाकिस्तान बन जाता है। वह हिंदुस्तान से अपनी दैहिक पहचान बचाने के लिए पाकिस्तान चले जाते हैं ''और / यही नूर मियाँ पाकिस्तान चले गए / क्यों चले गए पाकिस्तान, नूर मियाँ? / कहते हैं कि नूर मियाँ के कोई था नहीं, / तब क्या, हम कोई नहीं होते थे नूर मियाँ?'[4] इस रूप में 'नूर मियाँ' कविता केवल साम्प्रदायिकता तक सीमित नहीं है, बल्कि यह कविता साम्प्रदायिकता के कारण इंसानियत की तक्सीम होने की कविता भी है। यह कविता, टूटते हुए समाज, तक्सीम होते हुए रिश्ते और सदियों की साझी संस्कृति के बिखरने की सूचना भी देती है। यहाँ कविता का दायरा बड़ा हो जाता है। कविता एक सवाल की तरह पाठक के सामने खड़ी हो जाती है, जिसका उत्तर मिलना कठिन हो जाता है।

समकालीन हिंदी कविता का साम्प्रदायिक परिदृश्य जिस हिंदुस्तान के आवाम या समाज का चित्रण करती है उसका चेहरा भयावह और रक्तरंजित है। जो अश्वत्थामा की तरह अपने वजूद की स्वयं हत्यारी है। जिसके दामन पर मेरठ, मुज़फर नगर, भागलपुर, सहारनपुर, मेवात, दिल्ली आदि में मरे हुए लोगों के खून के धब्बे हैं। साम्प्रदायिक सोच, उसकी कट्टरता सबसे पहले कमजोर, मजबूर व्यक्ति पर वार करती है। कमजोर और मजबूर व्यक्ति साम्प्रदायिकता का शिकार सबसे पहले होता है। साम्प्रदायिक झगड़ों में सबसे अधिक मरने वाला निम्न मध्यवर्गीय व्यक्ति है, जिसके कंधे पर धर्म की सलीब टिकी होती है। आर्थिक रूप से सम्पन्न व्यक्ति के लिए धर्म, समाज, जाति, गोत्र के पहचान की जरूरत अधिकांशतः नहीं पड़ती।

विकास की असमानता दो सम्प्रदायों के बीच असंतोष पैदा करती है। जब एक समुदाय को लगता है कि सरकार या व्यवस्था दूसरे समुदाय को आर्थिक लाभ पहुंचा रही है तो साम्प्रदायिक का बीज-वपन होता है। साम्प्रदायिक दंगों का शिकार अंडे का ठेला लगाने वाले, सब्जी बेचने वाले, पंचर बनाने वाले, कुली का काम करने वाले, ऑटो चलाने वाले अति निम्नमध्यवर्गीय व्यक्ति होता है। दंगों का शिकार आभिजात्यवादी व्यक्ति नहीं है। उसके लिए व्यवस्था है। साम्प्रदायिकता को चित्रित करने वाली हिंदी कविता में ऐसे बहुत दृश्य हैं। रमा शंकर यादव 'विद्रोही' की 'नूर मियाँ' कविता के नूर मियाँ, पंकज चतुर्वेदी की 'शमीम' में यही निम्न मध्यवर्गीय लोग हैं, जो आर्थिक असमानता के कारण मारे जाते हैं।

साम्प्रदायिकता ने इस वर्ग के अतिरिक्त सबसे अधिक पीड़ा स्त्रियों और बच्चों को पहुँचाई है। साम्प्रदायिकता से प्रभावित स्त्री और बच्चे सबसे अधिक रहे हैं। स्त्री को सबसे अधिक नुकसान उठाना पड़ा है। दरअसल फासीवादी पितृसत्ता का सबसे अधिक शिकार स्त्री रही है। मेरठ से मुजुरनगर तक वह धर्म की सलीब पर सबसे पहले टांगी गई है। उसके बाद उसके अजन्में बच्चों को त्रिशूल की नोंक पर टांगा गया है। यदि साम्प्रदायिक दंगों के कारण उसके दामन पर हमले न बोले जाते तो ऐसा लिखने की जरूरत न पड़ती ''एक स्त्री बात करने की कोशिश कर रही है / तुम उसका चेहरा अलग कर देते हो धड़ से / तुम उसकी छाँतियाँ अलग कर देते हो / तुम उसकी जांघें अलग कर देते हो / तुम एकांत में करते हो आहार / आदमखोर! तुम इसे हिंसा नहीं मानते।''[5] साम्प्रदायिक दंगों ने स्त्री से जीने का बुनियादी हक भी छीन लिया है। शुभा की यह कविता स्त्री होने के दर्द का खुला खत है। हर दंगे में स्त्री दंगाइयों के लिए खुराक और आहार बन के रह जाती है।

हमने अपने धर्म के देवत्व के लिए स्त्री के देवीत्व संहार किया है। उसे छुपाने के लिए उसे देवी के रूप में प्रतिष्ठित किया है। समकालीन हिंदी कविता ऐसी स्थापनाओं का ईमानदारी से इनकाउंटर करती है। इसीलिए कविता सिंह व्यंग्यात्मक लहजे में स्त्री की नियति से साक्षात्कार करवाती है- ''नमन करूँ इस देश को / जहाँ मार दी जाती हैं हर रोज / ढेर सारी औरतें / जहाँ एक औरत का जीवित रहना चमत्कार की तरह है।''[6] औरत का मरना धर्म का मरना है। धर्म का मरना किसी देश की अस्मिता और संस्कृति का मरना है। यह कविता भारतीय संस्कृति पर एक व्यंग्य की तरह है, जहाँ स्त्री को देवी के रूप में पूजा जाता है लेकिन वही एक स्त्री यह लिखने पर विवश है कि ''जहाँ एक औरत का जीवित रहना / एक चमत्कार की तरह है।''[7]

दंगों की सबसे आसान शिकार औरत है, जबकि औरत का कोई मजहब नहीं होता। इसके अजनों बच्चे का कोई मजहब नहीं होता। साम्प्रदायिक दंगों का शिकार औरत के साथ-साथ मासूम बच्चे भी हुए हैं। बच्चों की हत्या करना साम्प्रदायिकता के लिए जरूरी है। क्योंकि यही बच्चे साम्प्रदायिकता के खिलाफ खड़े हो सकते हैं। इसलिए हरेक मजहब में बच्चे की परवरिश अलग-अलग तरह से होती है। यह भी हत्या का एक तरीका है। कुँवर नारायण की कविता 'कूपमंडूक' ऐसे ही संकेत करती है-''...अचानक एक नन्हा सा मेंढ़क दिखा / जो दूसरे नन्हे-नन्हे मिंढकों के साथ / खेल रहा था बड़ा होने का खेल रु उससे पूछा, तुम किस कुएँ में रहते हो?/ अभी तो मैं बच्चा हूँ / माँ-बाप के कुएँ में रहता हूँ / बड़ा होकर अपना कुआँ खुद बनाऊँगा ...।''[8] यह कुआँ धार्मिक कट्टरता का है, जिसके कारण बच्चे मानसिक और मनोवैज्ञानिक स्तर पर साम्प्रदायिकता के शिकार होने लगते हैं। धीरे-धीरे उनकी वैचारिकता कुंध होने लगती है। वह अपने दुनिया, कुएँ के ज्ञान को ही समझने लगते हैं। इससे मज़हबी कट्टरता को बढ़ावा मिलता है। मजहबी कट्टरता की बलि हरेक दंगे में बच्चों की चढ़ती है। निंदा फाजली

की कविता 'पहचान' साम्प्रदायिक दंगों में मार दिए गए बच्चों की तस्वीर कुछ यूँ खींचती है - ''जिन्होंने मेरी कुटिया में अंधेरी रात में घुसकर / मेरी आँखों के आगे / मेरे बच्चों को जलाया था / वो कोई और थे / वो चेहरे तो कहाँ अब ज़हन में महफूज जज साहब।''[9] बच्चों के जलाए जाने का दृश्य इससे पहले नहीं मिलता है। पृथ्वी का सबसे बड़ा दुख किसी 'माँ' के सामने उसके बच्चों की हत्या है। साम्प्रदायिकता एक माँ को ऐसी ही पीड़ा देती है। 'माँ' उन कट्टर और क्रूर चेहरों को पहचानने से इंकार कर देती है, जिन्होंने उसके बच्चों की हत्या धर्म के नाम पर की है। धर्म के ठेकेदारों के लिए इससे शर्मनाक स्थिति क्या होगी? जहाँ मजहब के नाम पर बच्चों को जिंदा जला दिया गया हो! और जहाँ कवि यह लिखने पर मजबूर हो गया हो-''पास हो तो सूँघ कर पहचान सकती हूँ / जो उस जंगल से आये थे / जहाँ की औरतों की गोद में / बच्चे नहीं हँसते।''[10] जो बच्चे मजहब का अर्थ नहीं जानते और जिन्होंने अभी आँखें भी ठीक से नहीं खोली हैं, उन्हें मज़हबी झगड़ों में मार देना, दुनिया का कोई मजहब नहीं सीखाता। माँ की आँखों के सामने उसके जिंदा मासूम बच्चों की हत्या दुनिया की सबसे बड़ी हिंसा है। और इस हिंसा पर हमारे दौर की हिंदी कविता तल्खी से वार करती है। कविता अपने ढंग से उस दुनिया से साक्षात्कार करवाने की कोशिश करती है जो अपने चरित्र में हिंसक और पाश्विक है।

धार्मिक कट्टरता को बढ़ावा देने वाले लोग इस बात को जानते हैं कि यदि इन बच्चों को कुएँ का मेढक नहीं बनाया गया, या जिंदा नहीं जलाया गया तो यही बच्चे ईश्वर की घंटी बजा देंगे। ईश्वर की घंटी बजाने का अर्थ ईश्वर के नाम पर चल रही दुकानदारी पर सटर गिराना है। मजहबी यह जानते हैं कि एकता या बच्चे उनकी दुकानों के लिए खतरा है। प्रेमरंजन अनिमेष के शब्दों में यही ईश्वर की घंटी बजा देना है ''ऊँची है मंदिर की घंटी / ऊँचा ऊँचा और ऊँचा / उछल रहा है बच्चा / उस तक पहुँचने के लिए / सोचता काश थोड़ा और बड़ा होता / बड़ा होता वह / ईश्वर की घंटी बजा देता।''[11] यह कविता प्रगतिशीलता का उत्तम उदाहरण है। धार्मिक कट्टरता और साम्प्रदायिक हिंसा का सामना बिना घंटी बजाए संभव नहीं है। निदा फाजली के एक दोहे में एक बच्चा अल्लाह की नीयत पर प्रश्न चिन्ह् खड़ा कर देता है-''बच्चा बोला देखकर मस्जिद आलीशान/अल्लाह तेरे एक को, इतना बड़ा मकान।''[12] ऐसे प्रश्न करने का साहस बच्चों के पास ही है। क्योंकि ईश्वर और अल्लाह की घंटी मासूम बच्चे ही बजा सकते हैं? यही बच्चे साम्प्रदायिकता को वस्त्रहीन कर सकते हैं। ईश्वर को कटघरे में खड़ा करने की बहुत कम कविताएँ मिलती हैं।

साम्प्रदायिकता का एक कारण भाषा भी है। भाषा ही वह औजार है, जिसके सहारे साम्प्रदायिक तत्व अपने मनसूबों को प्रचारित करते हैं। इसी के सहारे अपनी बात दूसरों के दिमाग में ठूँसते हैं। जिस माहौल और समाज में हम रहते हैं, उसी के अनुरूप हम व्यवहार करते हैं। वही भाषा और आचार व्यवहार बच्चे भी सीखते हैं। बच्चों की कोई भाषा नहीं होती। समाज ही अपनी भाषा बच्चों में ठूसता है। बच्चे वैसा ही व्यवहार करने लगते हैं जैसा वह सीखते हैं। ठीक वैसे ही साम्प्रदायिकता को जन्म दिया जाता है। हम मज़हब के नाम पर कट्टरता को बच्चे के भीतर ठूँसते हैं। विष्णु खरे की कविता-'गुंगमहल' इसी सत्य को उद्घाटित करती है। इस कविता में कवि ने वैज्ञानिकता को सिद्ध करने के लिए यथार्थ और कल्पना का सहारा लिया है। कविता के प्रसंग में एक बुनियादी सवाल है, जिसके जवाब की तलाश की कोशिश कविता में की गई है। प्रसंग अकबर के दीवानेख़ास का है, जहाँ चर्चा हुई की ख़ुदा की पैदाइशी पवित्र भाषा कौन सी है। उलेमाओं ने कहा- अरबी और ब्राह्मणों ने कहा 'संस्कृत'। फैसला करने के लिए अकबर ने एक ही समय में 'माँ' बनने वाली बीस गर्भवती हिंदू और मुसलमान औरतों को चुना। उनकी संतानों को पैदा होते ही बियावान में स्थित एक सूने महल में भेज दिया। जहाँ धायों ने मुँह पर पट्टी बाँधकर उन्हें पाला-पोसा। योजना यह थी कि यह देखा जाए कि बड़े होने पर यह बच्चे कौन सी भाषा बोलते हैं। जो भाषा बोलेंगे वही भाषा ईश्वर-अल्लाह की भाषा होगी। बच्चे बड़े हुए तो सबकी मौजूदगी में उन्हें पेश किया गया। वे डरे सहमे हुए थे। अकबर ने उन्हें अरबी और संस्कृत में हुक्म दिया-'बोलो'! उलेमा और ब्राह्मण उनका अपनी भाषा में हौसला बढ़ाने लगे। बच्चे घबरा गए। ''गुंगियाने लगे पीछे हटते हुए।''[13] रोने लगे। ''कुछ ने दहशत में पेशाब और पखाना कर दिया फिर वे दीवार के सहारे दुबक गए एक कोने में पिल्लों की तरह / और उनके मुँह से ऐसी आवाज़ें निकलने लगीं / जो इंसानों ने कभी इंसानों की औलाद से सुनी न थीं ...।''[14] यह देखकर अकबर सहम गया। तथा बच्चों को मनचाहा बोलने की छूट

दे दी। ''विज्ञान के युग में कविता ने प्रयोग द्वारा साबित किया कि ईश्वर के मुँह में आदमी अपने शब्द, अपनी भाषा ठूँसता है। मूलतः ईश्वर की कोई भाषा नहीं है। यह गुंगियाता है। उसकी भाषा बरतने का ढोंग करना तो दूर, उसे खोजने की कोशिश भी बच्चों पर जुल्म है। भाषा मनुष्य को मनुष्य से जोड़ने का काम करती है। उससे तोड़ने का काम लेना साम्प्रदायिक होना है।''[15]

निष्कर्ष

समकालीन कविता अपनी पृष्ठभूमि में अपने समय के सभी सवालों को उठाती है। उससे मुठभेड़ करती है। उन चेहरों को पाठक के सामने लाने का प्रयास करती है जिनके कारण समाज में विषमता का विष फैलने लगता है। समाज के लिए साम्प्रदायिकता सबसे बड़ा विष है जो सामाजिक ताने बाने को तोड़ती है, जिसका खामियाजा स्त्रियां और बच्चों को सबसे अधिक उठाना पड़ता है। संवेदना के स्तर पर साम्प्रदायिकता से प्रभावित हिंदी कविता साम्प्रदायिकता के केवल एक पक्ष को उजागर करती है। यह इसकी सबसे बड़ी कमी है। साम्प्रदायिकता के लिए केवल बहु-संख्यक ही जिम्मेदार नहीं होता। इधर की हिंदी कविता संवेदनशील तो है लेकिन एकपक्षीय है। साम्प्रदायिकता का शिकार बहु-संख्यक भी होता है। लेकिन साहित्य की राजनीतिक समझदारी का ध्यान इस ओर नहीं है। त्रिशुल की नोंक पर अजन्में बच्चे का शव तो है लेकिन तलवारों से टपकता हुआ लहू दिखाई नहीं देता। यहीं साहित्य एकपक्षीय हो जाता है। एकपक्षीय होना साम्प्रदायिक होना है। कवि और कविता दोनों स्तरों पर यह बड़ा खतरा है।

संदर्भ

1. फन्डा मैन्टलिज्म एण्ड कम्युनलिज्म इन इंडिया, थर्ड कन्सैप्ट, अप्रैल, 1999, श्री रामपेरेन्कर.
2. कम्युनलिज्म ए सोश्यो पॉलिटिकल स्टडी (1947), सतीश सेठ (2000), ज्ञान पब्लिशिंग हाउस.
3. सम्पा. सुभाषा वारे, 'राष्ट्र सेवा दल' (मासिक पत्रिका), पृ.सं. 54
4. नई खेती; रमाशंकर विद्रोही, संस्करण 2011, पृ.सं. 34
5. भारत में साम्प्रदायिकता, इतिहास और अनुभव - असगर अली इंजीनियर, पृ.सं. 122
6. दस बरस, हिंदी कविता अयोध्या के बाद, सं. असद जैदी, पृ.सं. 169
7. वही, पृ.सं. 187
8. वही, पृ.सं. 187
9. इन दिनों, कुंवर नारायण, पृ.सं. 116-117
10. सफर में धूप तो होगी, निदा फाजली, पृ.सं. 86
11. वही, पृ.सं. 86
12. कोई नया समाचार, प्रेमरंजन अनिमेष, पृ.सं. 36
13. खोया हुआ-सा कुछ, निदा फाजली, पृ.सं. 107
14. काल और अवधि के दरमियान - विष्णु खरे, पृ.सं. 51-53
15. आज की कविता, विनय विश्वास, पृ.सं. 100

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

कलात्मक विरासत : स्थापत्य, मूर्ति शिल्प एवं चित्रकला

शुभम् दुबे
(शोध छात्र)
के.बी.पी.जी. कालेज मिरजापुर
email: shubhamdubey1001@gmail.com

मानव सभ्यता के विकास के साथ कला का भी जन्म हुआ। जब मनुष्य ने अपने अनुभवों, विश्वासों और भावनाओं को विभिन्न प्रतीकों, रेखाओं और आकृतियों तथा संरचनाओं के माध्यम से अभिव्यक्त किया तदुपरान्त कला की यात्रा प्रारम्भ हुई। भारतीय कला का इतिहास केवल कालानुक्रमिक विकास-क्रम नहीं अपितु सांस्कृतिक चेतना की दीर्घकालिक अभिव्यक्ति है। प्रागैतिहासिक शैल चित्रों से लेकर आधुनिक समकालीन प्रयोगों तक कला ने भारतीय समाज के धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक और दार्शनिक आयामों के साथ निरन्तर संवाद स्थापित किया है। भारतीय कला की विशिष्टता उसकी आध्यात्मिक अभिमुखता, प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति एवं बहुलतावादी स्वभाव में निहित है।[1] भारतीय कला विश्व की प्राचीनतम् और समृद्धतम् परम्पराओं में से एक है। भारत की कलात्मक विरासत तीन प्रमुख स्तम्भों पर आधारित है- स्थापत्य कला, मूर्तिशिल्प एवं चित्रकला। ये तीनों न केवल सौन्दर्यबोध का प्रतिनिधित्व करते हैं अपितु सामाजिक संरचना, राजनीतिक शक्ति एवं सांस्कृतिक निरन्तरता के प्रमाण भी हैं। भारतीय कला की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता इसकी निरन्तरता है। प्रागैतिहासिक काल से लेकर आधुनिक युग तक कला ने समयानुरूप रूप बदला, किन्तु उसकी आत्मा और सांस्कृतिक आधार अक्षुण्ण बने रहे।

भारतीय स्थापत्य : ब्रह्माण्डीय संरचना और सामाजिक संगठन

सैन्धव सभ्यता के नगरों- विशेषतया मोहनजोदड़ो और हड़प्पा में ग्रिड प्रणाली (जिसमें सड़कें एक-दूसरे को समकोण पर काटती थीं), उन्नत जल निकासी (जैसे- नालियों का समुचित विकास) और सार्वजनिक संरचनाएँ (जैसे महास्नानागार, अन्नागार तथा नगर के चारों ओर चहारदीवारों का निर्माण) उन्नत सामाजिक संगठन और सामूहिक अनुशासन को दर्शाती हैं।[2] यहाँ स्थापत्य सत्ता प्रदर्शन नहीं अपितु सामुदायिक अनुशासन और नागरिकता का प्रतीक था।

मौर्य कालीन स्थापत्य के अन्तर्गत मौर्य सम्राट अशोक द्वारा निर्मित स्तम्भ केवल राजकीय चिन्ह नहीं, अपितु 'धम्म' की नैतिक अवधारणा के दृश्यमान घोषणा पत्र थे। अशोक स्तम्भों की चमकदार पॉलिश तथा शिलालेख तत्कालीन तकनीकी दक्षता को दर्शाते हैं।[3] साँची स्तूप बौद्ध स्मृति, तीर्थ और सामूहिक आस्था का मुख्य केन्द्र रहा। यह स्मारक निर्माण और आध्यात्मिकता का समन्वय है। साँची स्तूप बौद्ध स्थापत्य की परिपक्वता का प्रतीक है।[4]

भारतीय मन्दिर स्थापत्य योजना में 'वास्तुपुरुष मण्डल' ब्रह्माण्डीय संरचना का रूपक है। शिखर 'मेरु पर्वत' का, गर्भगृह 'ब्रह्म' का, मण्डप 'लोक' का, और गोपुरम 'पाद' (पैर) का प्रतीक है। तंजावुर का बृहदेश्वर मन्दिर द्रविड़ शैली में चोल कालीन शक्ति, सममिति तथा दार्शनिक गूढ़ता का अद्वितीय उदाहरण है। स्थापत्य यहाँ धर्म दर्शन का दृश्य रूप बन जाता है। उत्तर भारत में नागर शैली का विकास हुआ। गुप्तकाल को भारतीय स्थापत्य कला का स्वर्ण युग कहा जाता है।[5] इस काल में मन्दिर निर्माण की संरचनात्मक योजना गर्भगृह, मण्डप एवं शिखर स्पष्ट रूप से विकसित हुई।[6]

मध्यकाल में दिल्ली सल्तनत के शासकों और मुगल शासकों ने स्थापत्य कला को नयी दिशा दी। खान-ए-जहाँ तेलंगानी का मकबरा, लाल किला, ताजमहल, हुमायूँ का मकबरा, एतमादुदौला का मकबरा आदि इस काल की प्रमुख धरोहरें हैं। इनमें गुम्बद मेहराब, मीनार और जड़ाऊ नक्काशी का सुन्दर समन्वय देखने को मिलता है। मुगल स्थापत्य में फारसी, तुर्की और भारतीय तत्वों का सांस्कृतिक समन्वय दिखाई देता है।

मूर्तिशिल्प रूप, भाव और तत्वज्ञान

सैन्धव सभ्यता के अन्तर्गत प्राप्त कांस्य नृत्यांगना की प्रतिमा, घोड़ागाड़ी तथा मोहनजोदड़ो से प्राप्त पुरोहित की प्रतिमा तथा कुकुदमान वृषभ, एकश्रृंगी एवं पशुपति मुहर मूर्तिकला की प्रारम्भिक झलक प्रस्तुत करती हैं। सिन्धु सभ्यता की कांस्य नृत्यांगना भारतीय मूर्तिकला की प्रारम्भिक परिपक्वता को दर्शाती है।[7]

मौर्य काल में अशोक स्तम्भों पर ऋसह मुख शीर्ष अत्यन्त प्रसिद्ध है, जो आज भारत का राष्ट्रीय प्रतीक है। दीदारगंज से प्राप्त चामरग्राहिणी यक्षी की मूर्ति उस समय के लोक जीवन और आस्था एवं विश्वास की प्रतीक मानी जाती है।

गुप्त कालीन मूर्तियों में आध्यात्मिक शान्ति और सौम्यता का समावेश हुआ इस काल की मूर्तियों में दिव्यत्ता एवं आन्तरिक सौन्दर्य का समन्वय दिखायी देता है।[8] सारनाथ की बुद्ध प्रतिमाएँ 'समत्व' और 'ध्यान' की दृश्य अभिव्यक्ति हैं। यहाँ शरीर की भौतिकता गौण और आन्तरिक दिव्यता प्रमुख है- यह रुप के माध्यम से निर्वाण की अवधारणा का सम्प्रेषण है। गुप्त कालीन बुद्ध प्रतिमाएँ आध्यात्मिक शांति एवं सन्तुलित अनुपात का अदभुत उदाहरण हैं।[9]

खजुराहो मन्दिर समूह की मूर्तियां, लौकिक और आध्यात्मिक द्वैत को तोड़ती हैं। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों पुरुषार्थों की समग्रता इन मूर्तियों में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। यह भारतीय जीवन दर्शन का शिल्पात्मक प्रतिरूप है। खजुराहो की मूर्तियाँ जीवन के विविध आयामों को दर्शाती हैं जिनमें लौकिक और आध्यात्मिक दोनों पक्ष सम्मिलित हैं।[10] ये मूर्तियां जीवंतता एवं अलंकरण के लिए अत्यंत प्रसिद्ध है।

चोल कालीन नटराज शिव की प्रतिमा सृष्टि, संहार और पुनर्सृजन के चक्र का प्रतीक है। अग्नि, डमरू और अभय मुद्रा ये सभी तत्व अद्वैत दर्शन की गतिशील व्याख्या करते हैं। मूर्तिशिल्प यहाँ स्थिरता नहीं, अपितु गति का दृश्य रूप है। चोल शासकों द्वारा निर्मित यह कांस्य प्रतिमा विश्व-विख्यात है।

चित्रकला कथा, करुणा और सत्ता

भारत में चित्रकला का आरम्भ प्रागैतिहासिक काल से ही माना जाता है। मध्य प्रदेश की भीमबेटका में पाए गए शैल चित्र, शिकार दृश्यों, नृत्य एवं पशु-पक्षियों के चित्रण से इसकी प्राचीनतम अभिव्यक्ति दर्शाते हैं।[11] पूर्वी उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जनपद में भी प्रागैतिहासिक काल के चित्र प्राप्त होते हैं। लखनिया दरी, राजपुर, चोपन, विजयपुर, अहरौरा, ढोलकिया पहाड़ी, जटवा, चिरहिया, सामदेवी आदि स्थान विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं जहाँ से शिकार—दृश्य, पशु-पक्षी, सूर्य आदि का चित्र मिलता है। ये गुहावासी आदिमानव के जीवन शैली, विश्वासों और क्रियाओं को दर्शाते हैं।

अजन्ता गुफाओं के भित्ति चित्र बौद्ध करुणा, त्याग और मानवता का सौन्दर्यात्मक उत्कर्ष हैं। रेखांकन, रंग-संयोजन और भावाभिव्यक्ति चित्रकला को आध्यात्मिक अनुभव में रूपान्तरित करते हैं। अजन्ता के भित्ति चित्र भारतीय चित्रकला की उत्कृष्ट उपलब्धि माने जाते हैं।[12] इन चित्रों में बुद्ध के जीवन प्रसंगों और जातक कथाओं का सजीव चित्रण मिलता है, जो धार्मिक और सामाजिक जीवन को दर्शाते हैं।[13]

मुगल काल में चित्रकला की फारसी और भारतीय शैली का समन्वय हुआ। अकबर के संरक्षण में विकसित लघु चित्र, दरबारी जीवन, युद्ध एवं इतिहास के महत्वपूर्ण दस्तावेज बने। यहाँ चित्रकला स्मृति-निर्माण और सत्ता-वैधता का उपकरण भी है। इस काल के प्रमुख चित्रकार अब्दुस समद, बसावन आदि थे। चित्रकला की राजपूत शैली के अन्तर्गत कृष्ण लीला को प्रदर्शित किया गया जिसमें चमकीले रंगों का प्रयोग हुआ। पहाड़ी शैली (कांगड़ा शैली) का विकास भी इसी समय हुआ।

राजा रवि वर्मा ने पौराणिक विषयों को यथार्थवादी शैली में चित्रित कर आधुनिक तकनीक और परम्परा का समन्वय किया। औपनिवेशिक सन्दर्भ में भारतीय कला राष्ट्रीय अस्मिता के पुनर्निर्माण का माध्यम बनी। आधुनिक भारतीय चित्रकला में राष्ट्रीय चेतना एवं सांस्कृतिक पुनर्जागरण का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखायी देता है।[14] रवीन्द्र नाथ टैगोर ने भी आधुनिक भारतीय कला को नई दिशा प्रदान की।

भारतीय कला समाज के धार्मिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक जीवन से गहराई से जुड़ी रही है।[15] मन्दिर और स्मारक केवल स्थापत्य संरचनाएँ नहीं, अपितु सामाजिक संगठन एवं सामूहिक आस्था के प्रतीक हैं।[16] भारतीय कला सत्ता वैधता, धार्मिक अनुशासन और सामाजिक संगठन के निर्माण में सक्रिय रही है। मन्दिर और स्तूप तीर्थ आर्थिक नेटवर्क बनाते हैं, किले और स्मारक राजकीय शक्ति का दृश्य प्रदर्शन करते हैं। साथ ही कला प्रतिरोध और पुनर्परिभाषा का माध्यम भी रही- विशेषतः औपनिवेशिक काल में।

औपनिवेशिक कला इतिहास ने भारतीय कला को 'आदिम' या 'धार्मिक' कहकर सीमित करने का प्रयास किया। उत्तर औपनिवेशिक दृष्टि इस वर्गीकरण को चुनौती देती है और भारतीय कला को उसके दार्शनिक सांस्कृतिक सन्दर्भ में पुनर्स्थापित करती है। यह पुनर्पाठ भारतीय कला की स्वायत्त सौन्दर्य मीमांसा को मान्यता प्रदान करता है।

भारतीय कला विविधता में एकता का सर्वोत्तम उदाहरण केवल अतीत का अवशेष नहीं अपितु वर्तमान की पहचान और भविष्य की प्रेरणा है। भारतीय कला केवल सौन्दर्य की अभिव्यक्ति नहीं, अपितु सांस्कृतिक चेतना का दर्पण है।[17] इससे यह स्पष्ट है कि भारतीय कलात्मक विरासत रुप और तत्वज्ञान का समन्वय है। परम्परा और परिवर्तन का सह-अस्तित्व है। सत्ता और समाज के अन्तर्सम्बन्धों का दृश्य आलेख है तथा आध्यात्मिक अनुभव का सौन्दर्यात्मक माध्यम है। अतः भारतीय कला को पृथक अनुशासन नहीं अपितु सांस्कृतिक दर्शन के रूप में देखना अधिक समीचीन प्रतीत होता है। स्थापत्य, मूर्तिशिल्प और चित्रकला ने भारतीय संस्कृति को न केवल संरक्षित किया अपितु उसे वैश्विक स्तर पर पहचान भी दिलायी। अतः इन धरोहरों का संरक्षण, संवर्धन और अध्ययन भविष्य की पीढ़ियों के लिए अनिवार्य है तथा नैतिक दायित्व भी है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. द्विवेदी, कपिलदेव (1999) भारतीय कला और संस्कृति, दिल्ली, राजकमल प्रकाशन
2. पाठक, वी. एस. (1998), भारतीय स्थापत्य कला का इतिहास, जयपुर, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
3. मित्तल, सत्यप्रकाश (2008), भारतीय कला का विकास, नई दिल्ली, ग्रन्थ शिल्पी
4. शर्मा, आर. एस. (2001), भारतीय मन्दिर स्थापत्य, दिल्ली, भारतीय विद्या भवन
5. अग्रवाल, वासुदेव शरण (1965), भारतीय कला, वाराणसी, भारतीय ज्ञानपीठ
6. सक्सेना, श्यामसुन्दर (1993), भारतीय स्थापत्य की रूपरेखा, आगरा, साहित्य सदन
7. मिश्रा, इन्द्रदेव (2002), भारतीय मूर्तिकला, वाराणसी, चौखम्बा प्रकाशन
8. मित्तल, सत्यप्रकाश, भारतीय कला का विकास, नई दिल्ली, ग्रन्थ शिल्पी
9. अग्रवाल, वासुदेवशरण (1965), भारतीय कला, वाराणसी, भारतीय ज्ञानपीठ
10. त्रिपाठी, रामनाथ (2004), मध्यकालीन भारतीय कला, लखनऊ, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान
11. सिंह, भगवती प्रसाद (1995), भारतीय चित्रकला का इतिहास, इलाहाबाद, लोक भारती प्रकाशन।
12. चतुर्वेदी, गिरिराज किशोर (2010), भारतीय चित्रकला परंपरा एवं विकास, भोपाल, मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी
13. सिंह, भगवती प्रसाद (1995), भारतीय चित्रकला का इतिहास, इलाहाबाद, लोक भारती प्रकाशन।
14. द्विवेदी, कपिलदेव (1999), भारतीय कला और संस्कृति, दिल्ली, राजकमल प्रकाशन
15. पांडेय राजबली (1987), भारतीय संस्कृति, वाराणसी, चौखम्बा प्रकाशन, विद्या भवन
16. पाठक, वी. एस. (1998), भारतीय स्थापत्य कला का इतिहास, जयपुर, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
17. अग्रवाल, वासुदेव शरण (1962), भारतीय कला, वाराणसी, भारतीय ज्ञानपीठ।

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

उच्च माध्यमिक विद्यालय के शैक्षिक वातावरण का विद्यार्थियों की समस्या समाधान योग्यता एवं शैक्षिक उपलब्धियों के संबंध में अध्ययन

डॉ. राजेश शर्मा
आचार्य
टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

भंवर लाल शर्मा
पी.एच.डी. शोद्यार्थी
टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

सारांश

प्रस्तुत शोध में ''उच्च माध्यमिक विद्यालय के शैक्षिक वातावरण का विद्यार्थियों की समस्या समाधान योग्यता एवं शैक्षिक उपलब्धियों के संबंध में अध्ययन" किया गया हैं। अध्ययन में प्राप्त आंकड़ों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गए है। प्रस्तुत शोध में राजस्थान राज्य के चुरू जिले के इस शोध कार्य हेतु चयनित विद्यालयों में अध्ययनरत् 600 विद्यार्थियों को वर्गीकृत क्रम मे यादृच्छिक विधि के अन्तर्गत लाटरी विधि से चयनित किया गया है। विद्यार्थियों के शैक्षिक वातावरण मापन के लिए एम. एल. शाह एवं अमिता शाह एवं समस्या समाधान योग्यता मापने के लिए (एल. एन. दुबे) द्वारा निर्मित उपकरणों का प्रयोग किया गया है। निष्कर्ष रूप में उच्च माध्यमिक विद्यालय के शैक्षिक वातावरण का विद्यार्थियों की समस्या समाधान योग्यता एवं शैक्षिक उपलब्धियों में कोई सार्थक सहम्बन्ध नहीं है।

मुख्य शब्द- उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थी, शैक्षिक वातावरण, विद्यार्थियों की समस्या समाधान योग्यता एवं शैक्षिक उपलब्धी

प्रस्तावना

शैक्षिक वातावरण से तात्पर्य विद्यालय में उपलब्ध उन संसाधनों से है. जिनकी सुचारू रूप से व्यवस्था में होने पर उन विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों का मानसिक, संवेगात्मक व क्रियात्मक पक्षों का सम्यक रूप से विकास असम्भव होता है। शैक्षिक वातावरण के अन्तर्गत मुख्य रूप से विद्यालय के संसाधन तथा शैक्षणिक संसाधनों को सम्मिलित किया जाता है। विद्यालय भवन, विद्यालय का व्यवहार और दृष्टिकोण, अध्ययन के उपकरण, पुस्तकालय, प्रयोगशाला आदि बालकों को शैक्षणिक अनुभव प्रदान करने में सहायक होते हैं। विद्यालय भवन में व्याप्त अस्वच्छता और अवस्तरीय पुस्तकें, बड़ी कक्षायें, प्रभावहीन अध्ययन, आततायी अनुशासन, विषयों के चुनाव में मार्गदर्शन का अभाव शैक्षणिक गुणवत्ता को प्रभावित करता है।

विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास में शैक्षिक वातावरण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। मिट्टी में पड़े हुए पौधों के छोटे से बीज में पेड़ अथवा पौधा बनने की सम्भावनायें विद्यमान रहती है किन्तु बीज में विद्यमान यह सम्भावनायें तभी मूर्त रूप ग्रहण करती है, जब बीज को अंकुरित होकर विकसित होने का अनुकूल वातावरण प्राप्त होता है। ऐसे ही प्रत्येक बालक जन्म से

कुछ विशिष्ट सम्भावनायें लेकर पैदा होता है। ये विकास की सम्भावनायें तभी सही दिशा में आकार ग्रहण करती है. जब बालक को अनुकूल भौतिक, सामाजिक व शैक्षिक वातावरण उपलब्ध होता है। यह वातावरण उसे पहले परिवार से फिर समाज और विद्यालय से प्राप्त होता है। उचित व अनुकूल सुविधायें तथा वातावरण मिलने पर विद्यार्थी ऊँचे से ऊँचे विकास को पहुँच सकता है। शैक्षिक वातावरण के लिए उत्तरदायी विद्यालय संगठन में विभिन्न घटकों के मध्य सामन्जस्य स्थापित करने का कार्य शैक्षिक प्रशासन प्रक्रिया द्वारा होता है। इसलिए प्राचार्य एवं अध्यापक छात्र एवं अध्यापक के बीच मधुर सम्बन्ध होना आवश्यक है।

विद्यार्थियों के सर्वागीण विकास में शैक्षिक वातावरण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। शैक्षिक वातावरण विभिन्न विद्यालयों में विभिन्न प्रकार के होते हैं। कहीं वे बालकों को प्रेरणा देने वाले होते हैं, कहीं उसे अनुशासन की कठोर बेड़ियों में बाँध कर रखने वाले होते है। क्या विद्यालय का शैक्षिक वातावरण विद्यार्थियों की अध्ययन की आदतों के विकास में सहयोग करता है? क्या विद्यालय स्तर पर छात्रों का कार्यक्षेत्र व सामाजिक क्षेत्र, भविष्य में समस्याओं से निपटने व विजय प्राप्त करने का प्रशिक्षण दिया जाता है? ऐसे कौन-कौन से कारक हैं जो विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पड़ते है? शैक्षिक वातावरण का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर क्या प्रभाव पड़ता है? क्या विद्यालय का शैक्षिक वातावरण इन सभी योग्यताओं के विकास में सहयोग करता है? इन सभी प्रश्नों के कारण शोधकर्ता के मन में यह जानने की इच्छा हुई कि विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का विद्यार्थियों की अध्ययन की आदतों, समस्या समाधान योग्यता तथा शैक्षिक उपलब्धि पर क्या प्रभाव पड़ता है। परिणाम स्वरूप इस अध्ययन का आरम्भ हुआ।

1.2 शोध की आवश्यकता

जन्मजात मूल प्रवृत्ति जन्य व्यवहार के साथ-साथ व्यक्ति बहुत कुछ अपने परिवेश (वातावरण) से सीखता है। विद्यालय ही वह स्थान है जहाँ पर छात्र आने के बाद पारिवारिक जीवन के साथ-साथ सामाजिक जीवन भी व्यतीत करता है। विद्यालय शिक्षा का एक ऐसा साधन है जिसमें पूर्व निश्चित उद्देश्य तथा पूर्व नियोजित कार्यक्रम दोनो होते हैं। फलस्वरूप विद्यालय का विद्यार्थियों के व्यक्तित्व पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है जिसमें उसके व्यक्तित्व का सर्वागीण विकास होता है।

विद्यालय का शैक्षिक वातावरण अध्ययन की आदतों के अतिरिक्त छात्रों की अन्य योग्यताओं को भी प्रभावित करता है जिसमें समस्या समाधान एक महत्वपूर्ण योग्यता है। वास्तविक जीवन में सफलता प्राप्ति में इस योग्यता का महत्वपूर्ण योगदान होता है। क्या विद्यालय स्तर पर छात्रों को कार्य क्षेत्र, सामाजिक क्षेत्र व भविष्य में समस्याओं से निपटने व विजय प्राप्त करने का प्रशिक्षण दिया जाता है।

प्रत्येक विद्यालय छात्रों को पढ़ने के लिए प्रेरित करता रहता है। अध्ययन की आदतें छात्रों की उच्च शैक्षिक उपलब्धि के लिए तो आवश्यक है ही साथ ही खाली समय के सदुपयोग के लिए भी अध्ययन की आदतें महत्वपूर्ण है क्या विद्यालय का शैक्षिक वातावरण विद्यार्थियों की अध्ययन की आदतों को प्रभावित करता है? श्रेष्ठ शैक्षिक वातावरण विद्यार्थियों को श्रेष्ठ साहित्य क्या पढ़े क्या न पढ़े आदि का प्रशिक्षण देता है? खाली समय का किस प्रकार सदुपयोग करें। इन्हीं कुछ प्रश्नों ने शोधकर्त्ता को इस समस्या पर शोध कार्य करने के लिए प्रेरित किया।

शैक्षिक उपलब्धि छात्र के सामाजिक आर्थिक स्तर तथा विद्यालय के शैक्षिक वातावरण पर निर्भर करती है। विद्यालय ही छात्रों की उपलब्धि के मानक होते हैं। किसी भी छात्र की शैक्षिक उपलब्धि की तुलना उसकी विद्यालय में की गई विभिन्न कार्य प्रणाली, उसकी विभिन्न गतिविधियों और प्राप्त अंकों के आधार पर की जा सकती है। ऐसे कौन-कौन से कारक हैं जो छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करते हैं विभिन्न प्रकार के चरों की शैक्षिक उपलब्धि में क्या भूमिका है? इन्हीं कुछ प्रश्नों ने शोधकर्त्ता को इस समस्या पर शोध कार्य करने के लिए प्रेरित किया।

समस्या कथन

''उच्च माध्यमिक विद्यालय के शैक्षिक वातावरण का विद्यार्थियों की समस्या समाधान योग्यता एवं शैक्षिक उपलब्धियों के संबंध में अध्ययन।"

अध्ययन में प्रस्तुत तकनीकी शब्दों की व्याख्या

उच्च माध्यमिक स्तर

उच्च माध्यमिक प्रस्तुत अध्ययन में कक्षा-11 के विद्यार्थियों को राजकीय उच्च माध्यमिक स्तरीय मानते हुए न्यादर्श के रूप में यादृच्छिक प्रणाली के द्वारा स्वीकार किया गया है।

शैक्षिक वातावरण :

शैक्षिक वातावरण साधारणतः शैक्षिक वातावरण का अर्थ विद्यालयी वातावरण है। शैक्षिक वातावरण से तात्पर्य विद्यालय में उपलब्ध उन संसाधनों से है जिसमें सुचारू रूप से व्यवस्था न होने पर उन विद्यालयों में अध्ययनरत छात्रों का मानसिक, संवेगात्मक व क्रियात्मक पक्षों का सम्यक रूप से विकास असम्भव होता सके। इसके साथ ही विद्यालय में वर्कशाप, प्रयोगशालाएँ, पुस्तकालय, असेम्बली हाल, कैण्टीन, साइकिल स्टैण्ड व शौंचालय भी होना चाहिए। सुसांचित विद्यालय एक सुखी परिवार, एक मन्दिर, एक सामाजिक केन्द्र, लघु रूप में एक राज्य और मनमोहक वृन्दावन है, जिसमें इन सब बातों का सुन्दर मिश्रण होता है।

समस्या समाधान योग्यता

जटिल समस्याओं को सोचने एवं तर्कपूर्ण निर्णय लेने की योग्यता ही समस्या समाधान योग्यता है। समस्या समाधान वह आधार बिन्दु है जिस पर सकारात्मक एवं सृजनात्मक सोच तथा तर्क उत्पन्न होता है। जिन लोगों ने विभिन्न प्रभावशाली समस्याओं के समाधान की तकनीकी शिक्षा ग्रहण कर रखी है वह जीवन की विकट समस्याओं को सरलता से हल कर लेते हैं।

शैक्षिक उपलब्धि - निष्पत्ति का आशय है कि छात्र द्वारा विभिन्न विषयों में प्राप्त परिपूर्णता का स्तर। शैक्षिक उपलब्धि का आशय विद्यार्थियों के कक्षा-10 में प्राप्त परीक्षा परिणाम से है शोधार्थी का शैक्षिक निष्पत्ति से आशय है कि न्यादर्श हेतु चयनित छात्र अथवा छात्रा विद्यालय में कितने प्रतिशत अंक प्राप्त करता है।

अध्ययन के उद्देश्य

(1) उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के शैक्षिक वातावरण एवं समस्या समाधान योग्यता में सह-सम्बन्ध का अध्ययन करना।

(2) उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के शैक्षिक वातावरण एवं शैक्षिक उपलब्धियों में सह-सम्बन्ध का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ

(1) उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के शैक्षिक वातावरण एवं समस्या समाधान योग्यता में कोई सह-सम्बन्ध नहीं है।

(2) उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के शैक्षिक वातावरण एवं शैक्षिक उपलब्धियों में कोई सह-सम्बन्ध नहीं है।

न्यादर्श :- प्रस्तुत शोध में प्रस्तुत शोध में राजस्थान राज्य के चुरू जिले के इस शोध कार्य हेतु चयनित विद्यालयों में अध्ययनरत् 600 विद्यार्थियों को वर्गीकृत क्रम मे यादृच्छिक विधि के अन्तर्गत लाटरी विधि से चयनित किया गया है।

शोध में प्रयुक्त उपकरण

1. शैक्षिक वातावरण मापनी (एम. एल. शाह एवं अमिता शाह)

2. समस्या समाधान योग्यता मापनी (एल. एन. दुबे)

प्रदत्तों का विश्लेषण व विवेचन

(1) उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के शैक्षिक वातावरण एवं समस्या समाधान योग्यता में कोई सह-सम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या - 1

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों का शैक्षिक वातावरण	600	137.92	9.565	0.026	स्वीकृत
उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की समस्या समाधान योग्यता	600	12.04	2.717		

1. परिकल्पना संख्या 1 के अनुसार राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्यापनरत विद्यार्थियों के शैक्षिक वातावरण एवं समस्या समाधान योग्यता के सहसम्बन्धी प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया जिसमे गणना के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त का मान 0.026 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता के स्तर .01 पर सार्थक नहीं है अतः शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्यापनरत विद्यार्थियों के शैक्षिक वातावरण एवं समस्या समाधान योग्यता में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया जाता, स्वीकृत की जाती है। अतः निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्यापनरत विद्यार्थियों के शैक्षिक वातावरण एवं समस्या समाधान योग्यता में सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया गया।

(2) उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के शैक्षिक वातावरण एवं शैक्षिक उपलब्धियों में कोई सह-सम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या - 2

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों का शैक्षिक वातावरण	600	137.92	9.565	0.032	स्वीकृत
उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि	600	77.86	9.343		

परिकल्पना संख्या 2 के अनुसार उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के शैक्षिक वातावरण एवं शैक्षिक उपलब्धियों के सहसम्बन्धी प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया जिसमे गणना के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त का मान 0. 032 प्राप्त हुआ जो कि सार्थकता के स्तर .01 पर सार्थक नहीं है अतः शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित परिकल्पना उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के शैक्षिक वातावरण एवं शैक्षिक उपलब्धियों में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया जाता, स्वीकृत की जाती है। अतः निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के शैक्षिक वातावरण एवं शैक्षिक उपलब्धियों में सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया गया।

शैक्षिक सुझाव

- समय का प्रबंधन करें, एक संतुलित दिनचर्या बनाएं और उसका पालन करें।
- प्रतिदिन एक निश्चित समय-सारणी बनाकर पढ़ाई करने की आदत विकसित करें।

- केवल रटने के बजाय विषय को समझने पर जोर दें।
- कक्षा में छात्र-केंद्रित शिक्षण विधियाँ अपनाएँ।
- विषय को रोचक और वास्तविक जीवन से जोड़कर पढ़ाएँ।
- समस्या समाधान आधारित शिक्षण (problem&based learning) को प्रोत्साहित करें।
- विद्यार्थियों की व्यक्तिगत अध्ययन आदतों को पहचानकर मार्गदर्शन दें।

भावी शोध हेतु सुझाव

1. प्रस्तुत शोध अध्ययन का कार्य उच्चतर माध्यमिक स्तर के छात्र छात्राओं पर किया गया है। इस प्रकार का शोध अध्ययन प्राथमिक स्तर, माध्यमिक स्तर, स्नातक स्तर तथा परास्नातक स्तर के छात्र-छात्राओं पर भी किया जा सकता है।

2. प्रस्तुत शोध में मात्र 600 विद्यार्थियों का न्यादर्श लिया गया है। इससे बड़ा न्यादर्श भी लेकर अध्ययन किया जा सकता है।

3. भावी शोध में उच्च माध्यमिक विद्यालय स्तर के ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के छात्र एवं छात्राओं में विद्यार्थियों की समस्याओं, अभिभावक पालन-पोषण शैली एवं शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन किया जा सकता है

सन्दर्भ सूची

1. कौर , हरिजीत (2019) : किशोर विद्यार्थियों की मानसिक क्षमता एवं शैक्षिक अभिवृत्ति का उनकी समस्या समाधान योग्यता के सम्बन्ध में अध्ययन, लघु शोध प्रबंध, टी.डी. पी.जी. कालेज, जौनपुर.
2. कपिल, एच. के. (2006), सांख्यिकी के मूल तत्व, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
3. पाठक, जितेन्द्र कुमार (2018) : स्नातक स्तर के विद्यार्थियों की मानसिक योग्यता, शैक्षिक अभिवृत्ति एवं शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन, अप्रकाशित शोध प्रबंध, राजीव गांधी डीम्ड विश्वविद्यालय कोटवा जमुनीपुर, प्रयागराज।
4. डॉ. शर्मा, वी. एस. ''शिक्षा मनोविज्ञान'' साहित्य प्रकाशन आगरा (2004)
5. डॉ. अरोड़ा रीता, सुदेश मारवाह (2005) ''शिक्षा मनोविज्ञान एवं सांख्यिकी'' शिक्षा प्रकाशन जयपुर पृष्ठ संख्या (407-430)
6. मिश्र, आशीष कुमार (2020) : हाईस्कूल स्तरीय विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर उनकी शैक्षिक अभिवृत्ति, संवेगात्मक बुद्धि एवं अभिप्रेरणा के प्रभाव का अध्ययन, अप्रकाशित शोध प्रबंध, डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या
7. सिंह, रामपाल और शर्मा, ओ.पी. (2008), शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकीय, आगरा अग्रवाल पब्लिकेशन।
8. सुखिया, एस.पी. (1990) शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व. आगराः विनोद पुस्तक मन्दिर।
9. श्रीवास्तव, डी.एन. और वर्मा, प्रीति (2007) शिक्षा अनुसंधान में सांख्यिकी विधियाँ आगराः विनोद पुस्तक मंदिर।

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व गुणों, पारिवारिक संस्कारों और शैक्षिक निष्पति के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन

डॉ. अनुराधा सिंह
सहायक आचार्या
टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

हेमलता
पी.एच.डी. शोद्यार्थी
टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

सारांश

प्रस्तुत शोध में ''राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व गुणों, पारिवारिक संस्कारों और शैक्षिक निष्पति के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन'' किया गया हैं। अध्ययन में प्राप्त आंकडों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गए है। प्रस्तुत शोध में राजस्थान राज्य के श्री गंगानगर जिले के इस शोध कार्य हेतु चयनित विद्यालयों में अध्ययनरत् 600 विद्यार्थियों को वर्गीकृत क्रम मे यादृच्छिक विधि के अन्तर्गत लाटरी विधि से चयनित किया गया है। विद्यार्थियों के व्यक्तित्व गुणों को मापन हेतु डॉ. मंजू अग्रवाल एवं पारिवारिक संस्कारों मापने के लिए स्वनिर्मित उपकरणों का प्रयोग किया गया है। निष्कर्ष रूप में राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व गुणों एवं पारिवारिक संस्कारों का उनकी शैक्षिक निष्पिति में सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

मुख्य शब्द- उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थी, व्यक्तित्व गुण, पारिवारिक संस्कार एवं शैक्षिक निष्पति।

प्रस्तावना

शिक्षा मानव जीवन की वह ज्योति है जिसके माध्यम से बालक के समस्त मानसिक, शारीरिक, सामाजिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक पक्षों का क्रमिक एवं संतुलित विकास संभव होता है। शिक्षा केवल ज्ञानार्जन की प्रक्रिया मात्र नहीं है, बल्कि यह एक ऐसी सृजनात्मक और निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है जो व्यक्ति के व्यक्तित्व को आकार देती है तथा उसे जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में योग्य, जिम्मेदार और संवेदनशील बनाती है। जब बालक शिक्षा के माध्यम से ज्ञान, संस्कार और जीवन मूल्यों को ग्रहण करता है, तब वह अपने समाज, संस्.ति और सभ्यता को समझने तथा उन्हें आगे बढ़ाने में समर्थ बनता है। इसी प्रक्रिया के फलस्वरूप वह एक सुसंगठित और जागरूक नागरिक के रूप में विकसित होकर समाज तथा राष्ट्र के विकास में सक्रिय भूमिका निभाने के लिए प्रेरित होता है।

जिस प्रकार हमारे चारों तरफ कुछ न कुछ परिवर्तन होता रहता है उसी प्रकार विद्यार्थी, विद्यालयों, पुस्तकालयों, समाज, प्रौद्योगिकी, मूल्य पद्धति, संस्कृति, अर्थव्यवस्था एवं राजनीति में भी परिवर्तन होता रहता है। धर्म, सत्ताधारी तथा प्रशासन आदि अभिधारणाओं में भी परिवर्तन होता रहता है, ऐसे परिदृश्य में अध्यापक तथा उसकी भूमिका स्थिर कैसे रह सकती है। उभरते

हुए सार्वभौमिक समाज में अध्यापक की भूमिका निर्धारित करना आसान नहीं है। अध्यापक की भूमिका शिक्षा के लक्ष्यों तथा समाज की प्रमुख विचारधारा द्वारा निश्चित होती है। अतीत काल में शिक्षकों को द्विज के समान माना जाता था तथा समाज में राजा के पद को भी शिक्षक के पद से नीचे माना जाता था। इस विषय में एस. राधाकृष्णन का कथन स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है ''एक सभ्य शिक्षक धन के अभाव में भी धनी होता है। इस सम्पत्ति को विचार बैंक में जमा नहीं किया जाना चाहिए, अपितु उस प्रेम भक्ति से जो अपने छात्रों में उत्पन्न की है, वह सम्राट जिसका साम्राज्य उसके शिष्यों को कृतज्ञ और मस्तिष्क में सीमा चिन्ह से अंधित है, जिसको संसार की कोई भी शक्ति नहीं हिला सकती है और न ही जिसे अणु बम हिला सकता है।'' इसी शिक्षक के ऊपर प्राथमिक शिक्षा का पूरा दारोमदार है। शिक्षक ही छात्रों का मानसिक, शारीरिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक गुणों का विकास करता है। लेकिन यह तभी संभव होता है जब शिक्षक में उच्च चारित्रिक एवं मानवीय गुण हो एवं उसमें सामाजिक एवं सांसृतिक मूल्यों का प्रवाह हो। किन्तु इन सभी के होते हुए भी शिक्षक निष्प्रभावी होता है, जव वह अपने कार्य से संतुष्ट न हो या उसका शिक्षण प्रभावी न हो अथवा उसमें मूल्यों का अभाव हो। क्योंकि वर्तमान समय में समस्त मानवतावादी लक्ष्यों में कार्य संतुष्टि, शिक्षण प्रभाविता तथा मूल्यों को सर्वोपरि लक्ष्य माना जाता है, क्योंकि इसके प्राप्ति की कामना न सिर्फ शिक्षक ही करते हैं बल्कि प्रबन्धक एवं प्रशासक में भी यह समान रूप से परिलक्षित होती है।

यदि शिक्षक अपने कार्य सम्पादन से संतुष्ट हों तो वह परिश्रम, उत्साह एवं समर्पण भाव से कार्य करता है जिससे उसका शिक्षण प्रभावी होता है, जो सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था के प्रति वरदान सिद्ध हो सकती है।

प्रस्तुत शोध का महत्व

जब विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धियों का विश्लेषण किया जाता है, तो यह स्पष्ट रूप से दिखाई देता है कि सभी विद्यार्थियों की शैक्षिक निष्पत्ति समान नहीं होती। विद्यालयों में आयोजित वार्षिक परीक्षाओं के परिणामों को देखने पर यह तथ्य सहज रूप से सामने आता है कि एक ही कक्षा में अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों के अंक तथा उनकी उपलब्धि का स्तर एक-दूसरे से भिन्न होता है। कुछ विद्यार्थी अत्यंत उत्कृष्ट प्रदर्शन करते हैं, जबकि कुछ विद्यार्थियों की उपलब्धि औसत या उससे भी कम स्तर की होती है। यह स्थिति इस तथ्य की ओर संकेत करती है कि विद्यार्थियों की शैक्षिक निष्पत्ति को प्रभावित करने वाले अनेक कारक होते हैं, जिनके कारण उनके परिणामों में भिन्नता उत्पन्न होती है।

इस संदर्भ में यह विचार करना आवश्यक हो जाता है कि यदि विभिन्न विद्यालयों में उपलब्ध शिक्षण-सुविधाओं, शिक्षण पद्धतियों तथा विद्यालयी वातावरण में भिन्नता होती है, तो उससे विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में अंतर होना स्वाभाविक है। किंतु अनेक बार यह भी देखा जाता है कि एक ही विद्यालय में अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धियों में भी पर्याप्त अंतर पाया जाता है। यहाँ तक कि जब एक ही कक्षा में एक ही शिक्षक द्वारा समान विषयवस्तु को समान शिक्षण विधि के माध्यम से पढ़ाया जाता है, तब भी विद्यार्थियों के परिणामों में उल्लेखनीय भिन्नता दिखाई देती है। यह स्थिति इस तथ्य की ओर संकेत करती है कि शैक्षिक निष्पत्ति को प्रभावित करने वाले कारण केवल विद्यालयी वातावरण या शिक्षण प(ति तक ही सीमित नहीं हैं, बल्कि इसके पीछे अन्य मनोवैज्ञानिक और सामाजिक कारक भी कार्य करते हैं।

इस अध्ययन की आवश्यकता इसलिए और भी बढ़ जाती है कि आज के समय में विद्यार्थियों पर प्रतियोगिता, चुनौतियों, अपेक्षाओं और सामाजिक दबाव का प्रभाव अत्यधिक बढ़ गया है। ऐसे वातावरण में व्यक्तित्व गुण जैसे आत्मनियंत्रण, धैर्य, सकारात्मक सोच, दृढ़ता, आत्मविश्वास और लक्ष्य के प्रति समर्पण विद्यार्थियों को अध्ययन में निरंतरता बनाए रखने तथा कठिनाइयों का सामना करने के योग्य बनाते हैं। यदि किसी विद्यार्थी में ये गुण पर्याप्त रूप से विकसित हों, तो वह सामान्य अवसरों में भी उच्च स्तर की उपलब्धि प्राप्त कर सकता है, जबकि इन गुणों की कमी उसे औसत या कमजोर प्रदर्शन की ओर ले जाती है। इस दृष्टि से यह अध्ययन आवश्यक हो जाता है कि यह जाना जाए कि कौन-कौन से व्यक्तित्व गुण शैक्षिक निष्पत्ति को उन्नत बनाते हैं और उनका विद्यार्थियों के अध्ययन व्यवहार, प्रेरणा और उपलब्धियों पर किस प्रकार प्रभाव पड़ता है। शोध के माध्यम से यह समझना भी अत्यंत महत्वपूर्ण है कि व्यक्तित्व के कौन-से पहलू जन्मजात होते हैं और कौन-से

पारिवारिक वातावरण के कारण विकसित होते हैं, ताकि विद्यार्थियों को ऐसी परिस्थितियाँ प्रदान की जा सकें जो उनके व्यक्तित्व को सु.ढ़ बनाकर उनके शैक्षिक भविष्य को उज्ज्वल कर सकें।

इसी प्रकार पारिवारिक संस्कार भी विद्यार्थी के अध्ययन व्यवहार और उपलब्धियों के निर्माण में आधारभूत भूमिका निभाते हैं। परिवार ही वह प्रथम संस्था है जहाँ बच्चे को अनुशासन, समयबद्धता, सत्यनिष्ठा, सहयोग, जिम्मेदारी, सम्मान, मेहनत, सरलता और नैतिकता जैसे मूल्य मिलते हैं। विद्यालय इन मूल्यों को विकसित करने में सहायक भूमिका निभाता है, लेकिन मूल संस्कारों का बीजारोपण घर में ही होता है। यदि किसी घर का वातावरण शिक्षण-उन्मुख, अनुशासित, संवाद-सम्पन्न और प्रेरक हो तो बच्चे का मन अध्ययन के प्रति स्वाभाविक रूप से आकर्षित होता है। वह चुनौतियों से डरता नहीं, कठिन विषयों को धैर्य से सीखता है और जीवन में सफलता प्राप्त करने का दृढ़ संकल्प विकसित करता है। इसके विपरीत यदि पारिवारिक वातावरण अव्यवस्थित, तनावपूर्ण, दिशाहीन या शिक्षा-विरोधी हो, तो उसका प्रतिकूल प्रभाव बच्चे की अध्ययन आदतों, कार्यशीलता और मानसिक संतुलन पर स्पष्ट रूप से पड़ता है। इसलिए यह अध्ययन पारिवारिक संस्कारों और शैक्षिक निष्पत्ति के बीच के संबंध को स्पष्ट करने के लिए अनिवार्य है ताकि यह समझा जा सके कि कौन-से पारिवारिक व्यवहार विद्यार्थियों की सफलता में सहायक हैं और कौन-से व्यवहार बाधक।

अध्ययन का महत्व इसलिए भी अत्यधिक बढ़ जाता है कि आज का समाज तेज़ी से बदल रहा है। जीवनशैली, पारिवारिक संरचना, आर्थिक अपेक्षाएँ, तकनीकी प्रभाव, मीडिया संस्कृति और सामाजिक दबाव विद्यार्थी के जीवन को पहले की तुलना में कहीं अधिक प्रभावित कर रहे हैं। ऐसे परि.श्य में यह जानना आवश्यक है कि आधुनिक परिवारों में संस्कारों के स्वरूप में क्या बदलाव आए हैं, ये बदलाव विद्यार्थियों की शैक्षिक निष्पत्ति को किस प्रकार प्रभावित करते हैं, और इन परिस्थितियों में विद्यार्थियों को किस प्रकार के मूल्य और मार्गदर्शन की आवश्यकता है। विशेष रूप से यह अध्ययन ग्रामीण और शहरी परिवेश के अंतर को भी स्पष्ट करता है, क्योंकि दोनों वातावरणों की परिस्थितियाँ, संसाधन, अपेक्षाएँ और संस्कारों के स्वरूप में स्पष्ट भिन्नता होती है। इस कारण से विद्यार्थियों की उपलब्धियों में भी भिन्नता दिखाई देती है। यदि इन अंतरों का वैज्ञानिक विश्लेषण किया जाए, तो इससे शिक्षा व्यवस्था में सुधार करने तथा विद्यार्थियों को अधिक प्रभावी समर्थन प्रदान करने के नए मार्ग खुल सकते हैं।

विद्यार्थियों की शैक्षिक निष्पत्ति की असमानता का कारण केवल बौद्धिक क्षमता या संसाधनों की कमी नहीं होती, बल्कि यह उनके व्यक्तित्व की शक्ति और पारिवारिक संस्कारों की गुणवत्ता पर भी आधारित होती है। यही कारण है कि शिक्षक तथा विद्यालय प्रशासक कई बार यह महसूस करते हैं कि कुछ विद्यार्थी कम संसाधनों के बावजूद उत्कृष्ट प्रदर्शन करते हैं, जबकि कुछ विद्यार्थी पर्याप्त सुविधा होते हुए भी अपेक्षित स्तर प्राप्त नहीं कर पाते। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि शिक्षा जगत इस शोध के माध्यम से यह समझ सके कि व्यक्तित्व और संस्कार शैक्षिक प्रगति में किस प्रकार कार्य करते हैं और किस तरीके से इन कारकों को सुदृढ़ किया जा सकता है।

इसी प्रकार यदि यह स्पष्ट हो जाए कि कौन-से पारिवारिक संस्कार विद्यार्थी को सफलता की ओर ले जाते हैं, तो माता-पिता को भी इस दिशा में मार्गदर्शन प्रदान किया जा सकता है। इससे विद्यार्थी मानसिक रूप से अधिक मजबूत, अध्ययन के प्रति अधिक समर्पित और भावनात्मक रूप से अधिक संतुलित बन सकते हैं। इस प्रकार यह शोध केवल सैद्धांतिक महत्व का नहीं है, बल्कि यह व्यावहारिक रूप से विद्यार्थियों के संपूर्ण विकास और उज्ज्वल भविष्य के लिए मार्गदर्शक सिद्ध हो सकता है।

समस्या कथन

''राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व गुणों, पारिवारिक संस्कारों और शैक्षिक निष्पति के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन''

अध्ययन में प्रस्तुत तकनीकी शब्दों की व्याख्या

राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर

उच्च माध्यमिक प्रस्तुत अध्ययन में कक्षा-11 के विद्यार्थियों को राजकीय उच्च माध्यमिक स्तरीय मानते हुए न्यादर्श

के रूप में यादृच्छिक प्रणाली के द्वारा स्वीकार किया गया है।

व्यक्तित्व गुण - व्यक्तित्व का अर्थ बहुत व्यापक है व्यक्तित्व दो प्रकार का होता है।

1. आंतरिक

2. बाह्य

प्रस्तुत अध्ययन में संपूर्ण व्यक्तित्व को समेटा गया है व्यक्तित्व की समस्त क्रियाओं से उसके व्यक्तित्व के समस्त पहलुओं को जाना जा सकता है।

पारिवारिक संस्कार

परिवार मानवोचित गुणों की प्राथमिक पाठशाला भी है क्योंकि परिवार से प्राप्त संस्कारों ही बालक के सु.दृढ़ चरित्र का निर्माण करते हैं। बालक के आचार व्यवहार को देखकर हम उसके परिवार से प्राप्त संस्कार को आसानी से ज्ञात कर सकते हैं। संस्कारों से अपने आचार विचार में संशोधन एवं परिष्कार होता है। संस्कार मानव जीवन को परिमार्जित परिष्कृत और सुव्यवस्थित रखने का एक उपक्रम है। घर के शैक्षिक वातावरण से प्राप्त संस्कारों का प्रकटीकरण कक्ष में होता रहता है। क्योंकि बालक अपने पारिवारिक वातावरण का दर्पण होता है।

शैक्षिक निष्पत्ति - निष्पत्ति का आशय है कि छात्र द्वारा विभिन्न विषयों में प्राप्त परिपूर्णता का स्तर। शैक्षिक निष्पत्ति का आशय विद्यार्थियों के कक्षा-10 में प्राप्त परीक्षा परिणाम से है शोधार्थी का शैक्षिक निष्पत्ति से आशय है कि न्यादर्श हेतु चयनित छात्र अथवा छात्रा विद्यालय में कितने प्रतिशत अंक प्राप्त करता है।

अध्ययन के उद्देश्य

(1) राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व गुणों का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति में सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

(2) राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के पारिवारिक संस्कारों का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति में सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ

(1) राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व गुणों का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति में कोई सार्थक सहसंबंध नहीं है।

(2) राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के पारिवारिक संस्कारों का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति में कोई सार्थक सहसंबंध नहीं है।

न्यादर्श :- प्रस्तुत शोध में प्रस्तुत शोध में राजस्थान राज्य के श्री गंगानगर जिले के इस शोध कार्य हेतु चयनित विद्यालयों में अध्ययनरत् 600 विद्यार्थियों को वर्गीकृत क्रम मे यादृच्छिक विधि के अन्तर्गत लाटरी विधि से चयनित किया गया है।

शोध में प्रयुक्त उपकरण

1. व्यक्तित्व गुण मापनी (डॉ. मंजू अग्रवाल)

2. पारिवारिक संस्कार मापनी (स्वनिर्मित)

प्रदत्तों का विश्लेषण व विवेचन

(1) राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व गुणों का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति में कोई सार्थक सहसंबंध नहीं है।

सारणी संख्या - 1

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व गुण	500	148.56	13.224	0.087	स्वीकृत
राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक निष्पत्ति	500	74.04	11.628		

व्याख्या :- परिकल्पना संख्या 1 के राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालयों के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व गुणों का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति से सम्बन्धित दत्तों को विश्लेषित किया गया है। राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालयों के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व गुणों का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति के प्रदत्तों के मध्यमान व मानक विचलन के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त-का प्राप्त मान सार्थकता के स्तर 0.01व 0.05 पर सारणी मान से कम है। अतः इस आधार पर शोधकर्त्री द्वारा निर्मित शून्य परिकल्पना को सार्थकता के दोनों स्तरों पर स्वीकृत किया जाता है तथा परिणाम स्वरूप कहा जा सकता है कि राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालयों के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व गुणों का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति एक दूसरे से प्रभावित नहीं होते है तथा दोनो सहसम्बन्धित नहीं है अर्थात् राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालयों के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व गुणों का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति पर कोई सार्थक संबंध नहीं पड़ता।

(2) राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के पारिवारिक संस्कारों का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति में कोई सार्थक सहसंबंध नहीं है।

सारणी संख्या - 2

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के पारिवारिक संस्कार	300	77.34	11.61	0.087	स्वीकृत
राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक निष्पत्ति	300	74.82	11.514		

परिकल्पना संख्या 2 के अनुसार राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालयों के विद्यार्थियों के पारिवारिक संस्कारों का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति से सम्बन्धित प्रदत्तों के मध्यमान व मानक विचलन के आधार पर सहसम्बन्ध गुणांक त- का प्राप्त मान सार्थकता के स्तर 0.01 व 0.05 पर सारणी मान से कम है। अतः इस आधार पर शोधकर्त्री द्वारा निर्मित शून्य परिकल्पना को सार्थकता के दोनों स्तरों पर स्वीकृत किया जाता है तथा परिणाम स्वरूप कहा जा सकता है कि राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालयों के विद्यार्थियों के पारिवारिक संस्कारों का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति एक दूसरे से प्रभावित नहीं होते है तथा दोनो सहसम्बन्धित नहीं है। अर्थात् राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालयों के विद्यार्थियों के पारिवारिक संस्कारों का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति में कोई सार्थक सहसंबंध नहीं है।

शैक्षिक सुझाव

1. यह अध्ययन विद्यार्थियों को अपने व्यक्तित्व गुणों को पहचानने और उन्हें विकसित करने की प्रेरणा देता है।

2. इससे विद्यार्थियों को यह समझने में सहायता मिलती है कि सकारात्मक व्यक्तित्व उनके शैक्षिक प्रदर्शन को बेहतर बनाता है।

3. अध्ययन विद्यार्थियों में आत्मविश्वास तथा आत्म-नियंत्रण की भावना को बढ़ाने में सहायक होता है।

4. यह विद्यार्थियों को अनुशासन और समय-प्रबंधन के महत्व को समझने के लिए प्रेरित करता है।

5. विद्यार्थी अपने पारिवारिक मूल्यों और संस्कारों के महत्व को समझ पायेगें।

6. यह अध्ययन विद्यार्थियों में सकारात्मक सोच और लक्ष्य निर्धारण की प्रवृत्ति विकसित करता है।

7. विद्यार्थियों को यह ज्ञात होता है कि सहयोगात्मक व्यवहार और सामाजिक गुण उनके विकास में सहायक होगे।

8. यह अध्ययन विद्यार्थियों को अपनी कमजोरियों को पहचानकर उन्हें सुधारने का अवसर प्रदान करता है।

भावी शोध हेतु सुझाव

1. प्रस्तुत शोध अध्ययन का कार्य उच्चतर माध्यमिक स्तर के छात्र छात्राओं पर किया गया है। इस प्रकार का शोध अध्ययन प्राथमिक स्तर, माध्यमिक स्तर, स्नातक स्तर तथा परास्नातक स्तर के छात्र-छात्राओं पर भी किया जा सकता है।

2. विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का उनकी बुद्धि पर प्रभाव का अध्ययन किया जा सकता है।

3. प्रस्तुत शोध कार्य उच्च माध्यमिक स्तर विद्यार्थियों पर किया गया है। इसको अन्य वर्ग शिक्षक, अभिभावकों आदि पर भी किया जा सकता है।

4. अनुसूचित जाति व सामान्य जाति के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति पर प्रभाव का अध्ययन किया जा सकता है।

5. अनुसूचित जाति व सामान्य जाति के विद्यार्थियों के पारिवारिक संस्कारों का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति पर प्रभाव का अध्ययन किया जा सकता है।

6. वंचित बालकों व सामान्य बालकों के व्यक्तित्व का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।

सन्दर्भ सूची

1. कौर किरणदीप और संधु "विद्यार्थियों के पारिवारिक लगाव, पालन-पोषण प्रणाली का विद्यार्थियों के व्यक्तित्व निर्धारण का तुलनात्मक अध्ययन"।
2. कपिल, एच. के. (2006), सांख्यिकी के मूल तत्व, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
3. गुप्ता, मधु 2005, परिवार की प्रकृति, गृह वातावरण और माता पिता की सहभागिता का शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव, परिप्रेक्षय, वर्ष-12, अंक-2, अगस्त 2005, पेज नं. 103-114।
4. डॉ. शर्मा, वी. एस. ''शिक्षा मनोविज्ञान'' साहित्य प्रकाशन आगरा (2004)
5. डॉ. अरोड़ा रीता, सुदेश मारवाह (2005) ''शिक्षा मनो विज्ञान एवं सांख्यिकी'' शिक्षा प्रकाशन जयपुर पृष्ठ संख्या (407-430)
6. पाण्डेय लक्ष्मी नारायण 2010 'माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के समायोजन, मूल्यों एवं अध्ययन आदतों पर पारिवारिक सम्बन्धों के प्रभाव का अध्ययन; पी-एच.डी. स्तरीय शोधकार्य आई. एएसई मान्य विश्वविद्यालय सरदार शहर
7. सिंह, रामपाल और शर्मा, ओ.पी. (2008), शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकीय, आगरा अग्रवाल पब्लिकेशन।
8. सुखिया, एस.पी. (1990) शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व. आगराः विनोद पुस्तक मन्दिर।

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

व्यथित नारी की अंतश्चेतना में निहित जिजीविषा का स्वर : 'मंजिल दर मंजिल'

डॉ. नीतू कौशल
(सहायक आचार्य)
हिन्दी विभाग
पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला, पंजाब-147002
फोन नं. 9463889798

शैलेश मटियानी हिन्दी साहित्य के एक चर्चित लेखक हुए हैं। उन्होंने न केवल उपन्यास साहित्य को अपनी लेखनी का आधार बनाया है बल्कि साहित्य की विभिन्न विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई है। शैलेश मटियानी ने जीवन की प्रत्येक परिस्थिति में संघर्ष करते हुए अपने लेखन कार्य को परिचालित किया है। उन्होंने अपने द्वारा रचित विशाल साहित्य के माध्यम से हिन्दी साहित्य को आलोकोज्ज्वल किया है। ''इनके कथा साहित्य में भारतीय समाज के आम आदमियों के दुख-दर्द का हास-उल्लास का और उनके भीतर निहित मनुष्य की उज्ज्वलता का प्रतिबिंबन हुआ है। यही मटियानी की मूल संवेदना है, जो नई पीढ़ी के लेखकों को दृष्टि और दिशा प्रदान करती है।''[1] अर्थात् शैलेश मटियानी ने संपूर्ण जीवन संघर्ष किया और उसी संघर्ष को उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से व्याख्यायित किया। इन्होंने अपने जीवन के यथार्थ को अपनी रचनाओं के माध्यम से वाणी दी। देवसिंह पोखरिया अपनी पुस्तक 'भारतीय साहित्य के निर्माता शैलेश मटियानी' में कहते हैं कि, ''जब मुझे साहित्य अकादमी द्वारा शैलेश मटियानी पर विनिबंध लिखने का दायित्व सौंपा गया तो मुझे लगा कि यह कार्य मैं आसानी से वर्ष भर में पूर्ण कर लूंगा। जब मैंने मटियानी के साहित्य पर सामग्री एकत्र करने का कार्य किया, तो प्रारम्भ में मुझे अत्यंत कम सामग्री उपलब्ध हो पाई। उनके साहित्य को एकत्रित करने में मुझे छह माह से अधिक का समय लग गया। मटियानी की प्रकाशित पुस्तकों की संख्या लगभग पिचासी से अधिक है। परिमाण की दृष्टि से वे प्रेमचंद के बाद सर्वाधिक कहानियाँ लिखने वाले हिंदी के अकेले कहानीकार हैं। उनका लेखन बहुआयामी रहा है, किंतु उन्हें सर्वाधिक सफलता और प्रसिद्धि कहानी लेखन में मिली है। इतने विशाल रचना-संसार के लेखक की संपूर्ण रचनाओं का अध्ययन करना और उन पर लिखना मुझे दुष्कर लगने लगा। हिंदी के 8-10 रचनाकारों के बराबर अकेले ही इतना लिख लेने वाले मटियानी के लेखन के केंद्र में मनुष्य है।''[2] अर्थात् शैलेश मटियानी ने अपने बहुआयामी लेखन के द्वारा हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है। उनके द्वारा लिखा गया साहित्य उन्हें 'हिन्दी कथा साहित्य का सम्राट' कहे जाने वाले मुंशी प्रेमचन्द जैसे महान लेखक की श्रेणी में खड़ा करता है।

कहानीकार की भांति शैलेश मटियानी एक सफल उपन्यासकार के रूप में भी अपनी भूमिका निभाते हैं। उन्होंने लगभग 29 के करीब उपन्यास लिखें जो उन्हें हिन्दी साहित्य में विशेष स्थान का अधिकारी बनाते हैं। डॉ. भगवतीशरण मिश्र के अनुसार, ''एक उपन्यासकार के रूप में मटियानी अपनी पहचान बनाने में सफल हुए हैं, इस सफलता के पीछे उनकी संवेदनशीलता, भाषिक वैविध्य एवं जीवनानुभव का समृद्ध योगदान है।''[3] इन्होंने अपने उपन्यासों के माध्यम से विभिन्न वर्गों के लोगों की स्थिति को रेखांकित किया है। इनके उपन्यासों के पात्र इनके जीवन की संघर्ष गाथा कहते दिखलाई देते हैं।

इन्होंने भारतीय समाज की आधी आबादी के संघर्ष की गाथा को अपने साहित्य के माध्यम से रेखांकित किया है। इनका उपन्यास मंजिल-दर-मंजिल नारी संघर्ष की इसी गाथा को व्यक्त करता है। इस उपन्यास के माध्यम से लेखक ने फातिमा बेगम जैसी उन तमाम औरतों की कहानी को गढ़ा है जो कहीं न कहीं जीवन की मुश्किलों को झेलती हुई आत्महत्या जैसे नकारात्मक शब्द के बारे में सोचने के लिए विवश हो जाती हैं। यह निराशा उन्हें भीतर तक क्रोंध देती है। ''निराशा जब किसी भी औरत के या फातिमा बेगम के अंदर पूरी तरह फैल जाती है, तब वह वर्तमान और आसन्न भविष्य की हर यंत्रणा से मुक्त हो जाती है। एक मुद्दत से अंधकूप की तरह बंद पड़ी हुई ज़िंदगी में एकाएक रोशनदान की तरह खोल दिए जाने वाले वर्तमान के हटते ही, यंत्रणा-बोध की तात्कालिक स्थिति भी अपने आप ही अतीत के उस अंधेरे से जुड़ जाती है, जिस अंधेरे में किसी भी तरह की दीवारों से घिरे रहने का अहसास नहीं होता।''[4] अर्थात् निराशा औरत को भीतर तक कुरेद देती है। वह स्वयं को ज़िंदगी के उस अंधेरे में सना हुआ पाती है जिसका अहसास भी नहीं होता।

फातिमा बेगम को अपनी स्थिति मुरगियों की भांति प्रतीत होती है जो हसन अली के द्वारा हलाल की जाती हैं। ''मुरगियों की हांके की आवाजें सुनते ही फातिमा बेगम की अंतश्चेतना एक अजीब-से अहसास से चौंक उठती है। एक ऐसे अहसास से जो आंखों में उभरने के बाद, तुलसी की पत्ती को निचोड़ने से निकल आने वाले अर्क की तरह थोड़ा सा नीचे तक बह आने के बाद, बड़ी देर तक खिंचता ही चला जाता है-और आंखों के लाल-लाल रेशे इसके तनाव से टूटने-टूटने को हो आते हैं। सारा आंतरिक अस्तित्व मुरगी के कटे हुए पंजे की तरह मुड़ता चला जाता है और पहली बार भीख मांगने के लिए फैलाई हुई हथेली की कांपती हुई रेखाओं-जैसी कातर जिजीविषा, जैसे कुहनियों और घुटनों के जोड़ों पर से बाहर को फूट पड़ती है।''[5] फातिमा बेगम का अंतर्मन मुरगियों की ऐसी स्थिति देख कर कांप उठता है और वह सोचती है कि औरत की दशा भी बिलकुल ऐसी ही है। हसन अली मुरगियों की भांति ही नारी को भी अपने वहशीपन का शिकार बनाकर हलाल करता है।

नारी के मातृत्व पर किया गया प्रहार उसके लिए सर्वाधिक कष्टदायक होता है। हसन अली फातिमा बेगम के इसी मर्म पर चोट करता है। वह इस कदर हैवान हो जाता है कि वह फातिमा बेगम के मरे हुए बच्चे के साथ भी जानवरों जैसा बर्ताव करता है। ''हसन अली खानसामे ने अपनी जिन्दगी को ऐसा निरपेक्ष बना लिया है, जो न अतीत की ओर सिमटती है और न भविष्य की ओर फैलती है। हसन अली हमेशा सिर्फ वर्तमान में जीता है। हसन अली सिर्फ फातिमा बेगम के आंतरिक-अस्तित्व के पंजे को अधकटा करके उसकी दोनों नसों को खींच देता है। हसन अली खानसामा जिस चूजे को भी दबोचता है, ऐसे दबोचता है, जैसे कोई चीज बाहर को खींच रहा हो। हसन अली खानसामा फातिमा बेगम के मरे हुए बच्चे को भी ठीक ऐसे ही उठा ले गया था, जैसे फातिमा बेगम के अंदर से कोई खींच ले गया हो।''[6] फातिमा बेगम हसन अली द्वारा अपने बच्चे के साथ किए गए इस कुत्सित कार्य से पूरी तरह कांप जाती है। इस असहनीय पीड़ा को एक मां ही समझ सकती है। फातिमा बेगम के अंतर्मन के खिंचाव को वह हर औरत महसूस कर सकती है जिसके देहाअंश को बेरहमी से खींच कर दफना दिया जाता है और वह औरत उस स्थिति में भीतर ही भीतर स्वयं को कचोटती ही रहती है।

फातिमा बेगम साहसी औरत की भांति ज़िंदगी को जीना चाहती है। वह हर उस पुरुष का विरोध करती है जो अपने दर्प के बल पर उसके नारीत्व बोध को ठेस पहुंचाता है। वह कहती है कि, ''फातिमा बेगम ने सिर्फ एक ऐसी ज़िंदगी को जीने की भूमिका बांधने की कोशिश की थी, जो एक पुरुष के सारे दर्प को मिट्टी में मिला दे, एक ऐसे पुरुष के दर्प को जो पहले फातिमा बेगम जैसी ज़िंदादिल और जज़्बाती औरत को अपनी बेगम बनाने का सपना दिखाता है, फिर एक ऐसे यथार्थ में छोड़ देता है, जहाँ से फिर खुद पीछे हटने या आगे बढ़ने की ताकत उसमें न रह जाए। एक ऐसे पुरुष के समानांतर चुनौती की तरह तनने की कल्पना करते ही, वास्तव में फातिमा बेगम की आंखों में एकदम तीखी चमक पैदा होती थी, जो यह सोच चुका होता है कि अब फातिमा बेगम जैसी कुछ और हो सकने के लिए जीनेवाली औरत के घुटने वह मोड़ चुका है।....मगर अपने ऊपर पहाड़ की तरह ढह आए वर्तमान के सारे मलबे में से फातिमा बेगम के मुड़े हुए घुटनों को फिर अपनी तरफ ही उठता हुआ देखकर नवाब मुन्ने खां जैसा कोई भी पुरुष एकबारगी चौंक सकता है।''[7] पुरुष अपने दर्प के कारण यह भूल जाता है कि अगर एक ओर औरत भावनाओं में बह कर अपना सब कुछ पुरुष पर न्यौछावर कर देती है तो दूसरी ओर वह

जब अपना साहस और क्रोध दिखाती है तो बड़े-बड़े योद्धा भी उसके समक्ष नत्मस्तक हो जाते हैं।

फातिमा बेगम ने अपने जिस शिशु पर अपना भविष्य केंद्रित कर रखा था उसके जाते ही उसके मन में प्रत्येक उस पुरुष के प्रति घृणा पैदा हो गई जिस ने उसके भीतर से उसकी ज़िंदगी के हर अहसास को ही खत्म कर दिया। वह कहती है कि, ''उसकी ज़िंदगी से हरएक पुरुष हट गया है -वह हसन अली भी, जिसे वह चुनौती बना देना चाहती थी और वह नवाब मुनव्वर अली भी, जिसे वह चुनौती देना चाहती थी। एक ऐसी चुनौती, जिससे उस हर मर्द की आंखें चुंधिया जाती हैं, जो अपनी तरफ से औरत को मुरदा समझ चुका होता है, मगर उसके मुड़े हुए घुटनों को सीधा नहीं कर सकता, उसकी समानांतर खड़ी हो सकने वाली जिजीविषा को तोड़ नहीं सकता।''8 अर्थात् फातिमा बेगम हर उस पुरुष को चुनौती देना चाहती है जो औरत को कमजोर, बेबस और मुरदा समझता है। वह हर उस पुरुष को यह बताना चाहती है कि वह औरत के भीतर की जिजीविषा को कम न आंके, क्योंकि जब बात औरत के अस्तित्व की आती है तो वह बड़ी से बड़ी चट्टान से भी टकरा जाती है। फातिमा बेगम प्रत्येक उस स्थिति का विरोध करती है जो औरत को कमजोर करती है। वह प्रत्येक स्थिति का साहसपूर्ण सामना करती है बल्कि उसे लगता है कि, ''शरीर पर क्रूरतापूर्वक आघात करके आत्महत्या मनुष्य सिर्फ उसी स्थिति में कर सकता है, जब उसकी मानसिकता नितांत पराजित हो जाए, क्योंकि एकतरफा प्रहार सिर्फ पराजित ही कर सकता है।''[9] अर्थात् फातिमा बेगम यह मानती है कि आत्महत्या करना अपने आप में एक बहुत बड़ा गलत कार्य है क्योंकि ऐसा करके मानव कमज़ोर प्रवृत्ति का उदाहरण देता है और वैसे भी जब मानव सिर्फ एक पक्ष को लेकर चलता है तो ऐसी स्थिति मानव को पराजित ही करती है।

फातिमा बेगम मानती है कि जो व्यक्ति कल्पना-शक्ति पर आधारित है वह आत्महत्या नहीं कर सकता। इसीलिए वह महसूस कर रही है कि ''शायद मनुष्य का जीना सिर्फ उसकी कल्पना-शक्ति पर ही निर्भर है। मनुष्य तभी आत्महत्या कर पाने में समर्थ हो पाता है, जब उसकी कल्पना कर सकने की शक्ति बिलकुल चूक जाती है। जिस व्यक्ति में यह कल्पना कर सकने की शक्ति हो कि उसकी मृत्यु के बाद क्या-क्या स्थितियाँ आ सकती हैं, वह हत्या भले ही कर दे, मगर आत्महत्या कदापि नहीं कर सकता।''[10] फातिमा बेगम मानती है कि व्यक्ति का सब कुछ उसके स्वयं पर ही निर्भर करता है। वह कहती है कि जब व्यक्ति के समक्ष यह स्थिति उत्पन्न होती है कि उसके न होने पर उसके अपनों की स्थिति कैसी होगी तो वह आत्महत्या जैसे क्रूर कार्य को करने से बचेगा। फातिमा बेगम के दृढ़ निश्चय की भी शायद यही वजह है कि उसमें कल्पना कर सकने की शक्ति बहुत ज्यादा है।

स्त्री अपने जीवन में अपने परिवार के लिए बहुत त्याग करती है और कई बार सामाजिक दृष्टि से अनुचित कार्य करने को भी तत्पर हो जाती है। स्त्री का यही विवेक उसका नैसर्गिक गुण है। फातिमा बेगम बौद्धिक स्तर पर इतनी सचेत है कि वह स्वयं द्वारा किए गए उचित अनुचित कार्य से भली भान्ति परिचित है। ''वर्षों बीत जाने के बाद भी फातिमा बेगम के लिए यह निश्चित कर पाना कठिन है कि वह उद्देश्य के लिए अपने को जीवित रखती आई है या कि जीने के लिए उद्देश्य की आत्मतुष्टि गढ़ती गई है। टांगों से चूजों की तरह लिपट जाने वाले इन भाई-बहनों के लिए उसने जीने की कोशिशें की हैं या कि अपने जी सकने के लिए आवश्यक अनुरक्ति और औचित्य को इनके माध्यम से खुद प्राप्त किया है। इन बच्चों की परवरिश के लिए चरित्रहीनता का आवरण ओढ़ा है या कि चरित्रहीनता के बोध की आत्मग्लानि से बचने के लिए भाई-बहनों की परवरिश के लिए सबकुछ करने का मिथ्याभास गढ़ा है।''[11] अर्थात् फातिमा बेगम अपने सभी कार्यो को पूरी तन्मयता से करती है। वह यह समझ रखती है कि क्या उचित है या क्या अनुचित। अपने इन्हीं दायित्वों को फातिमा बेगम पूरी ईमानदारी से निभाती है।

नारी अपने जीवन में बहुत कुछ सहती है। वह प्रत्येक स्थिति को पूरी सोच-विचार के साथ जानने-समझने की कोशिश करती है। कई बार उसके लिए स्थिति इतनी भयंकर हो जाती है कि उसे पहले से भोगी हुई स्थितियों को पुनःभोगना पड़ता है। फातिमा बेगम के साथ भी ऐसा ही हुआ है। ''फातिमा बेगम ज़िंदगी को कभी पहले जी चुकी होती है, मगर उसे सोचती है, महसूस करती है, बहुत बाद-बाद तक और ज़िंदगी को जीना नहीं, बल्कि जीने की सारी बाहरी प्रवृत्तियों से कटकर, उसपर

सोचने लगना ही जिसकी नियति हो जाए-एक बार जिए हुए दुःख को दुबारा जीना उसका आत्म-संस्कार बन जाता है। फातिमा बेगम का जीना ऐसा ही जीना है।''[12] अर्थात् फातिमा बेगम की स्थिति ऐसी हो चुकी है कि उसे जीवन में बार-बार दुःख को सहना पड़ता है। अब वह किसी भी स्थिति में डोलती नहीं बल्कि उसने नियति के फैंसले को स्वीकार कर लिया है। फातिमा बेगम के साथ इतना कुछ हो चुका है अभी और क्या बाकी है वह खुद भी नहीं जानती। ''अपने अंदर-ही-अंदर बच्ची और मां होने की सारी मातृका-योनियों में बार-बार जन्म लेकर बार-बार मर चुकी है फातिमा बेगम। मगर इसके बावजूद जीने की दुर्दांत जिजीविषा की आखिरी मंजिल, कोई आखिरी प्यास सामने नहीं आई है।''[13] अर्थात् फातिमा बेगम ने इतनी विकट परिस्थितियों में भी जीने की इच्छा नहीं छोड़ी। आधुनिक युग में मानव का जीवन निरंतर तनाव ग्रस्त होता जा रहा है और वह इस तनाव ग्रस्त जीवन से जूझता हुआ अन्ततः आत्मदाह के मार्ग की ओर प्रवृत्त हो जाता है। आधुनिक समय की इस विकटता में रचनाकार ने फातिमा बेगम के चरित्र के माध्यम से हताश मानसिकता को त्यागते हुए जिजीविषा को बरकरार रखने की प्रेरणा दी है। रचनाकार फातिमा बेगम की इसी स्थिति को रेखांकित करता हुआ कहता है कि—''फातिमा बेगम अपने अतीत के पुनर्भोग के अंतिम सिरे पर पहुंच गई है और अपने नीचे किसी ऊंची मीनार या कि अपनी ही गाड़ी हुई लाठी के आस-पास की ज़मीन की तरह फैला हुआ अतीत अब बहुत छोटा दिखाई देने लग गया है।''[14] अर्थात् लेखक यह कहना चाहता है कि भले ही कितनी भी मुश्किल परिस्थिति क्यों न हो फिर भी नारी उस का डट कर सामना करती है। यही स्थिति फातिमा बेगम की भी है वह अपने भीतर की जिजीविषा को मरने नहीं देती।

फातिमा बेगम के माध्यम से रचनाकार कहना चाहता है कि यदि हमारी जीने की इच्छा किसी दूसरे के अस्तित्व पर निर्भर करती है तो मृत्यु जैसा अहम निर्णय भी सामाजिक दायित्व बोध पर निर्भर करता है। ''फातिमा बेगम महसूस कर रही है कि जो मनुष्य अपनी ज़िंदगी का नियंता खुद न हो, जो औरों के द्वारा शेष छोड़ दिए गए भविष्य की जगह, अपने द्वारा गढ़े हुए भविष्य को पाने के लिए कृतसंकल्प न हो, वह अपनी मृत्यु का एकमात्र नियंता भी कदापि नहीं हो सकता। फातिमा बेगम महसूस करती है कि अपनी मृत्यु का निर्णायक हो पाने के लिए पहले अपनी ज़िंदगी का निर्णायक होना जरूरी है।''[15] अर्थात् मानव का जीवन उसका नितांत निजी नहीं होता उसके कुछ सामाजिक दायित्व भी होते हैं जो उसके जीने की दिशा भी निर्धारित करते हैं।

किसी भी मानव के जीवन में विकट परिस्थिति जब अपने चरम पर होती है वही क्षण निर्णय का क्षण होता है। सामाजिक दायित्व बोध से प्रेरित व्यक्ति इस विकटता की चरम पर भी सकारात्मक निर्णय ही लेता है। फातिमा भी यही करती है। ''फातिमा बेगम महसूस करती है कि वह अपनी आत्महत्या के निर्णय की ऊंची मीनार के आखिरी सिरे अपनी ज़िंदगी की आखिरी महसूस होती हुई मंजिल पर से मंजिल-दर-मंजिल उतरती चली जा रही है; उस जमीन की ओर, जहाँ से फिर ज़िंदगी को शुरू करना ही उस हर व्यक्ति की अंतिम नियति होती है, जो दूसरों के द्वारा सामने छोड़ दिए गए भविष्य या कि मृत्यु को स्वीकार करने में असमर्थ होता है।''[16] अर्थात् फातिमा बेगम ज़िंदगी की पुनः शुरूआत की बात करती है। वह मानती है कि भले ही मृत्यु अंतिम सत्य है लेकिन उसे विकट परिस्थितियों के दबाव में स्वीकार करना अंतिम सत्य नहीं है।

अतः कहा जा सकता है कि शैलेश मटियानी कृत उपन्यास मंजिल-दर-मंजिल नारी जीवन की गाथा को बहुत ही गहनता और सूक्ष्मता से रेखांकित करता है। शैलेश मटियानी ने इस उपन्यास में फातिमा बेगम के माध्यम से एक ऐसी नारी की व्यथा को चित्रित किया है जो समस्त जीवन दुःख सहती हुई जीने का प्रयास करती है और एक साथ ही कई पुरुषों द्वारा प्रताड़ित होती हुई आत्महत्या के बारे में सोचने के लिए विवश हो जाती है लेकिन वह आत्महत्या को सिर्फ अपनी सोच तक ही रखती है वह इसे अपनी जीने की इच्छा पर भारी नहीं पड़ने देती। वह अपने भीतर की जिजीविषा को मरने नहीं देती। लेखक ने व्यथित नारी की अंतश्चेतना में निहित इसी जिजीविषा के स्वर को 'मंजिल दर मंजिल' उपन्यास के माध्यम से उद्‌घाटित करने का प्रयास किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. देवसिंह पोखरिया, भारतीय साहित्य के निर्मात्ताःशैलेश मटियानी, साहित्य अकादमी, पृ. 6
2. देवसिंह पोखरिया, भारतीय साहित्य के निर्मात्ताःशैलेश मटियानी, साहित्य अकादमी, अपनी बात
3. भगवतीशरण मिश्र, हिन्दी के चर्चित उपन्यासकार, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, पृ. 444
4. शैलेश मटियानी, मंजिल-दर-मंजिल, ग्रंथ अकादमी, दिल्ली, पृ. 96
5. वही, पृ. 95
6. वही, पृ. 98
7. वही, पृ. 101
8. वही, पृ. 102
9. वही, पृ. 127
10. वही, पृ. 141
11. वही, पृ. 155
12. वही, पृ. 163
13. वही, पृ. 173
14. वही, पृ. 174
15. वही, पृ. 180
16. वही, पृ. 180

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

غیاث احمد گدی کی افسانہ نگاری کا ایک تنقیدی جائزہ

غیاث احمد گدی جھارکھنڈ کے ایک معروف افسانہ نگار ہیں۔ انہوں نے اب تک بہت سارے افسانے لکھے ہیں۔ ان کے تین افسانوی مجموعے منظر عام پر آچکے ہیں۔ ''بابا لوگ'' 1969ء میں، ''پرندہ پکڑنے و والی گاڑی'' 1977ء میں اور ''سارا دن دھوپ'' 1980ء میں شائع ہوا۔ اس کے علاوہ انہوں نے ایک ناولٹ ''پڑاؤ'' کے نام سے لکھا ہے۔

غیاث احمد گدی اپنے افسانوں میں حقیقت نگاری پیش کرتے ہیں۔ ان کے تمام افسانے معیاری اور دل میں اترنے والے ہیں۔ انہوں نے اپنا مقام اردو کے صف اول کے افسانہ نگاروں میں بنایا ہے۔ ان کے زیادہ تر افسانوں میں انسان دوستی کی مثال ملتی ہے۔ شروع کے افسانوں میں یہ ترقی پسند تحریک سے متاثر نظر آتے ہیں۔ جیسے جیسے وقت گزرتا گیا ان کے افسانوں میں فنی اعتبار سے زیادہ نکھار اور پختگی ہم پاتے ہیں۔

ان کا تیسرا افسانوں کا مجموعہ فکر وفن کے اعتبار سے بلندی پر نظر آتا ہے۔ ان کے افسانوں کی ٹکنیک، ارتقاء اور نقطہ عروج سبھی میں یہ منجھے ہوئے فنکار کی طرح نظر آتے ہیں۔ اردو کی صفِ اول کے افسانہ نگاروں میں ان کا شمار ہوتا ہے۔ غیاث احمد گدی کے کچھ بے حد اہم افسانے ہیں۔ مثلاً ''بابا لوگ''، ''پیاسی چڑیا''، ''پرندہ پکڑنے والی گاذڑی''، ''تج دوتج'' اور ''سائے ہمسائے'' وغیرہ۔

یہ سبھی افسانے معاشرے کے عام لوگوں کی کہانی لگتی ہے۔ ان کی کہانیاں عام لوگوں کے دلوں میں اترتی جاتی ہے۔ شروعات میں کافی سنجیدگی کے ساتھ عام انسانی مسائل پر کہانی لکھتے رہے۔ وہ ایک جگہ لکھتے ہیں:

> ''جن حالات نے مجھے کچو کے لگائے اور شدید احساس کمتری سے دوچار کرایا۔ انہیں جاہ
> گسل حالات کے تحت میرے تخلیقی سفر کا آغاز بھی ہوا۔''

غیاث احمد گدی نے جو کچھ لکھا اس کے پیچھے ان کے کرداروں اور مکالموں میں جان ڈال دیتی ہے۔

غیاث احمد گدی ترقی پسندی کے بعد جدیدیت کا دامن تھاما۔ شمس الرحمن فاروقی نے ''سارا دن دھوپ'' کے پہلے افسانہ ''طلوع'' کو ایک کامیاب افسانہ قرار دیا ہے۔ انہوں نے اس افسانے کا موازنہ بلونت سنگھ کے افسانہ ''کلیاں'' سے کیا ہے۔ پھر بھی انہوں نے غیاث کے اس افسانہ کی توصیف کی ہے۔ اس مجموعہ کا یہ پہلا افسانہ ہے جو خالص علامتی اور ابہامی انداز میں لکھا گیا ہے۔ غیاث احمد گدی نے اس سے پہلے ہی ''تج دوتج دو'' عنوان کے تحت جو افسانہ لکھا تھا وہیں سے ان کی علامت نگاری شروع ہوئی تھی۔ دھیرے دھیرے اردو زبان وادب پر علامت، ابہام اور تجدیدیت کا استعمال ہونے لگے۔ جدیدیت کی ہوا زور پکڑ چکی تھی۔ ترقی پسندی کا رنگ کم ہونے لگا تھا۔ کوئی دوسری ایسی تحریک نظر نہیں آرہی تھی درمیان کی راہ نکال کے ادب کی گاڑی کو اس پر سے گزرتی۔ ایسی حالت میں سنجیدہ قاری خاموش تماشائی بنا دونوں نظریات کی باہمی رسہ کشی کے تماشے دیکھ رہا تھا۔ چوں کہ گدی کے پاس الفاظ کی بھرمار ہے۔ وہ افسانہ کے اندر کشمکش پیدا کرنا چاہتے ہیں، قصہ کو دلچسپ بنا کر اسے نقطۂ عروج تک لے جانا چاہتے ہیں اور ہر بات کو وہ علامتوں کے پردوں میں چھپائے رکھنا چاہتے ہیں۔ وہ چاہتے ہیں کہ ان کا قاری مضمون کی تہہ تک خود پہنچے۔

اس مجموعہ کی سب سے اچھی کہانی ''سائے اور ہمسائے'' ہے۔ یہ دراصل دو نوجوان کے عشق کی کہانی ہے جو گھر سے بھاگ کر بمبئی کے ایک بڑے ہوٹل میں نوے دنوں سے قیام پذیر ہیں۔ لڑکی خوشحال گھرانے کی ہے۔ سرکا راوسط گھر کا ہے۔ ان نوے دنوں میں کئی بار خوبصورت سیکسی مواقع بھی آئے حالاں کہ یہ شب وروز کا معمول ہے۔ جس نے ان کے اندر اکتاہٹ کی کیفیت بھی پیدا کر دی ہے لیکن بیچ بیچ میں گدی نے ان لمحات کو انتہائی جذباتی اور پُرکیف بنایا ہے۔ بیس صفحات کی یہ طویل کہانی شروع سے آخر تک اپنے قاری کو باندھ کر رکھتی ہے۔

بہر کیف ہم کہہ سکتے ہیں کہ غیاث احمد گدی کے افسانوں میں متوسط طبقے کی زندگی، سماجی ناہمواری، انسانی نفسیات، دیہی و شہری تہذیب اور جدید

زندگی کے مسائل نمایاں طور پر ملتے ہیں جو قاری کے دلوں میں اترتے چلے جاتے ہیں۔

غیاث احمد گدی کے افسانوں میں ہم جنسی مسائل اور قبائلی فضا دیکھتے ہیں۔ یہی وجہ ہے کہ ان کی زبان و بیان وہاں پر اسی مناسبت کی ہوتی ہے۔ ان کا بے باک انداز اور جابجا عریانیت میں وہ منٹو اور عصمت چغتائی کی یاد تازہ کر دیتے ہیں۔ انتظار حسین اور احمد یوسف کی طرح غیاث احمد گدی کی زبان دبستانی معلوم ہوتی ہے۔ تشبیہہ و استعارے اس روانی کے ساتھ استعمال کرتے ہیں کہ پورا واقعہ سوچ سوچ کے بات آگے بڑھ رہا ہے۔ مگر اس میں کوئی رکاوٹ نہیں بلکہ روانی محسوس کرتا ہے۔

غیاث احمد گدی افسانہ نگاروں کے اس طبقہ سے تعلق رکھتے ہیں جن کی کوئی گروہ بندی نہیں۔ وہ نہ ترقی پسندیت کے شکار ہیں نہ تجریدی جدیدیت کے۔ ان کا فن اصل میں روایت اور جدت کے میل سے بنتا ہے۔ جس میں ان کا انوکھا اور الگ انداز شامل ہے۔

کتابیات

نمبر شمار	کتاب کا نام	مصنف
1	نیا افسانہ	وقار عظیم
2	فن افسانہ نگاری	وقار عظیم
3	پرندہ پکڑنے والی گاڑی	غیاث احمد گدی
4	بابا لوگ	غیاث احمد گدی
5	سارا دن دھوپ	غیاث احمد گدی
6	معنی کی تلاش	وہاب اشرفی
7	تحقیق و تنقید	اختر اورینوی
8	تلاش و توازن	قمر رئیس
9	تنقید و تحریک	احمد سجاد
10	اردو زبان و ادب	مولوی عبدالحق
	رسالے	
11	شاعر	نقوش
12	شب خون	تحریک
13	آج کل	نیا دور
14	زبان و ادب	عصری ادب

ڈاکٹر پرویز اختر

سابق صدر شعبۂ اردو

گڈا کالج، گڈا (سدھو کانہو یونیورسٹی، دمکا)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

मुंशी प्रेमचंद के कथा साहित्य में किसान जीवन का यथार्थ

रत्ना सिंह
शोध छात्रा, हिंदी विभाग
म.गाँ.चि.ग्रा.वि.वि. चित्रकूट सतना (मध्य प्रदेश)

प्रो. ललित कुमार सिंह
अध्यक्ष, हिंदी विभाग
म.गाँ.चि.ग्रा.वि.वि. चित्रकूट सतना (मध्य प्रदेश)
ई-मेल– patelprinci259@gmail.com
मो. 6388700558

सारांश

हिंदी कथा साहित्य में किसान जीवन के यथार्थ चित्रण को सशक्त और व्यापक स्वरूप प्रदान करने का श्रेय मुंशी प्रेमचंद जी को दिया जाता है। भारत एक कृषि प्रधान देश होने के कारण किसान जीवन यहाँ के साहित्य का मुख्य विषय रहा है। किसान केवल अन्नदाता ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और सामाजिक जीवन की निरंतरता का प्रमुख आधार भी रहा रहा है। ग्रामीण समाज की परंपराएँ मान्यताएँ और जीवन-शैली किसान जीवन से गहराई से जुड़ी हुई हैं। प्रारंभिक हिंदी साहित्य में ग्रामीण जीवन का उल्लेख मिलता है, परंतु किसान जीवन की वास्तविक समस्याओं को गहराई से चित्रित करने का श्रेय प्रेमचंद ने किया।

प्रेमचंद हिंदी साहित्य के ऐसे महान कथाकार हैं, जिन्होंने अपने साहित्य में समाज के शोषित और उपेक्षित वर्गों की पीड़ा को स्वर दिया। इनकी कहानियाँ वास्तविक जीवन की घटनाओं और अनुभवों से प्रेरित हैं। इन्होंनें किसान जीवन की कठिनाइयों, गरीबी और आर्थिक विषमता को अत्यंत यथार्थपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया। आज के समय में भी किसान जीवन की समस्याएँ पूरी तरह समाप्त नहीं हुई हैं। प्राकृतिक आपदाएँ ऋणग्रस्तता, बाजार व्यवस्था और तकनीकि परिवर्तनों के कारण किसान जीवन निरंतर चुनौतियों से घिरा हुआ है। इन्होंनें ग्रामीण समाज के विभिन्न वर्गों - जमींदार, साहूक्कार और किसान के बीच संबंधों को यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया।

प्रेमचंद की कहानियाँ जैसे पूस की रात, सवा सेर गेहूँ, कफन तथा ठाकुर का कुआँ में किसान जीवन की आर्थिक विवशता, मानसिक पीड़ा और श्रमशीलता का प्रभावशाली चित्रण मिलता है। इसके अतिरिक्त इनके प्रसिद्ध उपन्यास गोदान में किसान जीवन का अत्यंत व्यापक और गहन चित्रण प्रस्तुत किया गया है, जो भारतीय ग्रामीण जीवन की संपूर्ण संरचना को समझने में सहायक सिद्ध होता है।

इस शोध-पत्र का मुख्य उद्देश्य हिंदी कथा-साहित्य में किसान जीवन के यथार्थ चित्रण का समग्र अध्ययन करना तथा विशेष रूप से प्रेमचंद की कहानियों और उपन्यासों के माध्यम से किसान जीवन की वास्तविक स्थितियों का विश्लेषण करना है। साथ ही यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि प्रेमचंद के साहित्य में यथार्थवाद किस प्रकार अभिव्यक्त हुआ है और उन्होंने किसान जीवन की समस्याओं को किस प्रकार सामाजिक चेतना से जोड़ा है।

यह शोध इस तथ्य को स्थापित करता है कि प्रेमचंद का कथा साहित्य केवल साहित्यिक दृष्टि से ही महत्वपूर्ण नहीं

हैं, बल्कि वह भारतीय समाज के आर्थिक और सामाजिक इतिहास का एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है।

कुंजीभूत शब्द - यथार्थवाद, किसान-जीवन, ग्रामीण समाज प्रेमचंद, कथा-साहित्य, सामाजिक शोषण।

भारतीय समाज में किसान का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। भारत एक कृषि प्रधान देश रहा है, जहाँ अधिकांश जनसंख्या कृषि पर निर्भर रही है। किसान न केवल देश की आर्थिक संरचना का आधार रहा है, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन का भी प्रमुख अंग रहा है। प्रेमचंद की कहानियाँ केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं है बल्कि वे समाज की वास्तविकताओं को उजागर करने वाली सशक्त रचनाएँ हैं। इनकी कहानियों में किसान जीवन का चित्रण इतना यथार्थपूर्ण है कि पाठक को ग्रामीण जीवन की वास्तविक स्थिति का अनुभव होता है। प्रेमचंद की कहानियों में किसान की सबसे बड़ी समस्या आर्थिक शोषण है। जमींदारों और साहूकारों द्वारा किसानों का शोषण किया जाता था, जिसके कारण किसान निरंतर ऋणग्रस्त रहते थे। हिंदी कहानियों में किसान को प्रायः आर्थिक रूप से कमजोर और अभावग्रस्त दिखाया गया है। वह अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भी संघर्ष करता रहता है। किसान का जीवन निरंतर श्रम पर आधारित होता है। खेतों में दिन-रात मेहनत करने के बावजूद उसे उचित लाभ नहीं मिल पाता। ग्रामीण समाज में वर्ग विभाजन स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। स्वतंत्रता पूर्व भारत का किसान सिर्फ खेती नहीं करता था, वह जमीदारों का शोषण झेलता था, महाजनों से कर्ज लेता था और फिर भी अपने जीवन को इज्जत से जीने की कोशिश करता था। प्रेमचंद ने इन किसानों की भीतर की टूटन, बाहर की मजबूरी और सिस्टम के जाल को अपने उपन्यासों में पूरी ईमानदारी से दिखाया है। प्रेमचंद अधिकतर पृष्ठभूमि गाँव को ही बनाया जो कि एक मंच बना पाठकों को सोचने और समझने के लिए। इन्होंने किसानों को सिर्फ पीड़ित और दया का पात्र नहीं समझा बल्कि संघर्षशील मानव के रूप में जीवन दिखाया है अपने कथा-साहित्य किसान की त्रासदी को शामिल किया है।

हिंदी कहानियों में किसान को प्रायः आर्थिक रूप से कमजोर और अभावघ्रस्त दिखाया गया है। वह अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भी संघर्ष करता रहता है। प्रेमचंद के समय में जमींदारी प्रथा का प्रभाव अत्यधिक था। जमींदारों द्वारा किसानों का शोषण किया जाता था, जिससे किसान आर्थिक और सामाजिक दोनों रूप से कमजोर हो जाते थे। इसकी कहानी 'सवा सेर गेहूँ' में जमींदारों द्वारा किसानों के शोषण और उनकी विवशता को प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया गया है। इस कहानी में एक साधारण किसान की स्थिति को दिखाया गया है, जो एक छोटे से ऋण के कारण साहूकार के चंगुल में फंस जाता है। यह ऋण धीरे-धीरे इतना बढ़ जाता है कि किसान उसे कभी चुका नहीं पाता। यह कहानी उस समय की आर्थिक व्यवस्था की कठोरता को उजागर करती है, जिसमें किसान अपनी मेहनत के बावजूद आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त नहीं कर पाता। साहूष्कार की निर्दयता और किसान की विवशता का चित्रण इस कहानी को अत्यंत यथार्थवादी बनाता है। झकी प्रसिद्ध कहानी 'पूस की रात' में किसान की आर्थिक स्थिति का अत्यंत मार्मिक चित्रण मिलता है। इस कहानी में किसान की गरीबी और उसके जीवन की कठिनाइय्यों को यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया गया है। इस कहानी का मुख्य पात्र हल्कू एक गरीब किसान है, जो अत्यधिक ठंड के बावजूद खेत की रखवाली करने के लिए विवश है। हल्कू की स्थिति उस समय के किसान जीवन की वास्तविकता को स्पष्ट करती है। उसके पास पर्याप्त साधन नहीं हैं, फिर भी वह ऋण और आर्थिक दबाव के कारण निरंतर श्रम करता रहता है। किसान जीवन प्राकृतिक परिस्थितियों पर अत्यधिक निर्भर रहता है। सूखा, वर्षा और ठंड जैसी प्राकृतिक आपदाएँ किसान के जीवन को गहराई से प्रभावित करती हैं। प्रेमचंद की कहानियों में किसान केवल आर्थिक समस्याओं से ही नहीं, बल्कि मानसिक और सामाजिक संघर्षो से भी जूझता दिखाई देता है। वह अपने परिवार की जिम्मेदारियों और सामाजिक दबावों के बीच निरंतर संघर्ष करता रहता है। कहानी 'कफन' में ग्रामीण जीवन की कठोर वास्तविकता और किसान की मानसिक स्थिति का अत्यंत प्रभावशाली चित्रण किया गया है। इस कहानी में गरीबी और अभाव के कारण मनुष्य की प्रभावित होती हैं, इसका संवेदनाएँ किस प्रकार अत्यंत प्रभावशाली चित्रण मिलता है। यद्यपि यह कहानी केवल किसान जीवन तक सीमित नहीं है, फिर भी इसमें ग्रामीण जीवन की आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियों का स्पष्ट चित्रण मिलता है। घीसू और माधव जैसे पात्रों के माध्यम से प्रेमचंद ने यह दिखाया है कि अत्यधिक गरीबी और अभाव मनुष्य की मानवीय

संवेदनाओं को भी प्रभावित कर सकते हैं। 'ठाकुर का कुआँ' कहानी ग्रामीण समाज में व्याप्त जातिगत भेदभाव और सामाजिक विषमता का सशक्त उदाहरण है। इस कहानी में एक निम्न वर्ग की स्त्री को पानी लेने के लिए अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। यह घटना ग्रामीण समाज में व्याप्त सामाजिक असमानता को स्पष्ट करती है। किसान जीवन केवल आर्थिक समस्याओं से ही प्रभावित नहीं था, बल्कि सामाजिक भेदभाव भी उसके जीवन को कठिन बनाता था। प्रेमचंद की कहानियों में किसान जीवन का चित्रण बहुआयामी है, जिसमें आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा मनोवैज्ञानिक सभी पक्षों को समाहित किया गया है।

इसी प्रकार प्रेमचंद के उपन्यास 'गोदान' में किसान जीवन का व्यापक स्वरूप देखने को मिलता है। गोदान हिंदी साहित्य का एक महत्वपूर्ण उपन्यास है, जिसमें किसान जीवन का सबसे व्यापक और यथार्थ चित्रण मिलता है। इस उपन्यास का मुख्य पात्र होरी एक साधारण किसान है, जिसका जीवन निरंतर संघर्षो से भरा हुआ है। होरी का सपना एक गाय खरीदने का है, जो भारतीय ग्रामीण संस्कृति में सम्मान और समृद्धि का प्रतीक मानी जाती है। परंतु आर्थिक संकट और सामाजिक दबावों के कारण होरी का यह सपना पूरा नहीं हो पाता। होरी निरंतर ऋण के बोझ से दबा हुआ रहता है। साहूकारों द्वारा दिए गए ऋण का बोझ उसे जीवन भर परेशान करता रहता है। यह स्थिति उस समय के अधिकांश किसानों की वास्तविकता को दर्शाती है। होरी का जीवन केवल आर्थिक समस्याओं तक सीमित नहीं है, बल्कि उसे पारिवारिक और सामाजिक संघर्षो का भी सामना करना पड़ता है। 'गोदान' में किसान के छोटे-छोटे सपनों और उनकी असफलताओं का अत्यंत मार्मिक चित्रण मिलता है। यह उपन्यास किसान जीवन की वास्तविकता का व्यापक दस्तावेज है।

निष्कर्ष

उपरोक्त अध्ययन के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि हिंदी कथा साहित्य में किसान जीवन का चित्रण केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति मात्र नहीं है, बल्कि भारतीय समाज की वास्तविक परिस्थितियों का सजीव दस्तावेज भी है। हिंदी कहानी साहित्य ने इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और किसान जीवन के यथार्थ को समाज के समक्ष प्रस्तुत करने का कार्य किया है। प्रेमचंद का साहित्य किसान जीवन के यथार्थ चित्रण की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध होता है। इन्होनें अपने साहित्य के माध्यम से ग्रामीण समाज की वास्तविकताओं को अत्यंत सूक्ष्मता और संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया है। इनकी कहानियाँ और उपन्यास भारतीय किसान के जीवन की कठिनाइयों, संघर्षो और आशाओं का वास्तविक चित्र प्रस्तुत करते हैं। प्रेमचंद का साहित्य केवल उनके समय की परिस्थितियों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वह वर्तमान समय में भी अत्यंत प्रासंगिक है। आज के आधुनिक युग में भी किसान जीवन अनेक चुनौतियों से घिरा हुआ है। ऋणग्रस्तता, प्राकृतिक आपदाएँ, तकनीकि परिवर्तन और बाजार व्यवस्था तथा सरकारी नीतियों के प्रभाव के कारण किसान जीवन आज भी संघर्षपूर्ण बना हुआ है। इस दृष्टि से प्रेमचंद का साहित्य आज भी समाज के लिए प्रेरणादायक और प्रासंगिक सिद्ध होता है।

इस अध्ययन से यह भी निष्कर्ष निकलता है कि हिंदी कथा साहित्य में किसान जीवन का यथार्थ चित्रण समाज में सामाजिक चेतना उत्पन्न करने का एक महत्वपूर्ण माध्यम रहा है। प्रेमचंद ने अपने साहित्य के माध्यम से समाज को किसान जीवन की समस्याओं के प्रति जागरुक किया तथा सामाजिक सुधार की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

अंततः यह कह सकते हैं कि हिंदी साहित्य में किसान जीवन का यथार्थ चित्रण भारतीय समाज की वास्तविकताओं को समझने का एक सशक्त माध्यम है, और इस दिशा में प्रेमचंद का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। इनका कथा साहित्य न केवल साहित्यिक दृष्टि से समृद्ध है, बल्कि सामाजिक और ऐतिहासिक दृष्टि से भी अत्यंत मूल्यवान है। और समाज के उपेक्षित वर्ग की पीड़ा को भी स्वर देता है।

इस प्रकार यह निष्कर्ष स्थापित होता है कि हिंदी कथा साहित्य में किसान जीवन का यथार्थ, विशेष रूप से प्रेमचंद के संदर्भ में, भारतीय समाज के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक स्वरूप को समझने का एक महत्वपूर्ण आधार प्रस्तुत होता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. मुंशी प्रेमचंद - मानसरोवर (भाग 1-8), इलाहाबाद : हंस प्रकाशन
2. मुंशी प्रेमचंद - प्रेमचंद की श्रेष्ठ कहानियाँ नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन
3. मुंशी प्रेमचंद गोदान वाराणसी : सरस्वती प्रेस
4. रामविलास शर्मा - प्रेमचंद और उनका युग नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन
5. नामवर सिंह - कहानी : नई कहानी : नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन
6. डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी - कुछ कहानियाँ कुछ विचार, नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन
7. डॉ. शिवकुमार मिश्र - प्रेमचंद : आलोचनात्मक अध्ययन नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन
8. आलोचना पत्रिका - ग्रामीण जीवन एवं प्रेमचंद संबंधी शोध-लेख
9. हंस पत्रिका -प्रेमचंद विशेषांक
10. समकालीन भारतीय साहित्य - किसान जीवन एवं कथा साहित्य पर शोध लेख।

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

किन्नर श्रापित नहीं है- 'श्रापित किन्नर' उपन्यास के संदर्भ में

श्रीलक्ष्मी. एस. आर.
शोध छात्रा, महात्मा गांधी कॉलेज, तिरुवनंतपुरम
संपर्क : 7907501820
ई मेल : sreelakshmi152022@gmail.com

मुख्य शब्द : श्रापित, अधूरा, रू-ब-रू, अरावन।

जैविक संरचना के आधार पर मानव के दो जातियाँ प्रचलित होते है स्त्री और पुरुष। इसके अलावा और एक वर्ग भी है, जो किन्नर, हिजडा, नपुंसक आदि नाम से जाने जाते हैं। किन्नर ना ही पूर्ण रूप से पुरुष होता है और ना ही पूर्ण रूप से स्त्री होता है। इनका प्रजनन अंग पूरी तरह विकसित नहीं होता है। इसलिए ये लोग माता-पिता नहीं बन सकते हैं।

किन्नर नाम सुनते ही हमें जिन व्यक्तियों की याद आती है वो ट्रेनों में नाच गाकर या ताली बजाकर भीख मांगने के लिए आते हैं। इनके हाव-भाव, रीति-रिवाज़ और स्वभाव से ये आम लोगों से विभिन्न होते हैं। इसी वजह से सामाजिक अस्वीकृति के कारण किन्नर समुदाय के लोग समाज से अलग रहते हैं।

किन्नर समुदाय के लोगों को समाज में श्रापित माना जाता है। उनके जन्म को पिछले जन्म के पापों का फल मानते थे। पुराणों में किन्नरों की पौराणिक उपस्थिति की प्रमाणिकता है, लेकिन सदियों से वे श्रापित ही माने जाते हैं। २०१४ से संवैधानिक अधिकार मिलने के बाद भारत में किन्नरों को 'थर्ड जेंडर' के रूप में घोषित किया गया है। लेकिन इनकी सामाजिक स्वीकृति में तबदीली न होने की वजह से वे आज भी अस्मिता की तलाश में भटकते रहते हैं। किन्नर रूप में जन्म लेने में उनका कोई कसूर नहीं है। फिर भी लोग उन्हें श्रापित या अधूरा मानते हुए इनका जीना दूभर कर देते हैं।

'अधूरा' इंसान जिंदगी में सब कुछ होते हुए भी जन्म से मृत्यु तक खाली जीवन व्यतीत करने के लिए मजबूर हो जाता, इन व्यक्तियों के लिए समाज की मुख्य धारा में आना और सिर उठाकर जीना आसान नहीं था। इसके पीछे छुपा संघर्ष ने इन व्यक्तियों को मजबूत बना दिया था।

किन्नर रूप में जन्मी बच्ची नरगिस को स्कूल में उसकी दोस्त नफरत करते थे। नरगिस अपनी माँ से शिकायत करती है - "बच्चे क्लास में हमसे दूरी बना कर रखते हैं, हमारे साथ खेलते नहीं।"[1] हर एक माँ को अपना बच्चा बहुत प्यारा होता है, चाहे वो जैसा भी हो। नौ महीने पेट में रखकर जन्म देती हैं और जो बच्चा न ही लड़का होता है या ना ही लड़की; बस अपूर्ण होता है। अपूर्ण होने के कारण अपने ही शरीर के हिस्से को नफरत करके छोड़ देना एक माँ के लिए अत्यंत कठिन है। फिर भी कभी समाज की वजह से मां को किन्नर बच्चे को छोड़ना पड़ता है। लेकिन उपन्यास में नरगिस की माँ जास्मिन उसके साथ है। जास्मिन ने तय किया कि नरगिस को शिक्षित करना है। समाज के डर से उसके भविष्य के साथ न खेलकर समाज में उसको अपनी पहचान बनाने का मौका देना है। लेकिन बात तो उलट ही पड़ा। नरगिस के बारे में किन्नर गुरु को पता चला और वे लोग आकर उसे आश्रम ले गये। नरगिस की दुस्थिति देखकर गाँववाले दुआ करने लगे कि "किसी भी दुश्मन के घर भी किन्नर जन्म ना लें।"[2]

दस साल की बच्ची ने गुरु माँ से पढ़ने की इच्छा प्रकट की कि उसको अपनी पहचान बनाने की लड़ाई में समाज का मुकाबला करना था। नरगिस धीरे-धीरे किन्नर समाज का तौर-तरीका सीख लेती है। नरगिस के मन में यह घर कर चुकी थी कि किन्नर अगर किसी को दुआ देते हैं तो वह जिंदगी में कामयाब होता है। किन्नरों की दुआ में किसी भी व्यक्ति के बुरे से बुरे समय को भी अच्छे से अच्छे समय में परिवर्तन करने की शक्ति है।

कई मुसीबतों से लड़कर नरगिस कॉलेज की शिक्षा प्राप्त करती है। इसके उपरांत वह अकरम से प्रेम करने लगती है। नरगिस अकरम से अपनी शादी की इच्छा गुरु माँ से प्रकट करते वक्त गुरु माँ समझाती है - "नरगिस, किन्नर तो अपने गुरु से शादी करते हैं। किन्नरों के आराध्य देव 'अरावन' को माना जाता है। हर किन्नर को अपने आराध्य देव से साल में एक बार विवाह करना पड़ता है। यह विवाह मात्र एक दिन के लिए होता है।"[3] शादी के बारे में अकरम के पूछने पर नरगिस उत्तर देती है कि- "मुझे समाज की परवाह नहीं, जिंदगी मुझे जीनी है, समाज को नहीं।"[4] नरगिस अपनी शारीरिक कमियों में कुंठित होकर रहना नहीं चाहती है। और वह अकरम से बताती है - "मैं किन्नर हूं, औलाद का सुख आप को नहीं दे सकती, मुझे माफ कर देना। क्यों न हम हिना (अकरम के मामा की किन्नर बच्ची) को गोद ले लें?"[5] हिना के बारे में पता लगा लगाने के कारण आश्रमवाले आकर उसे ले जाती है। हिना को अकरम के परिवार श्रापित मानते हैं।तब नरगिस बताती है - "इसको श्रापित मत बोलो, इसका दोष क्या है? यह बच्ची है!"[6] हिना का जीवन नरक बन जाने से नरगिस और अकरम उसकी सहारा बन जाते हैं। श्रापित का धागा अपने माथे से हटाने के लिए हिना विदेश जाती है। वह डॉक्टर बनकर अपने माथे से स्वयं किन्नर होने का कलंक मिटाती है। "जब परिवार का प्यार साथ हों तो लोग बड़ी से बड़ी मुश्किल से मुकाबला कर सकते हैं।"[7] हिना शहर की बहुत बड़ी डॉक्टर है, साथ ही किन्नरों के लिए एक संस्था भी चला रही है।जिसमें किन्नरों से जुड़ी प्रत्येक समस्या का हल निकाला जाता है। नरगिस को सशक्त किन्नर के रूप में उपन्यास में चित्रित किया गया है।

निष्कर्ष

यह कैसी विडंबना है कि तृतीय लिंगी व्यक्ति भी आम इंसानों की तरह पैदा होता है। वह भी अपने परिवार के साथ आम बेटे या बेटी की तरह रहना चाहता है। संतानों को जन्म देने में अक्षम इंसान मां से बच्चे को छीन लेने का दुख कैसे समझ लेगा? लिंगीय समाज के डर से माँ-बाप उसे परित्याग कर देते हैं। अपनी जीविकोपार्जन की तलाश में वह किन्नर समुदाय में पहुँचता है।

समाज तृतीय लिंगी व्यक्तियों का पीछा करके उसे श्रापित स्थापित करते हुए उन्हें 'अरे किन्नर.. अरे किन्नर.."आवाज देकर उनका जीवन दूभर कर देकर खुशी पाता है। श्रापित का धागा अपने माथे से हटाने के लिए किन्नर को जिन परिस्थितियों एवं संघर्षों से गुजरना पड़ता है, वह सदा अत्यंत दुखदायक होता है।

अगर हमारे परिवार में एक किन्नर बच्चा पैदा हों तो हम भी उस बच्चे की सामाजिक अस्वीकृति की वास्तविकता से रू-ब-रू हो जाएंगे और इस प्रकार उसका इज्जत और स्वाभिमान की रक्षा करने में हम समर्थ हो जाएँगे। उपन्यास के माध्यम से यह व्यक्त किया गया है कि किन्नर श्रापित नहीं है; इनकी अपनी अलग पहचान है। किन्नर घृणा का पात्र नहीं, ना ही हँसी का; वह भी सम्मान के योग्य है। उनका भी अपना अस्तित्व है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ. मुक्ति शर्मा, श्रापित किन्नर, अमन प्रकाशन, कानपुर, २०१६ पृ. ८
2. वही, पृ. १३
3. वही, पृ. २५
4. वही, पृ. ४४
5. वही, पृ. ४६
6. वही, पृ. ५०
7. वही, पृ. ७६

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

INDIA'S TROUBLES IN A FRIENDLESS WORLD

Dr. Chintu
Research Supervisor
(Assistant Professor),
PG Dept, Political Science, VKSU, Ara.

Jyoti Prakash
Research Scholar,
PG Dept, Political Science, VKSU, Ara.

ABSTRACT

India, the mother of democracy, the fourth largest economy, with a mighty and efficient armed forces faces a harsher global landscape and shrinking diplomatic space. There is growing mistrust in the world, no flexibility, and countries are not working together as much as before. India has often stayed silent or been unable to act during problems in nearby regions and has played only a small role in major global events. Earlier, powerful countries used to seek India's support, but that situation has changed.

Now, India needs to focus again on its basic goals- keeping the country safe and strengthening its economy- in a tougher and more self-interested world. India faces challenges such as pushback from neighbouring countries, the U.S. acting more for its own interests, pressure from China, and limits in its own capacity. But this situation doesn't have to last forever.

India can regain its strength and influence if it becomes more practical, puts security and economy first, treats its neighbours as partners, completes projects faster, reforms SAARC, empowers BIMSTEC, and strengthens its military power. Eternal vigilance is the price of liberty.

KEYWORDS : India, Pakistan, Iran, Israel, war, Operation Sindoor, USA, tariff, diplomacy, foreign policy.

INTRODUCTION

Following the dastardly Pahalgam Massacre (April 22, 2025), India executed a series of precision strikes against terrorist infrastructure in Pakistan and Pakistan-occupied Kashmir (PoK), on 7th May 2025, neutralizing significant threats while maintaining ethical standards and international legal boundaries. Operation Sindoor targeted a broader range of targets than any prior Indian counterterrorism action. For far too long, India pursued the same pointless diplomatic procedures, sending dossiers and supporting documentation to the globe but receiving little in return, out of fear of "internationalising" the Kashmir dispute (Tharoor, 2025).

However, soon after India's big military success, other events took away its attention and importance. India's limited diplomatic strength became clear when U.S. President Donald Trump claimed that America was helping to mediate peace. In Parliament, Prime Minister Modi carefully said that India

does not accept "third-party mediation," but he didn't mention Trump or the U.S. directly - that was left to the Ministry of External Affairs to handle. Meanwhile, other countries called for peace from both sides, treating India and its opponent as equal, which weakened India's moral position. These events showed India struggles to get reliable support from its strategic partners and that its informal alliances are not very strong (Khashimwo, 2025).

India is also losing influence in West Asia. It was left out of the Gaza peace talks led by the U.S., Türkiye, Egypt, and Qatar, and only sent low-level representatives, showing its reduced role. More recently, the West Asia geopolitical crisis involving Iran, Israel and USA which shocked and rocked the global economy as well as indian enegy sector in an unprecedented manner, yet again saw India as a bystander rather than an active global player or 'Vishwaguru' that it aspires to be.

In South Asia, India didn't do much during Nepal's Gen Z movement. Relations with Bangladesh and Nepal are getting worse, while China has become the biggest trading partner for Pakistan, Bangladesh, Nepal, and Sri Lanka. The Maldives has sent Indian military personnel home, and Chinese projects are moving ahead faster than India's. India was once in a strong diplomatic position, but its close ties with Russia have created tension with the U.S., showing that India's influence has limits. Since 2020, China has changed the situation along the LAC (border) and expanded eastward, reducing India's strategic space, especially as instability grows in the northwest. The hopes for better ties with China after the Tianjin talks have also faded (Narayanan, 2025).

As of now, India is on its own in this cold and friendless world and seems to be facing increasing isolation as it grows economically and politically. It now must reset its foreign policy by working together with its neighbours in a spirit of cooperation. It should stop trying to control them and instead treat them as equal, independent countries to rebuild mutual trust and respect. India should also focus on building closer people-to-people and cultural ties through education, student exchanges, and shared traditions to reduce the growing distance with Nepal, Bangladesh, Sri Lanka, and the Maldives. Instead of trying to influence their politics, India should aim for stronger economic links-more trade, connected supply chains, energy partnerships, and shared infrastructure projects - with quick and reliable funding that can compete with China's speed and scale. The new approach should be guided by three key ideas: effective delivery, respect for sovereignty, and national strength.

INDIA'S EVOLVING FOREIGN POLICY

According to Northedge, foreign policy is how a country deals with both outside influences and its own internal factors. Hartman says foreign policy is a planned way of protecting and promoting a country's main interests. In simple terms, both these definitions show that foreign policy is about how countries act to manage their own affairs and, when possible, influence the actions of other countries to protect their national interests.

Jawaharlal Nehru's post-independence vision inspired India's foreign policy, which placed a high priority on defending national interests, such as territorial integrity and sovereignty. The key goals were to safeguard Indians abroad, maintain peace in South Asia, boost economic growth through global partnerships, promote disarmament and peace, and make India's voice strong on issues like climate change, terrorism, and UN reforms. The 1954 India-China Panchsheel Agreement- based on mutual respect, non-aggression, non-interference, equality, and peaceful coexistence - became a core principle. India's support for the UN showed its belief in multilateralism and peaceful solutions,

while its stand against colonialism and racism reflected opposition to imperialism. The policy of non-alignment allowed India to stay independent from global power blocs (Gupta & Shukla, 2023).

The Gujral Doctrine placed a strong emphasis on neighbourly friendliness that is not reciprocated. This paradigm, which has evolved pragmatically, strikes a compromise between realpolitik and ethics for India's international ascent.

Global politics has shifted from the Cold War's two-power divide to a dynamic multipolar world where power is shared among many players. Emerging economies, regional powers, and global issues like climate change and technology now shape an unpredictable system. This change allows middle powers like India to act more independently. No longer a follower of great powers, India now helps shape global rules through flexible, issue-based partnerships. By balancing ties with the U.S., China, Russia, and neighbours, India maintains its autonomy and influence in a world defined by both cooperation and competition (Jaishankar, 2024).

For India, a multipolar world offers many chances - to build diverse partnerships, promote its interests, and shape global decisions. But it also brings risks, as rising power rivalries could force India to choose sides. To handle this, India focuses on strategic autonomy - engaging with all major players without fixed alliances. It builds flexible, interest-based ties: working with the U.S. on defense, technology, and the Indo-Pacific; keeping strong energy and defense links with Russia; and balancing competition and cooperation with China. (Cogo Morales, 2025). India also deepens ties with the EU, Japan, Australia, ASEAN, and Africa. This balanced, multi-directional approach gives India more flexibility and strength in an uncertain world.

At the heart of this strategy lies India's preference for "issue-based diplomacy." Instead of binding itself to any one alliance or ideological camp, India engages based on specific interests, forming partnerships that advance mutual goals in areas such as climate change, connectivity, health security, digital governance, and maritime cooperation (Baruah, 2022). This flexible and pragmatic approach allows India to navigate the complexities of multipolarity effectively while safeguarding its core national interests.

India's diplomacy today is like balancing on a tightrope. It maintains relationships with many different countries at the same time. India strengthens its defence partnership with the U.S., gets closer to Israel, continues its long-standing ties with Russia, and also works with China and others through groups such as BRICS and the SCO. During the Ukraine war, when Western countries wanted India to openly criticize Russia, India chose a careful middle path. It asked for peace talks, continued buying energy from Russia, and still kept good relations with Western nations. This shows that India's foreign partnerships are not accidental. Each one is a deliberate and strategic decision made in a complex global environment (Mohan, 2015).

INDIA IN A FRIENDLESS WORLD

After the April 22, 2025, Pahalgam terror attack that killed 26 Indian tourists, India launched Operation Sindoor on May 7, targeting nine terror camps. The world's reaction was mostly quiet. The US, UK, and BRICS condemned terrorism but didn't mention Pakistan. Washington asked India to show restraint, and China focused on keeping peace to protect its CPEC projects. Few countries supported India's stance, worried about tensions rising. India's diplomacy struggled-media hype, censorship,

weak messaging, and symbolic efforts hurt its image. Although the military operation killed the attackers by July, India faced growing global isolation. The incident showed a clear gap between India's strong actions and its fading diplomatic credibility, weakening its dream of being a "Vishwaguru" (Khashimwo, 2025).

In 2026, India stands as a fast-growing economic power with 7–8% GDP growth and a strong belief in independent foreign policy. Yet, it often reacts to events instead of leading, losing influence in West Asia and South Asia. A major setback came when India was left out of the October 13 Sharm el-Sheikh Gaza Peace Summit, led by U.S. President Trump and Egypt's President el-Sisi, with over 20 world leaders present. India sent only a junior minister, Kirti Vardhan Singh, and had little say in the new U.S.-Türkiye-Egypt-Qatar-led peace process. This isolation deepened when India abstained from a June 12 UN vote calling for a Gaza ceasefire, hostage release, and aid access-standing apart from its South Asian, BRICS, and SCO partners. These moves weakened India's moral image and reduced its regional influence (Narayanan, 2025).

India's new stand-calling for direct talks instead of backing Gaza ceasefire efforts-upset many Global South nations, especially as 55,000 Palestinians had died. During the May 2025 India-Pakistan conflict, Türkiye openly backed Pakistan, sending over 350 drones and operatives for attacks on 36 Indian sites; two of them were later killed in Operation Sindoor. In September, Saudi Arabia and Pakistan signed a defence pact (SMDA) promising joint security against any threat. This strengthened a Sunni alliance and sidelined India, despite earlier UAE and Saudi investments. The pact, triggered by Israel's September 9 Doha strikes, also hinted at Pakistan's possible nuclear protection for the bloc. Together with Bangladesh's growing distance from India, these events highlight India's diplomatic weakness-favoring close ties with Israel over balanced regional relations.

The West Asia crisis of 2026 which caused massive humanitarian disaster in Iran, Isarel and the other neighbouring countries, alongside sending shockwaves throughout the world economy, pushing the energy prices soaring through the roof also saw no major role played by India in the peace process. To make matters worse, our arch-rival Pakistan walked away with major accolades for the role it played in the Mediation process.

Back home, India's neighborhood policy has weakened, allowing China to gain ground. In Nepal, a youth-led revolution over corruption and internet bans ousted the government, but India stayed on the sidelines. Nepal then expelled Indian hydropower experts and sped up a $2.1 billion BRI rail link to Lhasa. In Bangladesh, after India's support for Sheikh Hasina despite human rights abuses, the new government turned to China, signing $24 billion in trade and $5 billion in infrastructure deals. The Maldives removed Indian troops in 2024 and gave China rights to patrol its waters, while Sri Lanka's debt deal extended China's 99-year control of Colombo Port City. Now, China dominates trade with Pakistan, Bangladesh, Nepal, and Sri Lanka, as its BRI projects outpace India's efforts. India's once-strong global position is slipping, revealing a more reactive and less influential diplomacy (Narayanan, 2025).

Further, USA's anger over India's $15 billion oil trade with Russia and refusal to follow sanctions led to 50% tariffs on Indian exports in August, straining ties. Meanwhile, Russia sold Su-57 jets to Pakistan and deepened its "no-limits" partnership with China, reducing India's influence in Moscow. Along the LAC, China still holds about 7,000 sq km gained since 2020. Despite 22 rounds of talks, the PLA has doubled patrols and avoided creating buffer zones. China is also expanding influence

through business, education, and cyber networks across Asia, building a China-centered regional order. In the northwest, Afghanistan's collapse cut India's Chabahar trade by 70%. India's passive stance toward Taliban-Pakistan tensions cost it a chance to gain strategic advantage.

Despite recent setbacks, India remains a key global player thanks to its strong economy and flexible diplomacy. Now the world's fourth-largest economy ($4.19 trillion GDP), growing at 6.2%, India adds about $1 trillion every 12-18 months and aims for $30 trillion by 2047. Its multi-alignment strategy keeps balance- working with the Quad on counterterrorism, the SCO with China and Russia, and the iCET partnership with the U.S. on defense tech, AI, and semiconductors. Buying cheap Russian oil (42% of imports) saves $5 billion a year without straining ties. Diplomatically, India showed leadership at the G20 (2023) and through the 2025 TRUST initiative for tech jobs. With China, practical ties continue- tourist visas resumed, border trade reopened, and Modi and Xi met in Tianjin to discuss the LAC.

Still, to maintain influence, India must move faster on projects, rebuild trust with neighbors, and modernize defense to match its global ambitions.

FUTURE PROSPECTS AND WAY FORWARD

India must quickly rethink its foreign policy to stop losing influence, starting with a more cooperative and respectful approach toward its neighbors. It should avoid interfering in other countries' politics and treat all neighbors as equals, focusing on mutual respect instead of dominance. To rebuild trust in Nepal, Bangladesh, Sri Lanka, and the Maldives, India should invest more in people-to-people ties- through scholarships, student exchanges, cultural events, and heritage projects, going beyond just Bollywood or democracy talk. India also needs to shift from political control to economic partnership- using trade, shared supply chains, joint energy grids, and co-built infrastructure to create lasting connections. To compete with China, India must make its funding fast, reliable, and large-scale, with clear results. It should stop micromanaging and ensure that benefits are visible, practical, and shared by all. This pragmatic, inclusive reset is essential to reclaim regional influence (Sikri, 2024).

Sikri (2024) argues that India must shift toward a more realistic, interest-driven foreign policy, prioritizing practical national gains over moral or ideological stances. He supports keeping flexible partnerships with major powers-the U.S., Russia, the EU, and ASEAN, while cautioning against overdependence on the Quad to avoid getting locked into exclusive strategic blocs. In South Asia, he suggests that India's "Neighborhood First" policy should emphasize trade, economic links, and connectivity rather than security dominance, especially to counter China's BRI influence. In West Asia, he recommends balancing India's close ties with Israel by deepening engagement with the GCC, Iran, and the Arab League to safeguard energy security, protect migrant workers, and enhance defence cooperation.

Sikri also calls for institutional reforms, including giving more autonomy to the MEA, reducing excessive PMO control, and creating long-term strategic planning bodies. He highlights the growing importance of technology and economic diplomacy through digital platforms, semiconductors, and green technologies as new sources of global influence. Finally, he stresses that India's Global South leadership, showcased in the G-20 and the Voice of Global South Summits, must produce tangible outcomes rather than just strong rhetoric.

The main priority should be strengthening India from within-by building a resilient industrial base, developing a self-reliant defence sector, and advancing high-end technology, rather than pursuing grand diplomatic spectacles. India must enhance its military capabilities and secure its borders, accelerating defence reforms and strategic partnerships to reduce the gap with China's $180 billion defence machine. Along the LAC, India needs to remain vigilant and insist on concrete progress from China instead of accepting vague assurances. In dealing with Pakistan, India should rely on smart diplomacy, intelligence operations, and economic leverage, keeping military conflict as the absolute last resort. In short, India must act decisively, respect the sovereignty of other states, and strengthen itself domestically to rebuild its global standing (Narayanan, 2025).

CONCLUSION

In today's world of great-power rivalry and weakening global cooperation, India's old non-aligned approach no longer seems effective. Still shaped by Nehru-era ideas, Indian diplomacy is struggling to keep up with the rapid and unpredictable actions of leaders like Trump and Xi Jinping. India has seemed reactive and sidelined in several situations-such as being excluded from the Gaza peace summit or remaining silent during Nepal's youth movement. Frictions with major powers add to these challenges. U.S. pressure over India's purchases of Russian oil, Russia supplying fighter jets to Pakistan, and China still occupying about 7,000 sq km along the LAC all point to a worrying decline in trust and influence.

Yet this decline is not irreversible. India needs to move beyond flashy, populist diplomacy and focus on strengthening its own defence capabilities to counter China. It must also stay vigilant along its borders. This moment should push India to act more decisively- deepening economic and cultural ties with its neighbours and building strong domestic foundations instead of relying on symbolic high-profile events. In a multipolar world, India's plural and inclusive identity gives it a unique advantage to lead the Global South. If India adapts and reforms, it can emerge as a reliable "Vishwa Mitra" (friend of the world). If not, it risks being pushed to the margins.

REFERENCES

- Baruah, D. M. (2022). India in the Indo-Pacific: New Delhi¹s Theater of Opportunity. Carnegieendowment.org
- Cogo Morales, P. (2025, October) India's foreign policy reconfiguration: From non- alignment to multi- alignment. CIDOB.

  https://www.cidob.org/en/publications/indias-foreign-policy-reconfiguration-non-alignment-multi-alignmen
- Gupta, S., & Shukla, A. (Eds.). (2023). *Statecraft and foreign policy: India, 1947–64*. Sage Publications.
- Jaishankar, D. (2020). The India Way: Strategies for an Uncertain World. HarperCollins India.
- Jaishankar, S. (2024). *Why Bharat matters*. Rupa Publications.
- Khashimwo, P. (2025, September 8). India's loudspeaker diplomacy isn't being heard on the

international stage. East Asia Forum. https://eastasiaforum.org/2025/09/08/indias-loudspeaker-diplomacy-isnt-being-heard-on-the-international-stage/

- Ministry of External Affairs (via CBPBU). (2020). *Objectives of India's Foreign Policy*.
- Mohan, C. R. (2015). Modi's World: Expanding India's Sphere of Influence. HarperCollins.
- Narayanan, M.K. (2025, October 22). *India's travails in negotiating a friendlessworld*. The Hindu. https://www.thehindu.com/opinion/lead/indias-travails-in-negotiating-a-friendless-world/article70187196.ece
- Sikri, R. (2014). Challenge and Strategy: Rethinking India's Foreign Policy. *IndianForeignAffairsJournal*,*9*(1),56–69. http://www.jstor.org/stable/45340951
- Sikri, R. (2024). *Strategic conundrums: Reshaping India's foreign policy*. Penguin Random House India.
- Tharoor, S. (2012). *Pax Indica: India and the world of the 21st century*. Penguin Books India.
- Tharoor, S. (2025, May 30). *Lessons from Operation Sindoor*. Project Syndicate. https://www.project-syndicate.org/commentary/operation-sindoor-marks-a-turning-point-in-india-pakistan-relations-by-shashi-tharoor-2025-05

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

भारतीय संविधान के आर्किटेक्ट : बाबासाहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर

डॉ. अनामिका जैन
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
जैन कन्या पाठशाला पी.जी. कॉलेज, मुजफ्फरनगर
ई-मेल : jainanamika84@gmail.com

कोई महापुरुष एकदम से उदित नहीं होता, अपितु उसके समकालीन काल की विकट परिस्थितियां उसके व्यक्तित्व का क्रमशः विकास करती हैं। उसके मूल्यांकन की कसौटी उसके जीवन तथा उसके आस-पास घटित घटनाओं के साथ-साथ उसकी पारिवारिक और सामाजिक पृष्ठभूमि का प्रभाव भी होता है। जब हम भारत-भूमि के प्रसिद्ध व्यक्तियों के व्यक्तित्व पर दृष्टि डालते हैं तो कुछ ऐसे विलक्षण एवं विराट् व्यक्तित्व हमारे सामने उभरकर आते हैं, जिनके अवदान और प्रदेय को हम सभी भारतवासी स्मरण करते हुये नमन करते हैं। एक ऐसे ही महान् और विराट् व्यक्तित्व के धनी डॉ. भीमराव अम्बेडकर हैं, जिनके अवदान के प्रति हम कृतज्ञ हैं और उनके उस स्तुत्य अवदान को हम सभी भारतवासी 'भाारतीय संविधान के आर्किटेक्ट' के रूप में याद करते हैं। अपने स्वास्थ्य की परवाह न करते हुये उन्होंने दिन-रात मेहनत कर भारतीय संविधान का एक ऐसा मसौदा तैयार किया, जो मोटे तौर पर स्वतंत्र भारत के लिये बनाये गये भारतीय संविधान का आधार बना। यह एक महान् कार्य था, जिसे देखते हुये देश व विदेश के अनेक विद्वानों ने उनको भारतीय संविधान के पिता (Father of indian Constitution) की संज्ञा दी। डॉ. अम्बेडकर एक ऐसे निराले व्यक्तित्व हैं, जिन्होंने भारतीय संविधान तथा भारत के उज्ज्वल भविष्य की परिकल्पना, उसके भावी विकास और योजनाओं को साकार करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। न केवल भारत देश का, अपितु पूरे विश्व का यह सौभाग्य है कि ऐसे विराट् व्यक्तित्व का अवतरण ईश्वर द्वारा भारत-भूमि पर हुआ। डॉ. अम्बेडकर को हम भारतीय संविधान की सशक्त बुनियाद और आधारशिला तैयार करने तथा एक बहुआयामी, बहु-दिशागामी, दिव्य व्यक्तित्व के रूप में याद करते हैं तथा उनके समक्ष नतमस्तक होकर उनको नमन करते हैं।

समादृत डॉ. अम्बेडकर जी को उनके समस्त कृतित्व और व्यक्तित्व के आधार पर हम अनेक रूपों में उपस्थित पाते हैं :

1. भारतीय संविधान के प्रमुख वास्तुकार के रूप में।
2. जातिवाद और अस्पृश्यता के उन्मूलक आचार्य के रूप में।
3. शिक्षाविद्, विचारक, चिंतक और समाज-सुधारक के रूप में।
4. राष्ट्र उन्नयन एवं उत्थान के नायक के रूप में।
5. समान समाज, समभावी समेकित संस्कृति और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के पक्षधर के रूप में।
6. सामाजिक विकृतियों के निवारण एवं निदान के लिये समर्पित व्यक्ति एवं नेता के रूप में।
7. सामाजिक क्षमता के विश्वनायक के रूप में।

डॉ. अम्बेडकर का पूरा नाम डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर था। वे मध्य-प्रदेश में 14 अप्रैल, सन् 1891 को जन्मे और दिल्ली में 6 दिसंबर, सन् 1956 को देह-त्याग दिया। इस तरह हम देखते हैं कि लगभग 65 वर्ष की आयु में उन्होंने जो कार्य सम्पन्न किये, वे उनकी विलक्षण मेधा और अद्‌भुत प्रतिभा के परिचायक हैं। आश्चर्य होता है कि एक ऐसा व्यक्ति जिसने 65 वर्ष की आयु में सौ वर्ष से अधिक तक किये जाने वाले कार्यों के दायित्त्व का निर्वहन किया।

राष्ट्र की स्वतंत्रता में डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने रचनात्मकता के साथ-साथ उल्लेखनीय, स्मरणीय एवं स्तुत्य भूमिका निभायी। उन्होंने आज़ादी के अनेक आयामों को उद्‌घाटित किया और ऐसे-ऐसे निर्णय लेने के लिये देश को प्रेरित किया तथा राष्ट्र का मार्ग प्रशस्त किया कि जिससे उनके प्रति सहज ही एक श्रद्धा और समादृत भाव का उदय होता है, जैसे :

1. डॉ. अम्बेडकर के सम्पूर्ण जीवन का मूल एवं सात्त्विक उद्देश्य यही था कि वे आजीवन शोषितों और पीड़ितों की सेवा करें। उन्होंने यथास्थितिवाद, समाज में व्याप्त कुरीतियों, अंधविश्वासों, अमानवीय रूढियों, परंपराओं तथा मान्यताओं के खिलाफ शोषण, उत्पीड़न और दमन के खिलाफ अपनी आवाज़ बुलंद की।

2. डॉ. अम्बेडकर राष्ट्रवासियों एवं राष्ट्र के चहुंमुखी हितों को अपने जीवन के उद्देश्यों में सर्वोपरि रखकर चलते थे। जितना आदर और सम्मान राष्ट्र के प्रति उनके मन में था, उतना ही आदर और सम्मान राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक के प्रति भी उनके मनो-मस्तिष्क में विद्यमान था।

3. डॉ. अम्बेडकर एक महाप्राण एवं महामानव की तरह सामाजिक विद्रूपताओं से सतत् संघर्ष करते रहे और इसी को उन्होंने अपने जीवन का उद्देश्य भी बनाया। वे अडिग, निर्भय और निरंतर अग्रसर रहने वाले व्यक्ति के रूप में हमारे सामने आते हैं।

4. अभावों, अपमानों, अड़चनों और सुधार की राह में खड़े अवरोधों से लड़ना, उन्हें परास्त करना तथा अपनी विलक्षण मेधा, संघर्ष, संकल्प-शक्ति एवं जुझारुपन से समस्त नकारात्मकताओं को आमूल-चूल उखाड़ फेंकने का उन्होंने संकल्प लिया था। इसीलिये उनका व्यक्तित्व असामान्य और विशेष था, क्योंकि वे जो सोच लेते थे, उसे कार्यान्वित करने के लिये सदा-सर्वदा तत्पर और प्रस्तुत रहते थे।

5. भारत देश को स्वतंत्र कराके उसे आत्मनिर्भर और आधुनिक दृष्टि से सशक्त बनाना - ये उनके जीवन का लक्ष्य था।

6. बाबासाहेब के सपनों का भारत एक विलक्षण, एक अनूठा और एक निराला भारत था।

7. डॉ. अम्बेडकर का भारत समानता और सार्वजनिक संपन्नता का भारत था। भारत का संविधान बनाते समय उन्होंने राष्ट्रवासियों के लिये कुछ परिकल्पनाएं और प्राक्कल्पनायें बनायी थीं कि उनका भारत आर्थिक समानता और सार्वजनिक संपन्नता का भारत हो। इस देश का प्रत्येक नागरिक अर्थ की दृष्टि से समान अधिकारी है। कोई बहुत अमीर और पूंजीपति हो या कोई बहुत गरीब और पिछड़ा वर्ग हो - ये उन्हें स्वीकार नहीं था। इसीलिये वे सार्वजनिक संपन्नता की बात करते थे।

8. तकनीकी रूप में उन्नत, गतिशील तथा प्रौद्योगिकी की दृष्टि से समृद्ध भारत उनके सपनों का भारत था। वे तकनीक में, उद्योग में और प्रौद्योगिकी में भारत को सबसे ऊपर और आगे देखना चाहते थे। इसीलिये वे समस्त भारतवासियों को प्रत्येक दिशा और क्षेत्र में समान अवसर प्रदान करने वाले व्यक्तित्व के रूप में हमारे सामने आते हैं। उनका मानना था कि कोई व्यक्ति चाहे किसी जाति, धर्म, भाषा, समुदाय या क्षेत्र का हो, उन सबको राष्ट्र की तरफ से समान अवसर मिलने चाहिये।

9. उन्होंने संपूर्ण देशवासियों को सुशिक्षित, सकुशल और कला-संपन्न बनाने वाले समृद्ध भारत की परिकल्पना की थी। एक ऐसा देश जहां का प्रत्येक नागरिक सुशिक्षित, साक्षर और ज्ञानवान् हो। वह कौशल विकास और कलात्मक दृष्टि से संपन्न हो।

10. देश के निचले, अपेक्षित तथा हाशिये पर जी रहे समाज, मेहनत-मशक्कत करने वाले मजदूरों और खून-पसीना बहाने वाले किसानों को आत्म-सम्मान के साथ जीने का अधिकार है। उनको इस जीवनयापन के समान अवसर मिलने चाहिये - ऐसे समान अवसरों की उपलब्धता का संकल्प लेने वाले डॉ. भीमराव अम्बेडकर का भारत वास्तव में एक अलग भारत था।

11. हर भारतवासी स्वाभिमान के साथ अपना जीवनयापन करे। वह भारत का नागरिक है, उसे जीवन जीने की कला आनी चाहिये। सांस्कृतिक विरासत हमारे मूल्य हैं। सामाजिक, नैतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक - इन सब मूल्यों के प्रति भारतीय नागरिक को जीने-मरने की शिक्षा और प्रेरणा मिलनी चाहिये - ऐसी परिकल्पना डॉ. भीमराव अम्बेडकर की थी।

12. डॉ. अंबेडकर का नाम 'दलित वर्ग के मसीहा' के रूप में जाना जाता है। यह बात काफी हद तक सही है कि जन्म से अस्पृश्य होने के कारण उन्होंने स्वयं बचपन से ही अस्पृश्य होने के कटु दंश और अनुभव को झेला था। इसीलिये उन्होंने विदेश से उच्च-शिक्षा पाकर भी किसी उच्च पद की लालसा न रखकर अपना जीवन 'अस्पृश्य समस्या' के समाधान हेतु लगाने का निर्णय किया था।

13. डॉ. अम्बेडकर ने पक्षपात रहित, तटस्थ, मानवीय सशक्त ढांचे का निर्माण करने वाले मजबूत भारत का सपना देखा था।

14. डॉ. अम्बेडकर पिछड़े, निचले तथा उपेक्षित वर्ग के दलित एवं निर्धन वर्ग के सुख-सुविधाओं से वंचित समुदाय के प्रत्येक नागरिक की राष्ट्र निर्माण में उल्लेखनीय भूमिका तय करने वाले भारत की परिकल्पना करते थे। अगर कोई व्यक्ति कृषि व्यवसाय से जुड़ा है या कोई मजदूर मेहनत-मशक्कत करके अपना और अपने परिवार का जीवनयापन करता है, तो देश के चहुंमुखी और बहुमुखी निर्माण और विकास में उन कृषि समुदाय और मजदूर वर्ग के भारतीय नागरिकों की भूमिका स्पष्ट एवं उल्लेखनीय होनी चाहिये - इस तरह के भारत की परिकल्पना डॉ. अम्बेडकर जी ने की थी।

15. डॉ. अम्बेडकर अर्थव्यवस्था के अंतिम पायदान पर खड़े प्रत्येक भारतीय नागरिक को भी राष्ट्र निर्माण में सहभागी बनने वाला भारत देखना चाहते थे। उनका मानना था कि राष्ट्र के सम्पूर्ण विकास की परिकल्पना धनाढ्य, पूंजीपति और व्यावसायिक वर्ग के लोग तो करें ही, उसके साथ-साथ हाशिये पर खड़ा हुआ समाज, जो पिछड़ा और उपेक्षित वर्ग है - उनकी भूमिका भी राष्ट्र निर्माण में अत्यंत स्पष्ट और उल्लेखनीय होनी चाहिये।

एक दलित किंतु होनहार एवं निर्धन किंतु कुशाग्र बुद्धि होने के बावजूद डॉ. अंबेडकर ने बड़ी कठिनाइयों के साथ अमेरिका एवं इंग्लैंड के प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों से एम.ए., एम.एस.सी., डी.एस.सी., एल.एल.बी., एल.एल.डी. जैसी महान् उपाधियां प्राप्त कीं, जो उस समय किसी भी भारतीय को प्राप्त न थीं। उस योग्यता के बावजूद अछूत होने के कारण डॉ. अम्बेडकर को भारत में उचित स्थान नहीं मिला, लेकिन फिर भी उन्होंने एक भारतीय होने के नाते अपना संपूर्ण जीवन राष्ट्रहित के लिये समर्पित कर दिया।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर के समग्र अवदान और व्यक्तित्व को अगर हम याद करें तो पाते हैं कि :

1. सन् 1920 से 1935 तक उन्होंने गोलमेज परिषद्, सत्याग्रह आंदोलन, पुणे पैक्ट और साइमन कमीशन के समक्ष निवेदन जैसे घटनाक्रमों को आकार दिया।

2. अपमान व तिरस्कार से खिन्न होकर डॉ. अम्बेडकर ने दलित समाज में जागृति पैदा करने के लिये सन् 1920 में 'अन्त्यज संघ' की स्थापना की। उस समय अछूतों को सार्वजनिक स्थलों पर जाने, सार्वजनिक तालाबों से पानी लेने और मंदिरों में प्रवेश वर्जित था।

3. सन् 1935 से 1947 के बीच डॉ. अम्बेडकर ने इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी की स्थापना की थी।

4. सन् 1942 में शेड्यूल कास्ट फेडरेशन की स्थापना भी डॉ. अम्बेडकर ने की थी।

5. वैचारिक क्रांति से सामाजिक अस्पृश्यता की समाप्ति का मूल मंत्र डॉ. अम्बेडकर की ही देन है। उन्होंने परंपरागत हिंदू समाज की अस्पृश्य एवं छुआछूत की मान्यताओं पर कठोर प्रहार कर हिंदू समाज की गतिशीलता को पुनर्स्थापित किया।

6. डॉ. अम्बेडकर ने समता, समानता, समभाव, सहिष्णुता और बंधुता - जैसे मूल्यों पर आधारित समाज के निर्माण और विकास की राह प्रशस्त की। प्राचीन भारतीय समाज में सदियों से भारतीय मानव मनुस्मृति की व्यवस्थाओं पर आधारित एक विशेष मानसिकता से सम्बद्ध सामाजिक और राजनीतिक विधानों से नियंत्रित होता रहा है। आधुनिक युग में डॉ. अंबेडकर ने मनुस्मृति पर आधारित श्रेणीबद्ध असमानता के सिद्धांत को कड़ी चुनौती दी। उन्होंने स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व -

ये विचार बुद्ध की शिक्षाओं से ग्रहण किये थे।

7. उन्होंने राष्ट्र के विचारों से जन-जन और जन-जन के विचारों से राष्ट्र को जोड़ा यानि कि राष्ट्रीय प्रतीक, राष्ट्रीय धरोहर, राष्ट्र के गौरवशाली इतिहास और सांस्कृतिक अस्मिता के साथ एक अटूट रिश्ता स्थापित किया।

8. डॉ. अम्बेडकर ने अपनी अत्यंत महत्त्वपूर्ण पुस्तक 'शूद्र कौन थे?' में आर्य आक्रमण सिद्धांत को सिरे से नकारा था। उन्होंने हिंदू समाज में प्रचलित चतुर्वर्ण व्यवस्था का प्रबल विरोध किया। उनके निर्माता मनु की उन्होंने कड़ी भर्त्सना की और उसे प्लेटो की सामाजिक व्यवस्था की कल्पना के समकक्ष रखा।

9. डॉ. अम्बेडकर ने चारों वेदों और वेदांत का गहन एवं गम्भीर अध्ययन किया था। किंतु उन्हें हिंदू धर्म रास नहीं आया। उसमें जन्म पाकर वे आजीवन उपेक्षित एवं अपमानित होते रहे तथा उन्होंने मुस्लिम, सिख, जैन और बौद्ध धर्म का विशद अध्ययन किया और अंततः स्वयं को बौद्ध धर्म के निकट पाया। 'शिक्षित बनो, संगठित रहो और अपने मानवाधिकारों के लिये संघर्ष करो' का नारा दलितों और वंचितों को ही नहीं, अपितु संपूर्ण मानवता को शोषण से मुक्ति की राह दिखाता रहेगा।

10. उन्होंने ऋग्वेद में आये शब्द - अर्य और आर्य का अर्थ विस्तार बखूबी किया था।

11. वैसे तो लोकमान्य तिलक का देश के प्रति महत्त्व बहुत ही स्तुत्य रहा है, किन्तु तिलक के अनेक सिद्धांतों से बाबासाहेब असहमत थे, इसीलिये उन्होंने तिलक के सिद्धांतों को बेबाकी से नकारा।

12. डॉ. अम्बेडकर के अध्यात्म, भक्ति, दर्शन, योग, पौराणिक साहित्य, वैदिक साहित्य का गहन एवं गंभीर अध्ययन इस बात का साक्षी है कि वे जो भी स्थापना करते हैं, उसमें न तो कोई गुंजाइश छोड़ते थे और न ही कोई शेष संभावना। इसीलिये वे अपनी बात को हमेशा वैदिक साहित्य का उदाहरण एवं प्रमाण बनाकर समाज के सामने रखते थे। उदाहरण के तौर पर, "वैदिक आर्यों का मूल स्थान हिंदुस्तान में ही होगा, इस बात के सबूत वैदिक साहित्य में ही मिलते हैं।"

13. उनकी उल्लेखनीय पुस्तक 'कॉस्ट इन इंडिया' इस बात का प्रमाण है कि बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर एक महान् और विराट् धर्मपुरुष भी थे।

14. बाबासाहेब अम्बेडकर हिंदू समाज को विभिन्न वंशों या जातियों में स्वीकार नहीं करते थे, जबकि यूरोप के इतिहासकार ऐसा ही मानते थे। उनकी स्थापना का बड़ी बेबाकी से बाबासाहेब ने खंडन किया। वे पूरे समाज को एक वंश और एक जाति के रूप में देखना चाहते थे।

15. बाबासाहेब का बहुत स्पष्ट उद्घोष था कि "हम एक संस्कृति के सूत्र में बंधे हुये हैं।" जब वे एक संस्कृति की बात करते थे, तो धर्म, जाति, क्षेत्र, आयु, लिंग से ऊपर उठकर देखने की परिकल्पना करते थे।

16. "जातियां राष्ट्र के लिये घातक है। जल्दी हमें उनसे मुक्त होना चाहिये।" - डॉ. अम्बेडकर ने सन् 1949 को भारतीय संविधान के अंतिम भाषण में ये बात दोहरायी थी। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि बाबासाहेब का यह विजन उनके सुदीर्घ जीवन अनुभव की ही देन है। उन्होंने भारतीय समाज में व्याप्त भेदभाव, छुआछूत और विभक्त जातियों की स्थिति को देखकर उपर्युक्त अनुमान लगाया था। एक अन्य स्थान में वे वक्तव्य देते हुये कहते हैं कि "मेरे विचार में जातिरहित संघ बनकर हिंदू समाज आत्मरक्षा हेतु अधिक शक्तिशाली बन जाता है तो ही उससे कुछ आशा की जा सकती हैं, अन्यथा हिंदुओं का स्वराज गुलामी के गर्त में उतरने का एक पायदान सिद्ध होगा।" उनका बड़ा स्पष्ट मत था कि जातिरहित संघ के रूप में पूरे हिंदू समाज को खड़ा करना चाहिये और आत्मरक्षा हेतु तथा अधिक शक्तिशाली बनने के लिये अनेकता में एकता खोजनी होगी। हमें पूरे देश को एक सूत्र, एक रंग, एक भाव में निबद्ध करना अति आवश्यक है।

17. गांधी जी के अनेक मतों से भी बाबासाहेब असहमत थे। हम जानते हैं कि गांधी जी हमारे देश के राष्ट्रपिता के रूप में स्वीकृत व्यक्तित्व हैं, लेकिन अपनी बात को दृढ़ता और विनम्रता से कहने का तरीका सीखना हो तो बाबासाहेब अम्बेडकर से सीखें। वे किसी भी बड़े-से-बड़े व्यक्तित्व से इसलिये प्रभावित नहीं होते थे कि वह व्यक्ति बड़े पद पर आसीन है या उसकी लोक स्वीकृति अधिक है। वे तो केवल इस दृष्टि से सहमत/असहमत होते थे कि यदि राष्ट्र-हित या समाज-हित

के लिये कोई निर्णय है, तो उन्हें स्वीकार्य है और उन्होंने 'स्वराज' की मांग को सदैव अपना वैचारिक समर्थन दिया। वस्तुतरू डॉ. अम्बेडकर का दृष्टिकोण कभी भी संकुचित नहीं रहा।

भारतीय संविधान के शिल्पकार के रूप में बाबासाहेब अम्बेडकर का नाम अनायास ही हमारे सामने उभरकर आ जाता है। वे भारतीय संस्कृति, भारतीय दर्शन, भारतीय परंपरा के महान् अध्येता तो थे ही, धर्मपुरुष भी थे। उन्होंने संविधान के माध्यम से जिन बिंदुओं पर बल दिया है और जिन बिंदुओं के पक्षधर बनकर उभरे हैं, वे आज भी ज्वलंत और जीवंत मुद्दे हैं, जैसेः

1. डॉ. अम्बेडकर जी का विजन था कि समान नागरिक संहिता भारत में होनी चाहिये। किसी भी जाति, धर्म, क्षेत्र, भाषा का वह भारतीय नागरिक है, तो उसे भी लाभ-हानि का का समान अवसर मिलना चाहिये। भारतीय नागरिकों के मूल अधिकारों में भी समानता के पक्षधर बाबासाहेब अम्बेडकर थे। व्यक्ति चाहे किसी भी पद, कार्यालय या मंत्रालय से संबंधित हो, वरीयता सबको समान मिलनी चाहिये।

2. वे हिंदुओं के लिये नागरिक संहिता के विरोधी थे। साथ ही, मुस्लिम पर्सनल लॉ भी उन्हें अस्वीकार्य था। इसीलिये उनकी पूरी दृष्टि समान नागरिक कानून पर थी।

3. वे जल संरक्षण के भविष्यद्रष्टा थे। आने वाले समय या शताब्दियों में दुनिया के लिये जल एक विकट संकट बनकर उभरेगा। जल की कमी के निरंतर घटने और समाप्त होने की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया।

4. उन्होंने प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा और सदुपयोग पर विशेष बल दिया।

5. वे समृद्ध भारत भूमि के शोषण के घोर विरोधी थे। इसके लिये, उन्होंने भारतीय संविधान के निर्माण में अनेक प्रावधान बनाये थे।

6. खेती के राष्ट्रीयकरण की वकालत भी उन्होंने भरपूर की थी।

7. सन् 1942 से 1946 तक वे देश के श्रम-मंत्री के रूप में भी विभूषित रहे।

8. वायसराय के कार्यकारी मंडल में जल-संपदा विभाग का कार्यभार भी उन्हें सौंपा गया था।

9. सन् 1944 में नदियों को परस्पर जोड़ने का एक विराट् सुझाव उन्हीं की देन है, जिसे पूर्व प्रधानमंत्री माननीय श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी ने अपने कार्यकाल में लागू करने का मुद्दा उठाया था। अटल जी जानते थे कि जल-संरक्षण आने वाली पीढ़ियों के लिए अत्यंत आवश्यक है, यदि हम ऐसा नहीं करेंगे तो अगला विश्व-युद्ध जल के आधार पर होगा।

बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर 'एक राष्ट्र रू एक भावना' पर विशेष बल देते थे, उनका मानना था कि :

1. सह-अस्तित्व की भावना से ही राष्ट्र की स्वतंत्रता संभव हो सकती है। वे 'बांटों और राज्य करो' जैसी मानसिकता के घोर विरोधी थे, क्योंकि हम सब का अस्तित्व देश के अस्तित्व से जुड़ा हुआ है।

2. सांस्कृतिक एकता और भौगोलिक अखंडता की भावना को प्रबल बनाने में डॉ. अम्बेडकर की भूमिका विशेष रही है। हम वंशवाद, जातिवाद, पंथवाद से ऊपर उठकर ही इस लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं।

3. राष्ट्रवाद की त्रिवेणी - जन, भूमि और संस्कृति से निर्मित है, किंतु इसमें बंधुत्व-भाव का होना अत्यंत आवश्यक एवं अनिवार्य है। जब हम किसी भी देश के राष्ट्रवाद की चर्चा करते हैं तो उसमें उपर्युक्त तीनों तत्त्व बड़े महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं। राष्ट्र की जनता/लोग, वहां की भूमि/पृथ्वी और संस्कृति - इन तीनों के निर्माण से ही राष्ट्रवाद की त्रिवेणी के रूप में उद्घाटित होती है, लेकिन इस राष्ट्रवाद की त्रिवेणी की परिकल्पना बिना बंधुत्व-भाव के संभव नहीं है।

4. एकेश्वरवाद और अद्वैतवाद के प्रति अम्बेडकर जी का दृष्टिकोण बहुत स्पष्ट था। वे जो लिखते थे कि हम सब का परमात्मा एक है और हम सब की आत्मा भी एक है - इसी बात को संत कबीर तथा अन्य दूसरे संतों ने भी अपने-अपने ढंग से दोहराया है।

5. वे लोकतंत्र की बुनियाद में समता, बंधुता और स्वतंत्रता को देखना चाहते थे, यानी एक अच्छे, सशक्त और अनुकरणीय लोकतंत्र की परिकल्पना उनके मनो-मस्तिष्क में रही है। इसीलिये उन्होंने लोकतंत्र की इन व्यवस्थाओं के प्रति आदर भाव रखने पर बार-बार बल दिया है।

6. वे संविधानमूलक लोकतांत्रिक राष्ट्रवादी व्यवस्था के संस्थापक बनकर हमारे सामने आये।

इस प्रकार भारत के दो महान् सपूतों - महात्मा गांधी एवं बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर को अपने आरंभिक जीवन में संघर्षों का सामना करना पड़ा। जहां महात्मा गांधी ने दक्षिण अफ्रीका में प्रवासी भारतीयों के अधिकारों की लड़ाई लड़ी और न जाने कितनी यातनायें सहीं, यहां तक कि उनकी दक्षिण अफ्रीका में पिटाई भी हुयी, वहीं अंबेडकर अपने ही समाज में उच्च तथा निम्न की मानसिकता के दलदल में फंसे रहे। उनका बचपन और शिक्षा छूत-अछूत की काली छाया के तले शुरू हुयी, जिसकी छाप जीवनपर्यंत उन पर पड़ी। जहां गांधी प्रवासी भारतीयों के हक की लड़ाई लड़ रहे थे, वहीं बाबासाहेब छूत-अछूत की लड़ाई समाज में लड़ रहे थे। भारत माता के इन दोनों सपूतों की बाल्यावस्था एवं युवावस्था संघर्षमय ही रही। इन दोनों सपूतों ने जीवनपर्यंत संघर्ष में ही अपना जीवन व्यतीत किया और अंत में यह दोनों ही अपने उद्देश्यों में सफल भी हुये।

आज आजादी के अमृतोत्सव के लगभग 77 वर्ष पूर्ण हो चुके हैं और विश्व में भारत की उन्नति और विकास तथा भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों और परंपराओं पर एक दृष्टि डालते हैं तो डॉ. अम्बेडकर ने जिस वैचारिक चिंतन का बीज-बपन संविधान के निर्माण में किया था, उसी का सुपरिणाम है कि आज हम एक नया, नवीन, नव-जागरण वाला, आधुनिक और उत्तर-आधुनिकता से संपन्न भारत को अपने समक्ष उपस्थित पाते हैं।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर के भविष्य के प्राक्कथन और परिकल्पनाओं पर एक नज़र डाले तो हम कह सकते हैं कि आज देश में अनेक स्थान और संस्थान ऐसे हैं जहाँ शिखर पदों पर हाशिये पर खड़े उपेक्षित एवं शोषित समाज के लोग उपस्थित है, चाहे वह देश का राष्ट्रपति हो, राज्यपाल, मुख्यमंत्री, लोकसभा अध्यक्ष, अनेक विश्वविद्यालय के कुलपति, न्यायाधीश, प्रशासन, साहित्य, कला, संगीत, धर्म, दर्शन, नाटक, सिनेमा आदि क्षेत्रों से जुड़े लोग हो। हमें डॉ. अम्बेडकर के उस सपने का स्मरण सहज ही हो आता है जो उन्होंने एक नये भारत की परिकल्पना आज़ादी के पश्चात् की थी। भारत के लिये यह सौभाग्य है कि जो प्रतिभाएं हमारे सामने उद्घाटित नहीं हो पा रही थी, वे भी उद्घाटित हुयीं और जो भ्रामक मान्यतायें थी, वे खंडित भी हुयीं। डॉ. अम्बेडकर ऐसे व्यक्तित्व के धनी थे जो शताब्दियों में पैदा होते हैं और हमारे देश का यह सौभाग्य है कि उन्होंने राष्ट्र के लिये एक उज्ज्वल और प्रशस्त भविष्य की परिकल्पना करके उसकी आधारशिला रखी। डॉ. अम्बेडकर का चिंतन सार्वकालिक, सर्वदेशीय होने के चलते जितना प्रासंगिक तत्कालीन समय में था, उतना ही आज के समय में भी है। अतएव उनकी प्राथमिकता किसी भी समाज के लिये अक्षुण्ण बनी रहेगी।

ऐसे महान् और विराट् व्यक्तित्व को हम शत-शत नमन करते हैं, जिन्होंने हाशिये पर खड़े उपेक्षित और शोषित वर्ग को जागृत करते हुये राष्ट्र के विभिन्न आंदोलनों में उनकी भूमिका निश्चित करते हुये आगे बढ़ने की प्रेरणा दी। भारतीय संविधान जिसका निर्माण उनके माध्यम से, उनके कर-कमलों से हमारे सामने हो सका, वही संविधान आज पूरे देश को पूरी गंभीरता के साथ उन्नयन की ओर लेकर आगे चल रहा है। ऐसे दिव्य व्यक्तित्व को हमारा पूरा देश, पूरी मानव सृष्टि, पूरी मानवता सश्रद्ध नमन करती है। निश्चित रूप से आज जब भारत के विकासोन्मुख होने की स्थितियों का हम आकलन करते हैं तो कह सकते हैं कि बाबासाहेब अम्बेडकर ने इस दिशा और क्षेत्र में अविस्मरणीय और स्तुत्य अवदान दिया है। वास्तव में, डॉ. भीमराव अम्बेडकर भारतीय संस्कृति के उन्नयन तथा भारतीय मूल्यों के पुनर्व्याख्याता के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित होते हैं। जहाँ भारत की स्वतंत्रता-प्राप्ति का श्रेय महात्मा गांधी को जाता है, वही उसके लिए एक विधि संहिता तैयार करने का श्रेय उनके कटु आलोचक और हमारे संविधान के महान् निर्माता डॉ. अम्बेडकर को जाता है। वे न केवल संविधान सभा, अपितु पूरे राष्ट्र की कृतज्ञता के हकदार है, क्योंकि कृतज्ञता ज्ञापित करना दुर्लभ कार्य है। उपकार करने वाले तो बहुत मिलेंगे, लेकिन उपकृत मानने वाले विरले मिलते हैं। हम सभी भारतवासी डॉ. भीमराव अम्बेडकर अर्थात् बाबासाहेब के अवदान के प्रति कृतज्ञ हैं और उन्हें बारंबार नमन करते हैं।

ग्रंथ सूची

1. मकवाणा, किशोर : डॉ. अम्बेडकर : जीवन-दर्शन, प्रकाशन की तिथि : 2019, प्रभात प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नयी दिल्ली।
2. गुप्ता, शुभम : जीवनी : डॉ. भीमराव अम्बेडकर, प्रकाशन की तारीख : 14 अप्रैल, 2021, प्रभाकर प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नयी दिल्ली।
3. किशोर, पंकज : भारत रत्न डॉ. भीमराव अम्बेडकर, प्रकाशन की तारीख : फरवरी, 2021, प्रभात प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नयी दिल्ली।
4. क्रिस्टोफ़ जाफ्रलो : भीमराव अम्बेडकर : एक जीवनी, हिंदी अनुवाद : योगेश दत्त, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नयी दिल्ली।

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Healthcare Issues in the Hilly Regions of Kumaon Division, Uttarakhand: An analysis of Recent Protests

Rakesh Joshi
Research Scholar, Department of Public Administration
Uttarakhand Open University, Haldwani

Abstract

The hilly regions of Kumaon region of Uttarakhand witnessed sustained public protests during 2024-2025 over healthcare deficits. The paper examines the "Operation Swasthya" movement from Chauhutiya, Almora, contextualising it within documented specialist doctor shortages, equipment deficits, and skewed resource allocation. Drawing on Comptroller and Auditor General (CAG) audit reports, judicial interventions, and media documentation, the analysis identifies structural factors: absence of specialist recruitment policy, non-compliance with Indian Public Health Standards (IPHS), and the hill plain divide. The protests represent a reckoning with unfulfilled promises of statehood and demand fundamental restructuring.

Keywords: *Uttarakhand, Kumaon, healthcare protests, Operation Swasthya, infrastructure, hill-plain divide*

Introduction

Uttarakhand achieved statehood on November 9, 2000, with the mandate of delivering better governance and essential services, including healthcare, to the neglected hill regions of Garhwal and Kumaon. Twenty-five years later, this mandate remains largely unfulfilled. During 2024–2025, Kumaon's hilly districts became the epicentre of the most significant popular mobilization in the state's recent history: a 300-kilometer foot march from Chaukhutia (Almora) to Dehradun, hunger strikes, jal satyagraha (water protests), and indefinite dharnas under the banner of "Operation Swasthya" (Frontline, 2025; The Print, 2025). These protests were not spontaneous outbursts. They emerged from years of systemic neglect documented in multiple CAG audit reports, judicial observations, and grassroots activism. This paper analyses the healthcare crisis in Kumaon's hilly regions, the triggers for the 2024–2025 protests, the government's response, and the implications for health policy in mountainous states.

Healthcare Infrastructure in Kumaon

Uttarakhand operates 578 Primary Health Centres (PHCs), 81 Community Health Centres (CHCs), 21 Sub-District Hospitals (SDHs), and 13 District Hospitals across 13 districts. Resource distribution,

however, heavily favours the four plains districts over the nine hill districts (CAG, 2024). The CAG Performance Audit Report (published 2024) documents this disparity with precision. In plains districts, specialist doctor shortages against sanctioned posts stood at 50%; in hill districts, this reached 70%. The report noted that "because of a shortage of specialist doctors, people in the hills relied on primary and secondary healthcare facilities and were deprived of critical care treatment" (CAG, 2024, p. 45; The Indian Express, 2025).

Nursing staff shortages follow a similar pattern. In hilly districts, staff nurse shortages ranged from 57% in Pithoragarh to 75% in Chamoli. Plains districts fared better: 35% in Dehradun and 63% in Nainital. X-ray technician shortages in hill districts ran between 50% (Champawat) and 75% (Rudraprayag), compared to 0% in Dehradun and 49% in plains Nainital (CAG, 2024). The CAG report identifies the complete absence of a recruitment policy for specialist doctors as a critical gap. While the state framed a policy for General Duty Medical Officers (GDMOs) in 2014, no corresponding policy exists for specialists. This has produced catastrophic vacancies: 94% in CHCs, 45% in SDHs, and 30% in District Hospitals against IPHS norms (CAG, 2024; Indian Express, 2025). CHCs are mandated to maintain four specialists: surgeon, physician, gynaecologist, and paediatrician. In test-checked CHCs, "all specialist OPD services were not available" (CAG, 2024, p. 38). Patients requiring emergency surgeries, maternity care, or paediatric intervention face mandatory referral to higher-level facilities, often hours away on treacherous mountain roads. The CAG audit found that none of the District Hospitals conducted all diagnostic services under IPHS norms. In test-checked CHCs, X-ray services were unavailable in multiple facilities, ultrasonography was absent in all selected CHCs, and pathology tests fell significantly below norms (CAG, 2024).

At Chaukhutia CHC, the flashpoint of the 2024 protests, residents reported missing basic diagnostic equipment. "Even for emergencies like childbirth, we have to travel miles to Ranikhet or Haldwani," stated Kamla Devi. Protesters alleged several pregnant women lost unborn children due to lack of timely care (The Times of India, 2025a).

Operation Swasthya

The immediate precursor was the death of one-year-old Shubhanshu Joshi in July 2024. The child, son of an Army officer from Gwaldam (Chamoli), showed severe dehydration and was taken to a PHC. He was shunted between four hospitals, travelling Bageshwar, Almora, and finally Haldwani, dying in ICU six days later. No paediatrician was present at the PHC; no paediatric ICU existed at the district hospital (The Print, 2025; The Times of India, 2025b). Chief Minister Pushkar Singh Dhami posted on X: "It appears that negligence has been shown by officials... Immediate investigation orders have been given to the Kumaon Commissioner" (The Print, 2025). No substantive action followed. On October 2, 2024, Chaukhutia residents launched "Operation Swasthya" under retired Army jawans Bhuvan Kathayat and Heera Singh Patwal. The initial sit-in outside the local CHC demanded a gynaecologist, paediatrician, and modern diagnostic equipment (The Times of India, 2025b).

The agitation escalated rapidly. On October 7, Patwal began a "Jal Satyagraha" in the Ramganga river, standing waist-deep for over three hours and threatening "Jal Samadhi" (water burial). Eighty-five-year-old Bache Singh began an indefinite hunger strike; ten more villagers joined. By October 10, Bhupal Singh Bora, Parvati Mishra, and Dinesh Paliwal launched an indefinite hunger strike,

while 15 others maintained a relay fast. Kathayat's health deteriorated; an ECG revealed heart changes. Patwal threatened to shoot himself if concrete action was not taken, prompting high police alert (The Times of India, 2025c). On October 16, 2024, thousands marched through Chaukhutia, joined by residents from Almora, Chamoli, Haldwani, and Delhi migrants. Shops observed a voluntary bandh. Chanting "Swasthya sevayen bahal karo!" (Restore health services!), the crowd marched to the tehsil office (The Times of India, 2025a).

The government responded with promises: the DGHS announced a proposal to upgrade the CHC from 30 to 50 beds. Protesters were unconvinced. Kathayat noted the government had issued a similar order the previous year for a new block, which remained unfulfilled. "We don't need a new building; we need doctors to serve in the existing one," he said (The Indian Express, 2025).

On October 24, Kathayat and scores of protesters embarked on a 300-kilometer foot march to Dehradun via Gairsain, Srinagar, and Rishikesh. Police stopped the march near Rispana Bridge on November 4. By then, the protest had entered its 34th day. Chief Minister Dhami met a delegation, assuring demands would be "looked into seriously." The delegation described the meeting as "disappointing." "It feels like we are returning empty-handed," said Shankar Bisht (Hindustan Times, 2025; The Times of India, 2025d). The march was, as Frontline (2025) noted, "the longest one undertaken by its people to press their demands" in Uttarakhand's history.

Broader Protests and NHM Workers' Strike

The Chaukhutia movement sparked parallel agitations. In Ghansali (Tehri Garhwal), the "Ghansali Swasthya Jan Sangharsh Morcha" launched after 21-year-old Anisha Rawat died of haemorrhage in September 2024 following a poorly managed delivery at the local PHC. In Chamba, activists led indefinite dharnas. In Bhikiyasain (Almora), talks collapsed. The death of 23-year-old Neetu Panwar from Shrikote (Chamoli) on November 18, 2024, triggered fresh outrage. She was the second person to die after being turned away from the same centre within weeks (The Print, 2025).

Parallel to public protests, healthcare workers struck. On July 1, 2025, over 370 outsourced National Health Mission (NHM) workers in Tehri, Almora, and Nainital began a work boycott, citing three months of unpaid salaries. Their EPF contributions had not been deposited since January 2025 (The Times of India, 2025e; World Socialist Web Site, 2025). The strike in Almora and Nainital directly impacted service delivery when the region was already reeling from doctor shortages.

Judicial Intervention

The crisis reached the Uttarakhand High Court through a Public Interest Litigation (PIL). During a November 2025 hearing, the State Legal Services Authority (SLSA) highlighted the "acute shortage of basic facilities in the state's hilly base and district hospitals," functioning merely as referral centres (The Times of India, 2025f). The court directed the health secretary and DGHS to appear at the next hearing. SLSA counsel Dushyant Mainali submitted that "in a welfare state, the primary duty of the government is to secure the welfare of the people. Providing adequate medical facilities... is an essential part of the obligations undertaken by any government. Article 21 imposes an obligation on the State to safeguard the right to life of every person" (The Times of India, 2025f). The petition noted that in far-flung district headquarters such as Pithoragarh, Bageshwar, Champawat, and Almora, higher centres require "at least 6 to 9 hours of a harsh journey for an ailing resident from remote

areas." Further referral to Haldwani or Dehradun means "their chances of survival reduce substantially" (The Times of India, 2025f).

Government Response and Structural Limitations

The government combined administrative measures with political assurances. On October 16, 2024, it announced upgrading Chaukhutia CHC to a 50-bed SDH and equipping it with a digital X-ray. Mobile Medical Unit vans were launched (The Print, 2025; The Times of India, 2025d). These measures failed to address structural drivers. The CAG report identified that the transfer policy for doctors was relaxed and did not comply with mandatory transfer after four years from easy access to tough terrain. Doctors remain indefinitely in plains postings, exacerbating hill shortages (CAG, 2024). The absence of a specialist recruitment policy remains unaddressed. CHCs will continue functioning without mandated specialists regardless of building upgrades.

Analysis

The protests must be understood within Uttarakhand's founding narrative. Historian Shekhar Pathak observed: "When the State was formed, the people... had expectations about... access to quality healthcare and education... secure livelihoods so that outmigration could be stopped. There were tremendous possibilities. But we have failed to a large extent" (Frontline, 2025). Sunita Rawat, district chairperson of the Uttarakhand Kranti Dal's women's wing, articulated the driving sentiment: "Why was Uttarakhand formed? We felt neglected. We believed a separate state would bring better development to this hilly region. But what we are witnessing today is that our situation has only worsened" (The Print, 2025).

Uttarakhand faces severe outmigration from hill districts. The inability to provide basic healthcare accelerates this exodus. The protests drew support not only from current residents but from Delhi migrants retaining familial ties to the hills (The Print, 2025).

The crisis disproportionately affects women. Maternal mortality is exacerbated by absent gynaecologists and emergency obstetric care. Anisha Rawat's death in Ghansali, Neetu Panwar's death in Chamoli, and reported unborn child losses in Chaukhutia highlight the gendered nature of healthcare deprivation. Women activists like Sunita Rawat have been at the forefront, drawing parallels between current struggle and the statehood movement (The Print, 2025; The Times of India, 2025a).

Conclusion

The healthcare protests in Kumaon's hilly regions represent a watershed in Uttarakhand's political history. The "Operation Swasthya" movement, triggered by preventable deaths and sustained by decades of systemic neglect, mobilized thousands across caste, class, and political lines. The 300-kilometer march, hunger strikes, and judicial interventions brought national attention to a crisis that official audits documented for years but failed to resolve.

The CAG reports provide irrefutable evidence: 70% specialist doctor shortages in hill districts versus 50% in plains; 75% nurse shortages in Chamoli versus 35% in Dehradun; complete absence of specialist recruitment policy. The NHM workers' strike reveals a demoralized, unpaid existing

workforce. The High Court acknowledges that Article 21 is being systematically violated.

For Kumaon, the path forward demands fundamental restructuring: health resource allocation reform, mandatory hill postings with adequate incentives, a robust specialist recruitment policy, and IPHS compliance accountability. As Bhuvan Kathayat declared, "This journey is meant to wake up the government so that every mountain resident can get their right to healthcare" (The Times of India, 2025g). Whether that awakening produces lasting change remains the critical question as Uttarakhand moves beyond its silver jubilee.

References

Comptroller and Auditor General of India. (2024). *Report No. 3 of the year 2024: Performance audit of public health infrastructure and management of health services, Government of Uttarakhand*. https://cag.gov.in/webroot/uploads/download_audit_report/2024/Report-No.-3-of-2024_PA-on-PHIMHS-GoUK_English-067b7164ba564a0.20810756.pdf

Frontline. (2025, December 10). Uttarakhand at 25: *Why the hills still feel abandoned*. Frontline. https://frontline.thehindu.com/the-nation/uttarakhand-silver-jubilee-development-failures/article70352186.ece

Hindustan Times. (2025, November 4). *Protesters who marched 300km over healthcare in hills stopped near Uttarakhand Assembly.* Hindustan Times. https://www.hindustantimes.com/cities/dehradun-news/protesters-who-marched-300km-over-healthcare-in-hills-stopped-near-uttarakhand-assembly-101762256368285.html

The Indian Express. (2025, October 26). *Tired of waiting for healthcare to reach them, scores of protesters are marching 300 kilometres to Dehradun*. The Indian Express. https://indianexpress.com/article/india/not-just-the-story-of-one-village-angered-by-lack-of-healthcare-villagers-embark-on-300-km-march-to-dehradun-10327092/

The Indian Express. (2025, October 31). *March to Dehradun: The state of healthcare in Uttarakhand 25 years after its formation*. The Indian Express. https://indianexpress.com/article/explained/march-dehradun-healthcare-uttarakhand-10336366/

The Print. (2025, November 19). *Uttarakhand is fighting its biggest battle in 25 years. It's hills vs plains again*. The Print. https://theprint.in/ground-reports/uttarakhand-is-fighting-its-biggest-battle-in-25-years-its-hills-vs-plains-again/2787296/

The Times of India. (2025a, October 16). *Thousands march in Kumaon for better health infra, several on hunger strike for 2 weeks now*. The Times of India. https://timesofindia.indiatimes.com/city/dehradun/thousands-march-in-kumaon-for-better-health-infra-several-on-hunger-strike-for-2-weeks-now/articleshow/124586557.cms

The Times of India. (2025b, October 7). *Upset with 'poor' healthcare facilities, villagers launch 'Op Swasthya'*. The Times of India. https://timesofindia.indiatimes.com/city/dehradun/upset-with-poor-healthcare-facilities-villagers-launch-op-swasthya/articleshow/124369091.cms

The Times of India. (2025c, October 10). *Protests over poor health facilities in Almora's Chaukhutia enter 8th day.* The Times of India. https://timesofindia.indiatimes.com/city/dehradun/protests-over-poor-health-facilities-in-almoras-chaukhutia-enter-8th-day/articleshow/124432053.cms

The Times of India. (2025d, November 5). *'Operation Swasthya' protesters' march to Assembly stopped.* The Times of India. https://timesofindia.indiatimes.com/city/dehradun/operation-swasthya-protesters-march-to-assembly-stopped/articleshow/125092510.cms

The Times of India. (2025e, July 2). *Health workers strike over 'no pay' in 3 dists*. The Times of India. https://timesofindia.indiatimes.com/city/dehradun/health-workers-strike-over-no-pay-in-3-dists/articleshow/

122203978.cms

The Times of India. (2025f, November 14). *HC seeks govt explanation over inadequate med facilities in hilly dists.* The Times of India. https://timesofindia.indiatimes.com/city/dehradun/hc-seeks-govt-explanation-over-inadequate-med-facilities-in-hilly-dists/articleshow/125333421.cms

The Times of India. (2025g, October 25). *Fed up with lack of healthcare in hills, Kumaon villagers launch 300km-long foot march to Dehradun*. The Times of India. https://timesofindia.indiatimes.com/city/dehradun/fed-up-with-lack-of-healthcare-in-hills-kumaon-villagers-launch-300km-long-foot-march-to-dehradun/articleshow/124791432.cms

World Socialist Web Site. (2025, July 4). *India: Outsourced NHM workers in Uttarakhand strike over non-payment of wages.* World Socialist Web Site. Workers Struggles: Asia, Australia and the Pacific - World Socialist Web Site

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Synthesising Sustainable and Conceptual Fashion: A Multidisciplinary Framework for Regenerative Design

Navneet Kaur
Phd Scholar, Fashion Designing
Roll no - 252730004
Assistant professor in Faculty of Visual and Performing Arts,
Guru Kashi University

1. Abstract

This paper proposes a multidisciplinary framework to facilitate a systemic shift from extractive fashion models toward regenerative design. By synthesising conceptual design theory with biodesign and modular frameworks, the research explores how the industry can move beyond linear production and opaque material processes. Central to this transition is the integration of "living artefacts"—design outcomes such as *Biogarmentry* that sustain the biological activity of organisms—and modularity, which reframes garments as adaptable platforms. The study examines structured design process models, including the Double Diamond and the five-phase Design Thinking framework, alongside the four-phase cyclical model used by "fashion conceptualists." These models are synthesised to bridge the "fashion dualism" between innovative fabric development and garment construction. Furthermore, the paper highlights the role of Generative AI (GenAI) as a "co-researcher" for navigating complex scientific literature during the investigation phase and supporting future-oriented design exploration. Case studies in biofabrication, including lab-grown reptile skins and compostable bioplastics, illustrate the practical application of these frameworks. While these innovations offer promising pathways for sustainable fashion, the paper concludes by identifying limitations in systematic laboratory testing regarding the material-mechanical performance of bio-based textiles.

2. Introduction: The Crisis of Extractive Fashion

The contemporary fashion industry faces an urgent need to rethink its pedagogical and production frameworks. Historically, the sector has been defined by a dependence on extractive systems and linear production models, which have contributed significantly to ecological degradation and social inequity. To address these systemic complexities, "Biodesign" has emerged as a critical paradigm that integrates living systems, technological innovation, and ethical inquiry. This approach positions the designer as an active agent within complex ecological networks rather than an external "form-giver."In this evolving landscape, the role of the designer is increasingly defined by "futurology." As noted in multidisciplinary design theory, while scientists describe how the world *is* , designers suggest how it *may be* . This speculative inquiry is essential for imagining future fashion ecosystems

shaped by climate change and resource scarcity, enabling a shift toward regenerative models that sustain planetary well-being.

3. Theoretical Foundations of Conceptual Fashion

Conceptual fashion design, often termed "Idea Fashion," prioritises innovation and experimentation over commercial cycles. It serves as a medium for presenting the authentic nature of the internal self, prioritising personal sensation and enjoyment over external evaluation. "Fashion Conceptualists"—epitomised by designers such as Hussein Chalayan and Issey Miyake—are characterised by their adherence to personal philosophies and the integration of radically novel fabrics.These designers often navigate "fashion dualism," where the distinction between garment construction and fabric design is blurred. Successfully operating within this space requires high-level "conceptual skills"—specifically "inner qualities" of personal creativity—which differ fundamentally from traditional professional or managerial fashion skills. By embracing interdisciplinary practice at the edges of the discipline, conceptualists treat fashion as a culturally significant practice that extends methodologies into art, performance, and architecture.

4. Comparative Design Process Models

Sustainable fashion requires a structured pedagogical framework to manage the complexities of new material systems. Most models are rooted in the elementary "Analysis-Synthesis-Evaluation" framework. The creative process further relies on stages of "Incubation" (a subconscious period for refreshing the mind) and "Illumination" (the sudden grasping of the essential features of a design problem).To ground the "Inspiration" phase of conceptual designers, the empathy-driven phases of Design Thinking are integrated to manage the systemic complexity of modularity.| **Four-Phase Cyclical Model (Conceptual)** | **Five-Phase Modular Framework (User-Centred)** || ——— | ——— || **Investigation:** Clarifying requirements, self-mission, and inspiration sources (lifestyle, trends, history, architecture). | **Empathise:** Understanding user habits and values via surveys, interviews, and AEIOU observation. || **Interaction:** Building ideas through Pictorial (sketches, mood boards), Written (idea-trees), Memory, Expression, and Verbal (storytelling) means. | **Define:** Synthesising insights into a clear problem statement using Affinity Mapping and Persona Development. || **Development:** Focusing on Silhouette, Line Balance, Texture, Sizing/Fitting, and Material Composition. | **Ideate:** Generating diverse concepts using tools like Crazy 8s, SCAMPER, and Mind Mapping. || **Evaluation:** Judging outcomes (Positive/Negative) to inform informed corrections or "Positive Repeats" in the next cycle. | **Prototype:** Creating tangible products to test functionality using a Modular Test Matrix. || | **Test:** Collecting usability data and emotional response feedback from users. |

5. Biodesign Innovations and Biofabrication

Biodesign introduces "Living Artefacts"—outcomes that maintain biological activity during use. A primary example is *Biogarmentry*, a photosynthetic textile requiring hydration and light. This shift necessitates "reciprocal care practices" and "dynamic aesthetics," where the user becomes a steward of the garment's livingness.To replace extractive materials, the following biological systems are being explored:

- **Bacterial Cellulose and Microbial Pigments:** Investigated for aesthetic potential and measurable tensile strength as sustainable alternatives to synthetic dyes.

- **Mycelium-based Composites:** Utilising fungal networks (e.g., MOGU), these materials offer tunable density and thermal insulation. Properties are adjusted based on the growth substrate and processing methods.
- **Cellular Agriculture:** Production of "biofabricated skins" using tissue engineering. By growing collagen matrices or cultured animal cells, designers can create structurally consistent materials that eliminate the need for animal-derived leather.In this multidisciplinary field, **Generative AI (GenAI)** acts as a "co-researcher." It assists designers in the Investigation phase by interpreting complex scientific literature, modeling biological processes, and translating technical data into actionable design knowledge without replacing creative authorship.

6. Sustainable Techniques: Zero-Waste and Modularity

Sustainable fashion seeks to extend product lifespans through modularity and waste reduction. **Modular Fashion Design** treats garments as "adaptable platforms" composed of interchangeable parts, allowing for repair, customisation, and emotional durability.Core techniques and systems include:

- **Physical Attachment Systems:** Zippers, snaps, magnets, and velcro to connect modules.
- **Detachable Modules:** Interchangeable sleeves, collars, and panels for seasonal adaptability.
- **Convertible Components:** Reversible parts or elements that shift function (e.g., a jacket transforming into a bag).
- **Digital Configuration Tools:** Pre-production tools that allow users to select and preview modular combinations.Complementing modularity is the **Zero-Waste** approach, focusing on transformation, aesthetics, and upcycling. Specific methods used to generate sustainability awareness include the use of repurposed textile swatches and laser engraving on bioplastics to achieve decorative effects without additive waste.

7. Case Study Analysis: Applied Sustainable Models

Sauria: Ethical Alternatives to Reptile Skin

- **Focus:** Tissue culture and biofabricated materials.
- **Outcomes:** Located in Bogotá, Colombia, this project addresses the nation's status as a major reptile leather exporter. By using non-lethal biopsies to expand cells in nutrient media, Sauria creates lab-grown skins that simulate scale patterns, eliminating wildlife exploitation and habitat destruction.

Ossia: Biodegradable Rainwear for Festival Fashion

- **Focus:** Compostable bioplastic and circular design.
- **Outcomes:** Developed for large-scale music events in Bogotá, this project was the recipient of the **Lápiz de Acero Verde Award (2025)** . It utilizes starch-based polymers and laser engraving on bioplastics combined with repurposed textile swatches to create short-term, fully compostable garments.

Balance Borealis: Biodegradable Fluorescent Fashion

- **Focus:** Passive luminescence for theatrical performance.

- **Outcomes:** This Bogotá-based project utilizes quinine-based solutions (from tonic water) to achieve a blue glow under UV light. By relying on quinine's photophysical behavior, the project avoids dangerous "chemiluminescence" (hydrogen peroxide/sodium bicarbonate), ensuring material safety and compostability.

Dressed to Persuade (Seeing Red)

- **Focus:** Modular zero-waste exploration.
- **Outcomes:** A silk dupioni gown designed for high-glamour advertising. It employs a modular approach where a removable train and jacket reveal hidden grommets and straps, extending the garment's aesthetic utility while exploring zero-waste pattern configurations.

8. User-Centred Design and Ethical Responsibility

Successful modular design requires alignment with the values of Gen Z and Millennials, who prioritise personalisation. Tools such as **Empathy Mapping** and **Persona Development** are vital for ensuring transformable garments resonate emotionally and meet the functional habits of these demographics.This framework redefines the designer as a **"Design Ecologist"** and **"Ethical Agent."** The designer acts as a steward of living systems, navigating technological uncertainty to create futures that are regenerative and scientifically informed, moving beyond the creation of isolated objects to the management of living ecologies.

9. Conclusion

The integration of conceptual models, biodesign paradigms, and modular frameworks provides a robust and adaptable pathway for the fashion industry. By bridging the gap between scientific research and creative application, designers can address contemporary ecological crises. However, a significant limitation remains: the urgent need for systematic laboratory testing. Future research must focus on quantifying the material-mechanical performance—specifically tensile strength, tear resistance, water permeability, and durability—of bio-based materials to ensure their industrial scalability.

References

- Au, J.S. and Au, Y.H. (2018) 'Creation of Conceptual Fashion Design Process Model', *Journal of Fashion Technology & Textile Engineering* , 6(2).
- Moretz, C. (2022) 'Sustainable Fashion Design Exploration: Transformation to Zero-Waste', *Sustainable Fashion Design Exploration* .
- Nguyen, T.T. and Yang, C. (2025) 'Toward Sustainable Fashion Futures: A Preliminary Study of a User-Centered Framework for Modular Design', in Chang, C.-Y., Chen, C.-H., and Hsu, Y. (eds.) *IASDR 2025: Design Next* , 2-4 December, Taipei, Taiwan.
- Obregón, C. and Danies, G. (2026) 'Biodesign rethinking fashion through biology and technology', *Journal of Textile Engineering & Fashion Technology* , 12(1), pp. 11–16. doi: 10.15406/jteft.2026.12.00443.

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

भारत में वामपंथी आंदोलन : उदय, विकास और समकालीन प्रासंगिकता

डॉ. बिन्दु भूषण सिंह
पूर्व शोध अध्येता, विश्वविद्यालय इतिहास विभाग,
बी०आर०ए०बिहार विश्वविद्यालय मुजफ्फरपुर

सारांश

भारत में वामपंथी आंदोलन एक ऐतिहासिक और वैचारिक धारा है, जिसने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम, स्वतंत्रता-पश्चात् राजनीति और सामाजिक-आर्थिक नीतियों को गहराई से प्रभावित किया है। यह विचारधारा आर्थिक समानता, श्रमिक अधिकारों और शोषित वर्गों के सशक्तिकरण पर केंद्रित है। वामपंथी राजनीति का उद्देश्य समाज में आर्थिक और सामाजिक असमानता को मिटाना है, जो मार्क्सवादी, लेनिनवादी और समाजवादी विचारधाराओं से प्रेरित है। भारत में इस आंदोलन का उदय 20वीं सदी के प्रारंभ में औपनिवेशिक शोषण और वैश्विक समाजवादी आंदोलनों के प्रभाव के रूप में हुआ। 1917 ई. की रूसी क्रांति से प्रभावित होकर भारतीय क्रांतिकारियों ने मार्क्सवाद को सामाजिक-आर्थिक न्याय के मार्ग के रूप में देखा। 17 अक्टूबर, 1920 ई. को ताशकंद में एम.एन. रॉय द्वारा भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी (CPI) की स्थापना की गई। औपचारिक रूप से, दिसंबर 1925 ई. में कानपुर में हुए अखिल भारतीय कम्यूनिस्ट सम्मेलन के साथ भारत में कम्युनिस्ट पार्टी का विधिवत गठन हुआ। प्रारंभिक नेता एम.एन.रॉय, मुजफ्फर अहमद, एस.ए. डांगे, सिंगारवेलु चेट्टियार और अंबानी मुखर्जी जैसे प्रमुख नेताओं ने इसे आगे बढ़ाया। कम्युनिस्टों ने ट्रेड यूनियन आंदोलन, किसान सभाओं और मजदूरों को संगठित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। मेरठ षड्यंत्र केस 1929 ई. के माध्यम से ब्रिटिश सरकार ने इसे कुचलने की कोशिश की, लेकिन यह जन-आंदोलन के रूप में बढ़ता गया। विशेषज्ञों के अनुसार, वामपंथ को अपनी विचारधारा को आधुनिक संदर्भों के अनुसार बदलने और युवाओं से जुड़ने की आवश्यकता है।

मुख्य शब्द : वामपंथी आंदोलन, ऐतिहासिक, समाजवादी, मार्क्सवाद, सामाजिक असमानता।

परिचर्चा

भारत में वामपंथी आंदोलन आधुनिक उद्योगों के विकास और दूसरे देशों जैसे ग्रेट ब्रिटेन तथा रूस में समाजवादी आंदोलनों के प्रभाव के परिणामस्वरूप शुरू हुआ और बढ़ा। औद्योगिक विकास के फलस्वरूप कुछ जगहों जैसे बम्बई, कलकत्ता और मद्रास में मजदूरों की संख्या बहुत अधिक बढ़ी। धीरे-धीरे मजदूर बेहतर कार्य-परिस्थितियों तथा ऊंचे वेतन के लिए अपने आपको संगठित करने लगे। इससे ट्रेड यूनियनों की स्थापना हुई। ट्रेड यूनियनवाद की वृद्धि ने वामपंथी पार्टियों की स्थापना के लिए पृष्ठभूमि तैयार की।

प्रथम विश्व-युद्ध की समाप्ति तक भारतीय उद्योगों में मजदूरों की हड़ताल एक विरल घटना थी और मजदूर राजनीतिक

रूप से जागरूक नहीं थे। प्रथम विश्व-युद्ध की समाप्ति के बाद से उद्योगों में लगातार हड़तालें हुई और बड़ी संख्या में ट्रेड यूनियनें बनीं। प्रथम विश्व-युद्ध के बाद गंभीर मजदूर अशांति, प्रमुखतः युद्ध के कारण मूल्यों में वृद्धि तथा मालिकों द्वारा वेतन न बढ़ाने के कारण थी। आर्थिक हितों की मांग करते हुए मजदूर अपनी राजनीतिक भूमिका के प्रति भी जागरूक हो गए। बम्बई जैसे शहरों में मजदूरों ने दमनकारी रौल्ट ऐक्ट के खिलाफ हड़तालें आयोजित की। राष्ट्रवादी नेता भी मजदूर वर्ग के आंदोलन में उत्साह के साथ रूचि लेने लगे। अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस का पहला अधिवेशन बम्बई में अक्टूबर, 1920 ई. में राष्ट्रवादी नेता लाला लाजपत राय की अध्यक्षता में हुआ।

रूस में बोल्शेविक क्रांति की सफलता तथा कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की स्थापना को देखते हुए, भारत में या विदेशों में काम कर रहे कुछ भारतीय क्रांतिकारियों और बुद्धि जीवियों ने भारत में भी कम्यूनिस्ट पार्टी की स्थापना का विचार किया। एम. एन. राय (मानवेन्द्र नाथ राय) ऐसे प्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने भारत के बाहर ताशकंद में 1920 ई. में कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के तत्वावधान में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी बनाई।

मानवेन्द्र नाथ राय का वास्तविक नाम नरेन्द्रनाथ भट्टाचार्य था। उनका जन्म 6 फरवरी, 1889 ई. को बंगाल के 24 परगना जिले के उरबलिया गांव में एक गरीब ब्राह्मण परिवार में हुआ। आरम्भिक जीवन में वे एक क्रांतिकारी राष्ट्रवादी थे। उन्होंने अपनी शिक्षा अरबिन्दो घोष द्वारा स्थापित राष्ट्रीय विश्वविद्यालय में ग्रहण की। प्रथम विश्व-युद्ध के दौरान वे जर्मन हथियारों की मदद से भारत में हथियारबंद क्रांति लाने में व्यस्त थे। अपने क्रांतिकारी दौर में वे अनेकों देशों में घूमे जैसे मलाया, इंडोनेशिया, इंडो-चीन, फिलीपींस, जापान, कोरिया, चीन तथा अमरीका। वे 1916 ई. की गर्मियों में अमरीकी शहर सेन फ्रांसिस्को पहुंचे। अमरीका प्रवास के दौरान उन्होंने अपना नाम बदल कर मानवेन्द्र नाथ राय रख लिया। यहां उन्होंने मार्क्सवादी साहित्य पढ़ा। धीरे-धीरे वे राष्ट्रवाद से अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिज्म की ओर उन्मुख हुए। अमरीका के संयुक्त शक्तियों यानी ब्रिटेन तथा फ्रांस के साथ प्रथम विश्व-युद्ध में शामिल हो जाने के बाद, राय को वहां ज्यादा देर तक ठहरना असुरक्षित लगा। वे मैक्सिको चले गए। यहां उनका सम्पर्क रूस के कम्युनिस्ट राजनीतिक माइकल बोरोदिन से हुआ। राय की बोरोदिन से दोस्ती हो गई और उन्होंने बोरोदिन से कम्युनिज्म की दीक्षा ली तथा मैक्सिको की कम्युनिस्ट पार्टी को संगठित करने में उनकी मदद की। मैक्सिको से वे रूसी कम्युनिस्ट नेता लेनिन के आह्वान पर मॉस्को चले गए। राय की धारणा थी कि बुर्जुआ राष्ट्रवादी, प्रतिक्रियावादी (प्रगति के खिलाफ) हैं, साथ ही यह भी कि कम्युनिस्टों को साम्राज्यवाद के खिलाफ अपने संघर्ष को मजदूरों तथा किसानों की पार्टियां बनाकर स्वतंत्र रूप से चलाना चाहिए।

अक्टूबर, 1920 ई. में एम. एन. राय सोवियत रूस स्थित ताशकंद में आए, जो अफगानिस्तान से अधिक दूर नहीं है। वहां उन्होंने भारतीय फ्रंटियर जनजाति के लोगों को अंग्रेज सरकार के खिलाफ सशस्त्र क्रांति के उद्देश्य से सैनिक प्रशिक्षण देने के लिए सैनिक स्कूल की स्थापना की। साथ ही भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना भी की। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी को 1921 ई. में कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के साथ संबंधित किया गया। इसी बीच तुर्की के सुल्तान (जो खलीफा या मुसलमानों के धार्मिक प्रमुख थे) के प्रति अंग्रेज सरकार के विद्वेष से तंग आकर हजारों मुसलमान हिजरत करके ताशकंद में राय के साथ शामिल हो गए। वहां उन्होंने नए स्थापित मिल्ट्री स्कूल में सैनिक प्रशिक्षण लिया। जब मई, 1921 ई. में यह स्कूल बंद हो गया तो मुहाजिर मॉस्को के पूर्व में स्थित मेहनतकशों की कम्युनिस्ट यूनिवर्सिटी में पढ़ने चले गए। वहां उन्होंने मार्क्स और लेनिन के विचारों का शिक्षण प्राप्त किया। मास्को में प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद मुहाजिर भारत लौट आए। उनकी वापसी पर वे पुलिस द्वारा पकड़ लिए गए और जांच-पड़ताल के लिए पेशावर लाए गए। यह जांच पेशावर षड्यंत्र केस (1922-23) के रूप में जानी जाती है। इस जांच के परिणामस्वरूप दो प्रमुख मुहाजिरों—मियां मोहम्मद अकबर शाह और गौहर रहमान खान को दो साल कठोर कैद तथा अन्य लोगों को एक साल कठिन परिश्रम की सजा दी गई।

इसी बीच, वीरेन्द्र नाथ चट्टोपाध्याय, भूपेन्द्र नाथ दत्त तथा बरकतउल्लाह जैसे क्रांतिकारी, जो भारत के बाहर काम कर रहे थे, मार्क्सवादी हो गए। इस दौरान भारत के अंदर भी कुछ कम्युनिस्ट ग्रुप उभरे। महात्मा गांधी द्वारा असहयोग आंदोलन स्थगित करने के बाद इसके कुछ समर्थक मार्क्सवाद की ओर मुड़ गए।

बम्बई में श्रीपद अमृत डांगे द्वारा एक कम्युनिस्ट ग्रुप संगठित किया गया। डांगे का जन्म अक्टूबर, 1899 ई. को नासिक में एक मराठी ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनके पिता एक सॉलिसिटर के पास क्लर्क थे। उन्होंने विल्सन कॉलेज में शिक्षा प्राप्त की थी। जब गांधीजी ने असहयोग आंदोलन शुरू किया तब डांगे अपनी पढ़ाई छोड़कर उसमें शामिल हो गए। असहयोग आंदोलन के स्थगित होने के तुरंत बाद ही कम्युनिस्ट हो गए। 1921 ई. में उन्होंने 'गांधी वर्सेज लेनिन' नामक एक किताब प्रकाशित की, जिसमें उन्होंने समाजवाद के प्रति अपने झुकाव को प्रदर्शित किया। 1922 ई. में उन्होंने एक कम्युनिस्ट पत्रिका "दी सोशलिस्ट" का सम्पादन शुरू किया। इस पत्रिका के 16 सितंबर, 1924 ई. के एक अंक में डांगे ने इंडियन नेशनल कांग्रेस की इंडियन सोशलिस्ट लेबर पार्टी के बनने की घोषणा की। शायद डांगे चाहते थे कि कम्युनिस्ट एक ग्रुप के रूप में कांग्रेस के अंदर ही काम करें। मई 1923 ई. में मद्रास के सिंगारावेलु चेट्टियर नामक एक वृद्ध वकील ने, जो अपने आपको कम्युनिस्ट मानते थे, "लेबर किसान पार्टी" बनाने की घोषणा की। दिसम्बर 1922 ई. को हुए इंडियन नेशनल कांग्रेस के 'गया अधिवेशन' में उन्होंने राष्ट्रीय स्वतंत्रता पर एक प्रस्ताव रखा और असहयोग आंदोलन को स्थगित करने पर गांधी जी की आलोचना की। साथ ही सुझाव दिया कि असहयोग आंदोलन को मजदूरों की राष्ट्रीय हड़ताल के साथ मिलाना चाहिए।

1925-26 ई. में बंगाल में मुज्जफर अहमद ने काजी नजरूल इस्लाम की सहायता से लेबर स्वराज पार्टी (जिसे शीध्र ही किसानों तथा मजदूरों की पार्टी के रूप में नया नाम दिया गया था) बनाई। काजी नजरूल इस्लाम, जो उस समय 49वीं बंगाल रेजिमेंट में हवलदार थे, बाद में एक बड़े कवि के रूप में प्रसिद्ध हुए। लाहौर और कानपुर जैसे शहरों में भी कम्युनिस्ट पार्टियां बनीं। इस दौरान एम. एन. राय गुप्त दूतों द्वारा भारत के कम्युनिस्टों के साथ सम्पर्क बनाए हुए थे। 2 नवम्बर 1922 ई. को एम. एन. राय ने भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के लिए एक दोहरे संगठन की योजना की रूपरेखा बताते हुए डांगे को पत्र लिखा। इस योजना के अनुसार, एक सार्वजनिक संगठन तथा एक गुप्त दल बनाने का सुझाव दिया गया। पूर्ववर्ती भारतीय कम्युनिस्टों को, अपने प्रति अंग्रेज सरकार के विद्वेष के कारण, एक अखिल भारतीय संगठन बना पाना मुश्किल लग रहा था। 1924 ई. में अंग्रेज सरकार चार प्रमुख कम्युनिस्टों के खिलाफ षड्यंत्र का केस शुरू किया। वे चार कम्युनिस्ट थे—मुज्जफर अहमद, एस.ए. डांगे, शौकत उस्मानी तथा नलिनी गुप्ता। सरकार ने आरोप लगाया कि इन कम्युनिस्टों ने "कम्युनिस्ट इंटरनेशनल" के नाम से पहचाने जाने वाले क्रांतिकारी संगठन की एक शाखा स्थगित की है और इस संगठन का उद्देश्य ब्रिटिश साम्राट की भारत पर प्रभुसत्ता समाप्त करना है। चूंकि अभियुक्तों पर मुकदमा कानपुर में चला, यह केस कानपुर षड्यंत्र केस के नाम से जाना जाता है। मुकदमे के दौरान डांगे ने भारत में समाजवाद का प्रचार करने के अधिकार का दावा किया क्योंकि अंग्रेज साम्राज्य के अन्य हिस्सों में तथा ब्रिटेन में ऐसा करने की स्वतंत्रता है। इस मुकदमे के परिणामस्वरूप मई 1924 ई. को डांगे, अहमद, उस्मानी और गुप्ता को चार-चार साल के कठोर कारावास की सजा हुई।

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना

सितम्बर, 1924 ई. को, कानपुर में, सत्यभक्त ने भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के निर्माण की घोषणा की। इसका उद्देश्य "भारत के समस्त समुदायों के हितों में" उत्पादन के साधनों तथा धन-संपत्ति के बंटवारे में समान मालिकाना हक एवं नियंत्रण के आधार पर भारत की पूर्ण स्वाधीनता तथा समाज का पुनर्गठन करना था। दिसम्बर, 1925 ई. में सत्यभक्त ने कानपुर में कम्युनिस्टों की एक अखिल भारतीय कांफ्रेंस का आयोजन किया, जिसमें नालिनी गुप्ता और मुज्जफर अहमद जिन्हें जेल से रिहा कर दिया गया था, सहित अनेकों कम्युनिस्टों ने हिस्सा लिया। यह कांफ्रेंस सिंगारावेलू चेट्टियर की अध्यक्षता में हुई। कानपुर कान्फ्रेंस को भारत की कम्युनिस्ट पार्टी की औपचारिक शुरुआत के रूप में माना जाता है। इस मीटिंग में पार्टी की केन्द्रीय समिति की स्थापना हुई तथा एस. बी. घाटे और जे. पी. बर्गरहट्टा को संयुक्त सचिव बनाया गया।

1926 ई. के अंत में भारत की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति ने पार्टी के कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार करने के लिए अनेकों गुप्त बैठकें कीं। 1925 ई. से भारतीय कम्युनिस्ट आंदोलन को संगठित करने के लिए ब्रिटिश कम्युनिस्टों ने भारत आना शुरू किया। 1928 ई. में भारत की कम्युनिस्ट पार्टी के दो सदस्यों को कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के छठे अधिवेशन

की कार्यकारिणी समिति के वैकल्पिक सदस्यों के रूप में चुना गया। 1930 ई. में पार्टी औपचारिक रूप से कम्युनिस्ट इंटरनेशनल से सम्बद्ध हो गई।

उस समय भारत के नवजात कम्युनिस्ट आंदोलन के सामने कुछ समस्याएं थीं :

धन के अभाव से ग्रसित या अपने क्रांतिकारी चरित्र और कम्युनिस्ट इंटरनेशनल से सम्बद्धता के कारण भारत की कम्युनिस्ट पार्टी के प्रति सरकार का रवैया काफी विद्वेषपूर्ण रहा।

कार्यकर्ताओं का अभाव था, और

भारतीय समाज का सुविधा प्राप्त वर्ग कम्युनिज्म के विरुद्ध था।

हालांकि कम्युनिस्टों ने गांधीवादी नीतियों की आलोचना की, लेकिन वे साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष का हिस्सा बने रहे। तेभागा आंदोलन (बंगाल) और तेलंगाना किसान विद्रोह (1946-51) वामपंथ के प्रमुख किसान आंदोलन थे।

15 मई 2026 तक के परिदृश्य के अनुसार, भारत में वामपंथी आंदोलन एक निर्णायक मोड़ पर है :

2026 के केरल विधानसभा चुनावों में वामपंथी मोर्चे (LDF) की हार के साथ ही, भारत में अब किसी भी राज्य में कम्युनिस्ट सरकार नहीं है, जो 1977 ई. के बाद पहली बार हुआ है।

विशेषज्ञों के अनुसार, वामपंथ को अपनी विचारधारा को आधुनिक संदर्भों के अनुसार बदलने और युवाओं से जुड़ने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

भारत में वामपंथी आंदोलन ने स्वतंत्रता आंदोलन से लेकर संसदीय राजनीति तक एक लंबा सफर तय किया है। हालांकि, वर्तमान में इसे गंभीर चुनावी और सांगठनिक चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है (विशेषकर 2026 में), लेकिन असमानता के खिलाफ इसकी वैचारिक प्रासंगिकता बनी हुई है। इसका भविष्य इस बात पर निर्भर करेगा कि यह कितनी तेजी से नई चुनौतियों के अनुरूप खुद को पुनर्गठित करता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. गुप्ता, डॉ. मोहनलाल; भारत के स्वाधीनता संग्राम में उग्र वामपंथी आन्दोलनों का योगदान, शुभदा प्रकाशन, जोधपुर, 2018 ई.
2. चन्द्र, विपिन; आधुनिक भारत का इतिहास, ओरियंट ब्लैकस्वॉन, हैदराबाद, 2009 ई.
3. देव, संदीप; कहानी कम्युनिस्टों की, Bloomsbury India, 2017.
4. अग्रवाल, डॉ. अलका; भारतीय वामपंथी राजनीति और हिन्दी उपन्यास, रचना प्रकाशन, जयपुर, 2012 ई.
5. चौधरी, सत्यव्रत राय; लेफ्टिस्ट मूवमेंट इन इंडिया 1917-1947, मिनर्वा पब्लिशर्स, कलकत्ता, 1976 ई.
6. कॉटन, हेनरी; न्यू इंडिया, के. पॉल, लंदन, 1904 ई.

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

बिहार में महिला पुनर्जागरण और राष्ट्रीय आंदोलन : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. नागेश्वर कुमार
सहायक प्राध्यापक, इतिहास विभाग
बी.एम.डी. कॉलेज दयालपुर, वैशाली (बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय मुजफ्फरपुर)

सारांश

बिहार में नारीवादी विचारधारा नारीवाद की विभिन्न लहरों और महिलाओं के कई सदियों के इतिहास को चित्रित करती हैं। यह बिहार में महिलाओं के साथ हो रहे, हिंसा, अन्याय, आंदोलन, अनुभव, कार्यशैली, समस्या के निवारण खोजने और बेहतर जीवन स्तर उपलब्ध कराने हेतु एक प्रयास है। बिहार महिला आंदोलन का इतिहास विकास और बदलाव का एक चित्र प्रस्तुत करता है। नारीवाद की विभिन्न लहरें निजी और सार्वजनिक जीवन दोनों में महिलाओं के विशिष्ट उत्पीड़न को स्वीकार करती हैं। बिहार के महिला आंदोलन एक विशिष्ट महिला संस्कृति और सकारात्मक प्रेरणादायक झांकी भी प्रस्तुत करते हैं। बिहार में महिलाओं के आंदोलन का लंबा और समृद्ध इतिहास रहा है। बिहार की महिलाएं शुरू से ही सामाजिक प्रतिमानों एवं सांस्कृतिक आदर्शों की जटिल संरचना की उत्तराधिकारी रही हैं।

सन् 1885 ई. में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के साथ ही भारत के लोगों की राजनीतिक आकांक्षाओं ने मूर्त रुप लिया। इसका उद्देश्य शुरू में भारत के लोगों की समस्याओं का पता लगाकर भारत में ब्रिटिश सरकार को इससे अवगत करना था। प्रारम्भ से ही कांग्रेस के द्वार पुरुषों के साथ-साथ महिलाओं के लिए भी खुले थे। कांग्रेस के प्रथम अधिवेशन में ए०ओ० ह्यूम ने कहा था, “सभी विचारधाराओं के राजनैतिक सुधारकों को यह बात नहीं भूलनी चाहिए कि जब तक राष्ट्र के नारी तत्व का उत्थान अन्य कार्यों के साथ नहीं होता है तब तक राजनैतिक अधिकार प्राप्त करने का उनका सारा प्रयास विफल रहेगा”।

मुख्य शब्द : नारीवाद, हिंसा, आंदोलन, महिला संस्कृति, उत्तराधिकारी।

परिचर्चा

महिला आंदोलन और दुनियाभर में उससे उपजे नारीवादी विमर्श का एक महत्वपूर्ण पहलू विश्लेषण के लिए ऐसे उपकरणों और सिद्धांतों की खोज रहा है जिसके जरिए सामान्य तौर पर जेंडर विभेदीकरण को और विशेषकर महिलाओं के अधीनीकरण को समझा जा सके। चूंकि नारीवादी अध्ययन एक नया क्षेत्र है इसलिए नारीवादी विमर्श का लगभग पहला काम यही था कि महिलाओं को अधीन करने वाली जटिल संरचना को पहचाना जाए और उसे एक उचित नाम दिया जाए। इस प्रकार, बीसवीं सदी के आठवें दशक के मध्य से नारीवादी विशेषज्ञों ने पितृसत्ता शब्द का प्रयोग और उसे विशिष्ट अर्थ में परिभाषित करना शुरू किया। अब इस शब्द को समाज विज्ञान में इसी परिभाषा के साथ जाना जाता है और वर्तमान अध्ययन

में भी यह इसी रूप में प्रयुक्त हुआ है।

पितृसत्ता जिसके जरिए अब संस्थाओं के एक खास समूह को पहचाना जाता है, को 'सामाजिक संरचना और क्रियाओं की एक ऐसी व्यवस्था, के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसमें पुरुषों का स्त्रियों पर वर्चस्व रहता है, और वे उनका शोषण और उत्पीड़न करते हैं। पितृसत्ता को एक व्यवस्था के रूप में देखना बेहद महत्वपूर्ण है क्योंकि इससे पुरुष और स्त्री के बीच शक्ति एवं हैसियत में असमानता के लिए जैविक निर्धारणवाद (biological determinism) के मत को खारिज करने में सहायता मिलती है और साथ ही यह भी स्पष्ट होता है कि स्त्री या पुरुष का वर्चस्व कोई व्यक्तिगत घटना नहीं है बल्कि यह एक व्यापक संरचना का अंग है। पितृसत्ता की सबसे संपूर्णात्मक और उपयोगी परिभाषा गर्डा लर्नर ने दी है : उनके सूत्रीकरण के अनुसार, पितृसत्ता, "परिवार में महिलाओं और बच्चों पर पुरुषों के वर्चस्व की अभिव्यक्ति और संस्थागतकरण तथा सामान्य रूप से महिलाओं पर पुरुषों के सामाजिक वर्चस्व का विस्तार है। इसका अभिप्राय है कि पुरुषों का समाज के सभी महत्वपूर्ण सत्ता प्रतिष्ठानों पर नियंत्रण रहता है और महिलाएं ऐसी सत्ता तक पहुंच से वंचित रहती हैं"। वह यह भी कहती हैं कि इसका यह अर्थ नहीं है कि "महिलाएं या तो पूरी तरह शक्तिहीन हैं या पूरी तरह अधिकारों, प्रभाव और संसाधनों से वंचित हैं"। इसका यह अर्थ भी नहीं है कि प्रत्येक पुरुष सदा वर्चस्व की, और प्रत्येक स्त्री सदा अधीनता की स्थिति में ही रहती है बल्कि महत्वपूर्ण बात यह है कि इस व्यवस्था, जिसे हमने पितृसत्ता का नाम दिया है, के तहत यह विचारधारा प्रभावी रहती है कि पुरुष स्त्रियों से अधिक श्रेष्ठ हैं, तथा महिलाओं पर पुरुषों का नियंत्रण है और होना चाहिए, और महिलाओं को पुरुषों की संपत्ति के रूप में देखा जाता है।

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन का प्रारम्भिक बिन्दु वास्तव में 1857 ई० के विद्रोह को माना जाता है, क्योंकि यहीं से हमारी स्वतंत्रता की लड़ाई का इतिहास आरंभ होता है। सन् 1857 से 1947 ई० तक के इतिहास में भारत की स्वतंत्रता के लिए स्त्रियों ने अपने महत्वपूर्ण त्याग, बलिदान और वीरता का परिचय दिया, जो हमारे इतिहास का एक गौरवपूर्ण अध्याय है। इसी परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रीय आंदोलन के स्वरूप का अवलोकन करना लाजिमी होगा। ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत में अपने साम्राज्य विस्तार के साथ ही भारतीयों का सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनैतिक तथा आर्थिक शोषण किया। परिणामस्वरूप भारतीय जनता में असंतोष बढ़ने लगा। इसी पृष्ठभूमि में अनेक जन-विद्रोह हुए, ये विद्रोह अलग-अलग काल खण्डों और स्थलों पर विभिन्न राजनैतिक, आर्थिक और प्रशासनिक कारणों से हुई थी। इन सभी आन्दोलनों का स्वरूप व्यापक नहीं हो सका। फिर भी धीरे-धीरे सुलगती हुई अग्नि 1857 ई० में धधक उठी और उसने अंग्रेजी साम्राज्य की जड़ों तक को हिला दिया।

दरअसल में, भारत को स्वतंत्र करने का पहला संगठित प्रयास सन् 1857 ई० में एक सैनिक विद्रोह के रूप में हुआ। इसमें सेना अथवा शासन से संबद्ध व्यक्ति ही भाग ले सकते थे। अतः स्त्रियों के लिए इस विद्रोह में भाग लेने का कम अवसर था। विद्रोह का नेतृत्व करने वालों में झांसी की रानी लक्ष्मीबाई का नाम बड़े गौरव से लिया जाता है। इसी क्रम में बिहार की महिलाओं ने हाजी बेगम, धरमन बीबी, करमन बीबी तथा नर्तकी गुलाबी के बलिदानों को भी भुलाया नहीं जा सकता है। सन् 1857 ई० का विद्रोह भारत को स्वतंत्र करने में तो सफल नहीं हुआ, लेकिन उसकी गहरी छाप देश के जनमानस पर पड़ी। विद्रोह की जो भावना सैनिकों तथा राजघरानों तक सीमित थी, उसने अब जनमानस को भी प्रभावित किया। परिणामस्वरूप देश को पराधीनता के पाश से मुक्त करने के लिए जहां-तहां छिटपुट और संगठित प्रयास शुरू हुए। विद्रोह की यह भावना क्रांतिकारी राष्ट्रवादिता के रूप में प्रकट हुई और हमारे देश के नौनिहाल फांसी के तख्तों पर झुलते हुए तथा अंग्रेजी साम्राज्यवाद की गोलियों के शिकार होते दिख पड़े। बिहार में भी ऐसी अनेकों घटनाएं हुई।

1857 का स्वतंत्रता संग्राम एवं महिलाएं

भारत को स्वतंत्र करने का पहला संगठित प्रयास सन् 1857 ई० में एक सैनिक विद्रोह के रूप में शुरू हुआ था। इसमें महिलाओं के लिए भाग लेने का कम अवसर था, क्योंकि भारत की तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक परिस्थितियों में स्त्रियां बाहरी

कार्यों में खुलकर भाग नहीं ले सकती थीं। यह प्रतिबंध निम्न वर्ग की स्त्रियों पर लागू नहीं था। अतएव निम्न एवं मध्यम वर्ग की महिलाओं ने स्वतंत्रता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। ऐसी भारतीय वीरांगनाओं में लक्ष्मीबाई, झलकारी बाई, अजीजन बाई, बैजा बाई, अवन्ति बाई जैसी सैकड़ों महिलाओं की गाथाएं बड़ी ही रोचक हैं, जिन्होंने अपनी जान की बाजी लगाकर 1857 की क्रांति में मातृभूमि के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर कर डाला। वैसी ही वीर महिलाओं में बिहार की बेगम हाजी, धरमन बीबी, करमन बीबी तथा नर्तकी गुलाबी का नाम बड़े ही गर्व से लिया जाता है।

वर्ष 1905-18 का कालक्रम भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में गरमपंथी विचारधारा के विकास का काल था। नरमपंथी राष्ट्रवादियों के मांगों को ब्रिटिश सत्ता द्वारा अनदेखा करने के कारण लोगों का झुकाव गरमपंथी आन्दोलन की ओर हुआ। ब्रिटिश शासन अब सामाजिक, सांस्कृतिक दृष्टिकोण से प्रगतिशील नहीं हो रहा था। उच्च शिक्षा के प्रसार में सरकारी नीति बाधा बन रही थी। प्रेस की स्वतंत्रता सीमित करना, सत्ता के विरोध को अपराध घोषित करना आदि कानूनों ने ब्रिटिश सत्ता के प्रति भारतीय जनमानस में असंतोष को ही बढ़ाया। अब तक राष्ट्रवादियों को यह विश्वास हो चला था कि भारतीयों की मुक्ति उन्हें अपने प्रयासों से ही मिल सकती है। इसके लिए उन्होंने अपना लक्ष्य स्वराज्य या स्वाधीनता को घोषित किया। बाल गंगाधर तिलक, बिपिन चंद्र पाल, अरविन्द घोष और लाला लाजपत राय ने इस राष्ट्रीय आंदोलन का नेतृत्व किया। उनका विश्वास जनता के बीच राजनीतिक कार्य पर और जनता की सीधी राजनीतिक कारवाई पर था। देश की भलाई के लिए वे किसी भी व्यक्तिगत बलिदान को कम समझते थे।

20 जुलाई, 1905 ई० को लॉर्ड कर्जन ने एक आज्ञा जारी करके बंगाल को दो भागों में बांट दिया। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस एवं बंगाल के राष्ट्रवादियों ने विभाजन का जमकर विरोध किया। बंगाल में उपवास रखकर शोक दिवस मनाया गया तथा वन्दे मातरम् के घोष से विभाजन का तीव्र विरोध हुआ। विदेशी वस्तुओं की होली जलाई गई तथा स्वदेशी आन्दोलन का जन्म हुआ।

बंग-भंग आन्दोलन का बिहार के विभिन्न क्षेत्रों में कई तरह से प्रभाव लक्षित हुआ। 16 अक्टूबर, 1905 ई० को दरभंगा में राखी बंधन दिवस मनाया गया। श्री सतीश चन्द्र चक्रवर्ती इसके प्रेरक थे। सरला देवी ने स्वदेशी मेला में 'लखमीर भंडार' खोला जिसमें केवल स्वदेशी वस्तुओं का विक्रय होता था। बॉयज एसोसिएशन, जिसकी स्थापना 3 मार्च, 1901 ई० में हुई थी, ने राखी बंधन दिवस बड़े की उत्साह एवं निष्ठा के साथ मनाया। इनकी एक सभा 6 फरवरी, 1906 ई० को हुई। उसमें इन लोगों ने केवल स्वदेशी वस्तुओं का व्यवहार करने का संकल्प लिया।

राजेन्द्र प्रसाद के प्रयत्नों के फलस्वरूप 1906 ई० में बिहारी स्टूडेंट्स कान्फ्रेंस की स्थापना हुई। अपने स्थापना काल से ही इसने राष्ट्रवादी चेतना के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। बिहार के राष्ट्रवाद के इतिहास में इसका उल्लेखनीय योगदान रहा है। इसके वार्षिक अधिवेशनों में लड़कों तथा लड़कियों की निबंध प्रतियोगिता होती थी और उन्हें पुरस्कृत किया जाता था। लड़कियों को सिलाई के लिए प्रोत्साहित किया जाता था।

स्वतंत्रता संग्राम में बिहार की महिलाओं की भागीदारी

स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं का योगदान बड़ा ही महत्वपूर्ण रहा है। आदिकाल से इतिहास भी साक्षी है कि महिलाओं ने सामाजिक एवं राष्ट्रीय जीवन में खुलकर हाथ बटाया है। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में बिहार की महिलाओं की भागीदारी विशेषतः उल्लेखनीय है। उसने जिस दृढ़ता एवं वीरता के साथ संघर्ष किया, वह आज भी स्वर्णाक्षरों में अंकित है। लज्जा की प्रतिमूर्ति कही जानेवाली इस पावन भूमि बिहार की वीरांगनाओं ने भारत माता की जंजीर को काटने में कभी भी पीछे नहीं रही। चाहे समर-क्षेत्र में रणचण्डी का रूप धारण करने की बात हो या आत्मघाती दस्ते की गठन का। नेताजी सुभाष चन्द्र बोस के गरम दल में शामिल होने की बात हो या गांधीजी के असहयोग आन्दोलन में शिरकत करने की। सभी क्षेत्रों में महिलाओं ने पुरुषों के कंधा-से-कंधा मिलाकर स्वतंत्रता की रणभूमि में भाग लिया। अपना सर्वस्व बलिदान किया। अपने प्राणों की आहूति दी। इतिहास के पन्ने इसके प्रमाण हैं।

1920 ई० का वर्ष भारतीय राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास का वह सीमा चिन्ह है जहां से गांधी-युग की शुरुआत होती है। हालांकि बिहार में गांधी का आगमन 1917 ई० में ही हो चुका था। उसी गांधी युग में हम अंग्रेज़ो से आजाद हुए। इसी दौरान गांधी द्वारा प्रवर्तित असहयोग आन्दोलन तथा सविनय अवज्ञा आन्दोलन भारतीय स्वातंय इतिहास के दो प्रमुख मानक आयाम रहे, जिसके सहारे हम स्वातंय आन्दोलन की संघर्ष लड़ाई लड़कर जीत सके तथा हमारे भीतर आत्मविश्वास जगा। उसमें न केवल पुरुषों का ही योगदान था, बल्कि स्त्रियों ने भी खुलकर साथ दिया। सारा देश इन कोमलांगी ललनाओं का कायल है, जिनके अमर बलिदानों को वह इतिहास अपने पन्नों में समेटे हुए है। इन महान स्त्रियों की भूमिका को कभी भूलाया नहीं जा सकता।

असहयोग आन्दोलन के दौरान बिहार के शहरी एवं ग्रामीण सभी क्षेत्र की महिलाएं सक्रिय थीं। 1922 ई० के आसपास हाजीपुर अनुमंडल के ग्रामीण इलाके में काफी हलचल रहीं। इस अनुमंडल की सुनीति सिन्हा (किशोरी प्रसन्न सिंह की पत्नी), विन्दा देवी, राम सरनी देवी तथा कपिलदेव सिंह की मां घटारो की ही थीं। उन्होंने आन्दोलन में खुलकर भाग लिया। सत्यभामा देवी, सीता देवी, श्रीमती रायबहादुर सिंह एवं उनकी मां भी इसी अनुमंडल की थी। जेल से छूटने के बाद गांधीजी इन महिलाओं से मिलने स्वयं आये थे। ये महिलाएं मध्यवर्गीय भूमिहार जाति की थीं जिनका परिवार आर्थिक रूप से सम्पन्न था।

असहयोग आंदोलन में जिन महिलाओं ने बढ़-चढ़कर भाग लिया उनमें माधुरी देवी तथा उर्मिला देवी का नाम महत्वपूर्ण है। 1922 ई० में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सैंतिसवां सम्मेलन गया में हुआ। इसमें विंध्यवासिनी देवी (सिद्धेश्वर वर्मा की पत्नी), उर्मिला देवी, रामझरी देवी (महेंद्र सिंह की पत्नी) तथा अन्य महिलाओं ने भाग लिया। विंध्यवासिनी देवी तथा रामतनुक देवी (सूर्यवंश प्रसाद सिंह की पत्नी) गया कांग्रेस में स्वयंसेविका दल को संगठित किया। लीला सिंह भी अपने पति दीपनारायण सिंह के साथ भागलपुर क्षेत्र में सक्रिय थीं। ये महिलाएं शिक्षित मध्यमवर्ग तथा भूमिहार एवं उच्च वर्ग से आती थीं।

जनवरी, 1927 ई० में गांधीजी ने बिहार की यात्रा की। उन्होंने मुजफ्फरपुर, मोतिहारी तथा सीवान जिले में अनेक सभाओं को संबोधित किया। उनके साथ कस्तूरबा गांधी और प्रभावती देवी भी थीं। गांधीजी द्वारा किये गये सभाओं में बड़ी संख्या में महिलाएं उपस्थित थीं। उन्होंने बिहार में चल रहे पर्दाविरोधी आन्दोलन को सहयोग एवं समर्थन दिया। जनवरी, 1929 ई० में अखिल भारतीय महिला संगठन का सम्मेलन पटना में हुआ। इसमें बिहार की महिलाओं की मुलाकात अन्य प्रांत की महिलाओं से हुई। इस सम्मेलन में एक प्रस्ताव पास कर शारदा एक्ट का समर्थन किया गया। पर्दा-प्रथा एवं दहेज-प्रथा का विरोध किया गया।

मुजफ्फरपुर में चन्द्रावती देवी, कमलेश्वरी देवी घूम-घूमकर कांग्रेस संगठन का कार्य करती थीं। चन्द्रावती देवी (जगदीश नारायण वर्मा की पत्नी) ने पूर्णिया जिला में कई जगहों पर भाषण दिया। 1930 ई० में बम्बई में अखिल भारतीय महिला सम्मेलन हुआ जिसमें बिहार की महिलाओं ने भी भाग लिया। बिहार महिला सम्मेलन, 1930 ई० को गया में हुआ। ये महिलाएं शिक्षित मध्यमवर्ग तथा कायस्थ परिवार से आती थीं। 4 मई, 1930 ई० को जब महात्मा गांधी गिरफ्तार कर लिये गये तब उनके विरोध में जगह-जगह हड़ताल तथा प्रदर्शन हुआ। विदेशी वस्त्रों, अदालतों का बहिष्कार तथा राशन की दुकानों पर धरना देने का प्रस्ताव पारित किया गया।

1930 ई० के सविनय अवज्ञा आन्दोलन के समय एक क्रांतिकारी वीरांगना बिहार की लक्ष्मी बाई के नाम से जानी जाने वाली रामस्वरूप देवी की भूमिका उल्लेखनीय है। छपरा की बहुरिया रामस्वरूप देवी के पति बाबू हरमाधव प्रसाद को गिरफ्तार कर भागलपुर सेन्ट्रल जेल भेज दिया गया था। तब उन्होंने देशभक्त पति का स्थान लिया। उन्होंने गांव-गांव का तूफानी यात्रा कर, जनता में विद्रोह का ज्वाला सुलगाने लगीं। जनवरी, 1931 ई० को उन्हें भी 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' में गिरफ्तार करके भागलपुर सेन्ट्रल जेल ले जाया जाने लगा सभी स्थानीय जनता सरकार के इस निर्णय के विरोध में आन्दोलन करने लगी और लोग उनको ले जा रही गाड़ी के नीचे लेट गये। अन्त में रामस्वरूप देवी ने लोगों को समझाया, तभी लोग उनके रास्ते से हटे तथा उन्हें भागलपुर सेन्ट्रल जेल भेज दिया गया। 'गांधी-इरविन समझौता' के बाद उन्हें रिहा कर दिया गया। रामस्वरूप देवी मूलतः मध्यवर्गीय जमींदार परिवार की शिक्षित महिला थी।

1942 ई० के भारत छोड़ो आन्दोलन में बिहार की महिलाओं ने अविस्मरणीय भूमिका निभाई। गांधीजी को 9 अगस्त, 1942 ई० को गिरफ्तार कर लिया गया। भारत छोड़ो आन्दोलन वास्तव में नेतृत्व विहीन हो गया था। इसलिए महिलाएं जुलूस में बड़े पैमाने पर भाग लेने लगी। साथ ही साथ विरोध प्रदर्शन तथा हड़ताल में भी भाग लिया। भारत छोड़ो आन्दोलन के दौरान 9 अगस्त, 1942 ई० को राजेन्द्र प्रसाद को गिरफ्तार कर लिया गया। पटना में व्यापक रूप से धरना प्रदर्शन एवं जुलूस निकले। एक जुलूस बी०एन० कॉलेज से निकलकर राजभवन तथा बांकीपुर जेल गया। पटना विश्वविद्यालय के छात्र इस आन्दोलन में सक्रिय भूमिका निभायें।

10 अगस्त को पटना में कदमकुआं महिला चरखा समिति से महिलाओं का एक जुलूस निकला जो नगर के विभिन्न सड़कों से गुजरता हुआ पुनः लौट गया। भगवती देवी (राजेन्द्र प्रसाद की बहन) की अध्यक्षता में एक सभा हुई। इसमें उपस्थित महिलाओं में सुन्दरी देवी (शंभुशरण वर्मा की पत्नी) तथा लाल बहादुर शास्त्री की बहन प्रमुख थीं। इसमें लोगों से दृढ़ संकल्प होकर आन्दोलन में भाग लेने का आह्वान किया गया। पटना में ही 12 अगस्त को धर्मशीला लाल के नेतृत्व में एक जुलूस निकला। धर्मशीला लाल को गिरफ्तार कर लिया गया। उपर्युक्त वर्णित महिलाएं मध्यमवर्ग तथा कायस्थ परिवार से संबंधित थीं।

सम्पूर्ण बिहार में रेल, तार, टेलीफोन की लाइनें काट दी गई। डाकघरों, रेलवे स्टेशनों, थानों तथा अन्य सरकारी इमारतों को जलाया गया। इस आन्दोलन को दबाने के लिए सरकार ने तेजी से दमन-चक्र लाया। कदमकुआं से प्रभावती देवी को गिरफ्तार किया गया। छपरा में शांति देवी ने टाऊन हॉल से लोगों को आह्वान किया। सिवान में फुलेना प्रसाद तथा उनकी पत्नी तारा रानी श्रीवास्तव एक भीड़ में तिरंगा झंडा फहराने थाना पहुंचे, तभी फुलेना प्रसाद गोली के शिकार हुए तथा तारा रानी को घायलावस्था में जेल भेज दिया गया। प्रभावती देवी प्रतिष्ठित समाजवादी नेता जयप्रकाश नारायण की पत्नी थीं। ये भी शिक्षित, संभ्रांत कायस्थ परिवार की थीं।

इस तरह 1942 की क्रांति जिस रूप से हुई थी उसमें स्त्रियों का भाग लेना निश्चय ही उनकी निर्भिकता, महाबलिदान और कष्ट-सहिष्णुता की परिचायक है। अंग्रेजी हुकूमत ने स्त्रियों पर घृणित अत्याचार किये फिर भी स्त्रियां झुकी नहीं और स्वतंत्रता के लिए बहुत बड़ी कीमत चुकायी। अनेक ऐसी वीर माताएं, बहनें, पत्नियां थीं जिन्होंने नन्हें-बच्चों व बुढ़ो की घर-गृहस्थी की जिम्मेदारी उठाकर अपने बेटों, भाइयों और पतियों को हंसते-हंसते स्वतंत्रता की बलिवेदी पर चढ़ा दिया। पीछे उन्होंने जो कष्ट उठाये वे किसी मूक बलिदान से कम नहीं कहे जा सकते।

निष्कर्ष

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में जब आधुनिक राष्ट्रवाद का विकास हुआ तो इसने भी स्त्रियों के प्रश्न घरेलूपन की संकुचित सीमाओं के अन्दर उठाया। सुधारवाद की जगह जब राष्ट्र की विभिन्न मूर्ति समान प्रस्तुतियों ने ली तो हिन्दू स्त्री उस नैतिक व्यवस्था की आदर्श मूर्ति बन गई थी, जो भारत की आत्मा की प्रतीक थी और माना जाने लगा कि वह पश्चिम के प्रदूषक प्रभाव से मुक्त थी। लेकिन राष्ट्रवादी प्रस्तुति ने उनको भौतिक तथा आध्यात्मिक द्विभाजन के समकक्ष बना दिया। सार्वजनिक क्षेत्र जो खासतौर पर पुरुषों का क्षेत्र था, आधुनिकता ला रही उपनिवेशी राज सत्ता से टकराव और वार्ता का क्षेत्र था, जबकि 'घर' प्रभुसत्ता का आन्तरिक क्षेत्र था, जो उपनिवेशीकरण से परे था और जहां स्त्रियों को भारत की राष्ट्रीय पहचान के आध्यात्मिक तत्व का रक्षक और पोषक समझा जाता था।

बिहार की महिलाओं पर ढाये गये जुल्मों की कहानी अनन्त है, अकथनीय हैं। बिहार की महिलाओं ने अंग्रेजी सरकार के इन सारे जुल्मों, अत्याचारों का वीरतापूर्वक मुकाबला किया और इस प्रकार देश की स्वतंत्रता के लिए एक बड़ी कीमत चुकायी। पिछड़े हुए बिहार की 'पिछड़ी हुई' महिलाओं का स्वतंत्रता संग्राम में जो सहयोग रहा उसे कभी भुलाया नहीं जा सकता। जिसके फलस्वरूप ही 15 अगस्त, 1947 ई० को हम स्वतंत्र हो सके। उन बहादुर बिहारी महिलाओं के लिए सिर्फ इतना ही कहना सार्थक होगा कि स्वतंत्रता के लिए उन्होंने जो कुछ किया, वह सिर्फ बिहार का ही नहीं, वरन् भारत का भी

मस्तक ऊंचा रखने के लिए पर्याप्त है।

संदर्भ ग्रंथ

1. अमरेन्द्र, कुमार; स्वाधीनता संग्राम में बिहारी महिलाओं की भूमिका, जानकी प्रकाशन, पटना, 1998 ई.
2. प्रसाद, सरयु वाला; स्वातंय संग्राम के क्षेत्र में स्त्रियों की देन, महिला चरखा समिति, रजत-जयंती अंक, पटना, 1965 ई.
3. बंधोपाध्याय, शेखर; पलासी से विभाजन तक, ओरियंट लांगमैन, हैदराबाद, 2007 ई.
4. दत्त, के० के०; बिहार में स्वातंय आंदोलन का इतिहास, भाग-1, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी पटना, 1967 ई.
5. नवजीवन, 18 जुलाई; 1920 ई.
6. नवजीवन, 28 नवंबर; 1920 ई.
7. सर्चलाइट, 22 जनवरी; 1922 ई.
8. सर्चलाइट, 3 अप्रैल; 1930 ई.
9. फाइल नं०- 158-1930, बिहार पोलिटिकल, स्पेशल डिपार्टमेंट, पटना
10. दास, प्रमोदानन्द एवं अमरेन्द्र, कुमार; आधुनिक बिहार के विकास में महिलाओं की भूमिका, विजय कुमार सम्पादित बिहार के विकास में महिलाओं की भूमिका, बिहार राज्य अभिलेखागार निदेशालय, पटना, 2012 ई.
11. दत्त, के० के०; बिहार में स्वातंय आंदोलन का इतिहास, भाग-3, बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी पटना
12. कुमारी शीला सिंह, महात्मा गांधी के रचनात्मक कार्यक्रमों में बिहार की महिलाओं की भूमिका, 1920-1947, पटना, 1989 ई.

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

A Multidimensional Study of Women Entrepreneurship Development in Bundi, Rajasthan: Economic, Social, Technological and Policy Perspectives

Nida Sherwani
Research Scholar, School of Commerce and Management,
Career Point University, Kota, Raj., India
sherwaninid0@gmail.com
Dr. Sandeep Kumar
Associate Professor, School of Commerce and Management,
Career Point University, Kota, Raj., India
sandeep.kumar@cpur.edu.in

1.Abstract

Women entrepreneurs are becoming the most important contributors to the nation's economic and social development, in India. The study investigates the development of women entrepreneurs in Bundi District in order to analyze economic development, social empowerment, and technological assistance. It also shows how government policies affect women's entrepreneurship development. The research used both primary and secondary data in order to collect both qualitative and quantitative analyses. The primary data were collected from women entrepreneurs by using structured questionnaires from selected villages in Bundi District. The findings indicate that women entrepreneurship development helps to increase income to individuals. It also improves the quality of life for women, improves decision-making abilities of women, and develops self-confidence amongst women. The study also investigates important challenges faced by women entrepreneurs, which usually include access to loans, limited access to training, a lack of awareness of government schemes for women entrepreneurs, and difficulty in order to use technology. The research also concludes that providing proper government schemes support women entrepreneurs by accessing finance, providing skill training programs, providing financial assistance, and providing training and tools for digital literacy. It will strengthen women entrepreneurs and help in rural development in Rajasthan.

Keywords: *Women Entrepreneurship, Economic Empowerment, Social Empowerment, Digital Technology Adoption, Government Support Schemes, Financial Access, Entrepreneurial Development, and Inclusive Economic Growth*

2.Introduction: There are some reasons why Women Entrepreneurs are significant contributors towards the economic and social development of a country and especially India's. Not only Women Entrepreneurs create jobs, provide family income and contribute towards rural development, but

they also are part of a very high marginalised segment of the population. Women in Bundi (a town located in the state of Rajasthan) are setting up many micro businesses with the help of Central/ State Government Schemes and Self Employment Opportunities. Women entrepreneurs face many challenges in order to establish their own businesses. These challenges are lack of finance, limited educational levels, low levels of technical knowledge and socio-cultural barriers. The focus of this study is mainly on the development of women entrepreneurship in Bundi from a number of perspectives. It includes economic, social, technological and policy viewpoints. The study will further identify key government support systems which are used by women entrepreneurs and also examine the common problems faced by women entrepreneurs in order to develop their businesses.

3. Study Area: The study is conducted in Bundi district of Rajasthan. Both rural and urban women are included in the study in order to understand the economic, social, technological, and policy-related factors. The study also examines government support, use of technology, financial help, education, and social awareness related to women entrepreneurs in Bundi district.

4. Objectives of the Study

1. To study the economic condition of women entrepreneurs in the district.
2. To examine the social factors affecting women entrepreneurship development.
3. To analyze the use of technology and digital tools by women entrepreneurs.
4. To evaluate the role of government policies and support schemes for women entrepreneurs.
5. To identify the major challenges faced by women entrepreneurs in business development.

5. Hypotheses of the Study

1. H_{01} : The economic condition of women entrepreneurs does not significantly impact the development of their businesses.
2. H_{02} : Social factors such as family support, education, and social awareness do not significantly affect women entrepreneurship development.
3. H_{03} : The use of technology and digital tools does not positively influence the growth and performance of women entrepreneurs.
4. H_{04} : Government policies and support schemes do not play an important role in promoting women entrepreneurship development.
5. H_{05} : Women entrepreneurs do not face major challenges such as financial problems, lack of training, and market competition in business development.

6. Research Methodology

Research Design: This study examines women entrepreneurship development from economic, social, technological, and policy perspectives. It also focuses on the contribution of women entrepreneurs, social influence, use of technology, government support, and challenges faced by women entrepreneurs.

Data Sources: Both primary and secondary data are used in this study.

Primary Data: Collected directly from women entrepreneurs through structured questionnaires and personal interaction.

Secondary Data: Collected from research articles, books, journals, government reports, websites, and policy documents related to women entrepreneurship.

Sampling Technique: Random sampling method is used to select women entrepreneurs from different business sectors such as retail, handicrafts, service, and online business.

Sample Size: A total of 150 women entrepreneurs are selected for the study.

Data Collection Method: Data is collected through a structured questionnaire related to economic contribution, social factors, technology use, government schemes, and challenges faced by women entrepreneurs.

7. Data Analysis:

Analysis of Table 1.1

Source of Finance for Business

Source	No. of Respondents	Percentage%
Personal Savings	40	26.67%
Bank Loans	32	21.33%
Government Schemes	30	20.00%
SHGs	28	18.67%
Family Support	20	13.33%
Total	150	100%

Source: Results Obtained from Overall Analysis of Survey Responses

Table 1.1

The above table shows the sources of finance used by the respondents for their businesses. Most respondents use Personal Savings with 40 respondents (26.67%). Bank Loans are used by 32 respondents (21.33%), while 30 respondents (20.00%) depend on Government Schemes. SHGs (Self-Help Groups) support 28 respondents (18.67%), and 20 respondents (13.33%) receive FamilySupport.

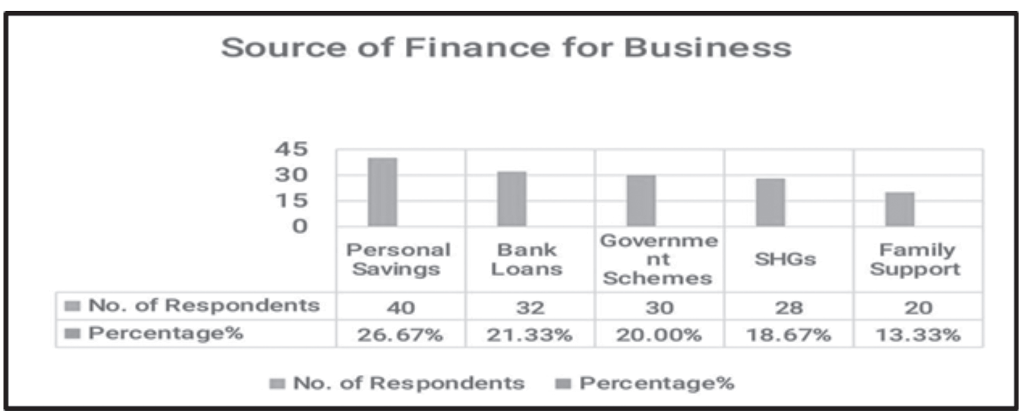

*.*Source: Table 1.1 Converted to Chart *Fig,: 1.1*

Analysis of Table 1.2

Awareness of Government Schemes for Women Entrepreneurs

Awareness Level	No. of Respondents	Percentage%
Highly Aware	28	18.67%
Moderately Aware	47	31.33%
Slightly Aware	40	26.67%
Not Aware	35	23.33%
Total	150	100%

Source: Results Obtained from Overall Analysis of Survey Responses

Table 1.2

The above table shows the awareness level of respondents about government schemes and entrepreneurship programs. Most respondents are Moderately Aware with 47 respondents (31.33%). Slightly Aware respondents are 40 (26.67%), while 35 respondents (23.33%) are Not Aware. Only 28 respondents (18.67%) are Highly Aware.

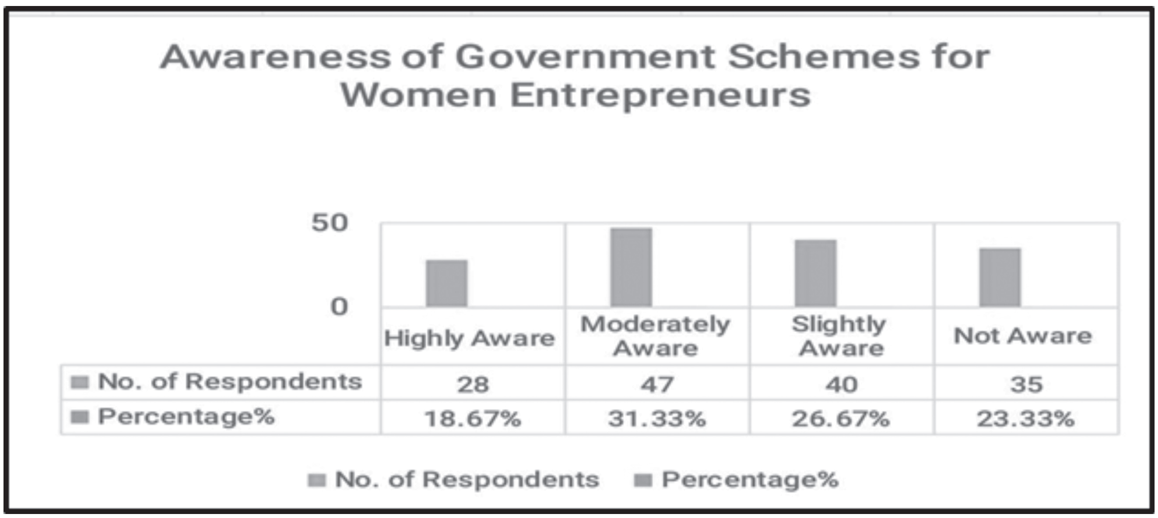

Source: Table 1.2 Converted to Chart *Fig,: 1.2

Analysis of Table 1.3

Use of Technology in Business

Technology Usage	No. of Respondents	Percentage%
Online Marketing	34	22.67%
Digital Payments	42	28.0%
Social Media Platform	38	25.33%

E-Commerce Platforms	21	14.00%
No Technology Usage	15	10.00%
Total	150	100%

Source: Results Obtained from Overall Analysis of Survey Responses

Table 1.3

The above table shows the use of technology by the respondents in their businesses. Most respondents use Digital Payments with 42 respondents (28.00%). Social Media Platforms are used by 38 respondents (25.33%), while 34 respondents (22.67%) use Online Marketing. E-Commerce Platforms are used by 21 respondents (14.00%), and 15 respondents (10.00%) do not use any technology in their business. This shows that digital tools and online platforms are becoming important for women entrepreneurs.

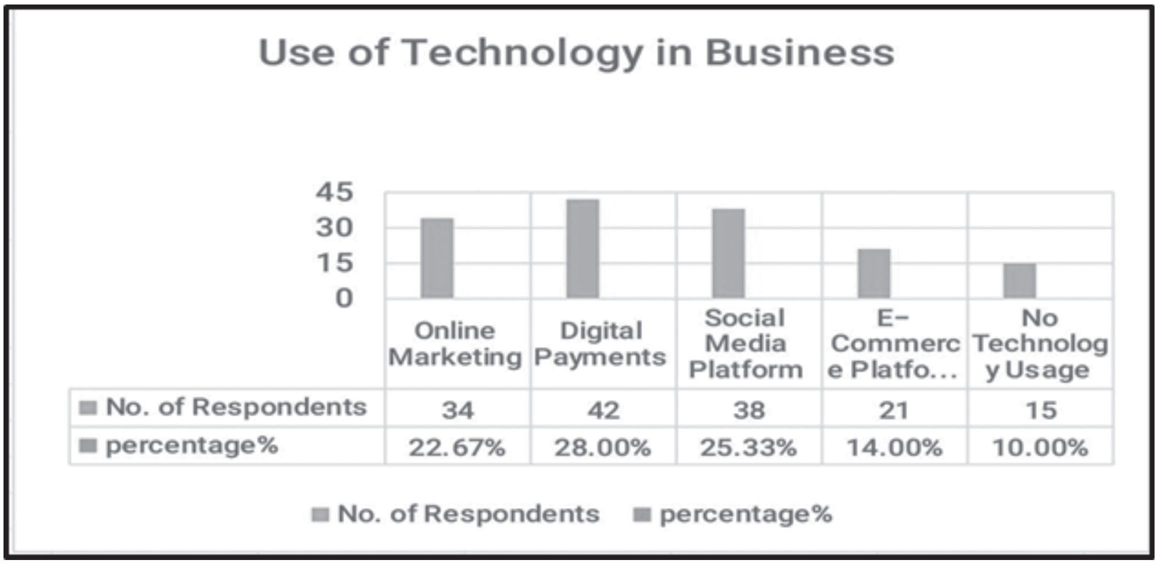

Source: Table 1.3 Converted to Chart *Fig,: 1.3

Analysis of Table 1.4

Impact of Entrepreneurship on Income Level

Income Improvement	No. of Respondents	Percentage%
High Improvement	42	28.00%
Moderate Improvement	55	36.67%
Slight Improvement	34	22.67%
No Change	19	12.67%
Total	150	100%

Source: Results Obtained from Overall Analysis of Survey Responses

Table 1.4

The above table shows the level of income improvement among the respondents after starting their businesses. Most respondents reported Moderate Improvement with 55 respondents (36.67%). High Improvement was reported by 42 respondents (28.00%), while 34 respondents (22.67%) experienced Slight Improvement. Only 19 respondents (12.67%) reported No Change in income. This indicates that entrepreneurship has helped improve the income level of most women respondents.

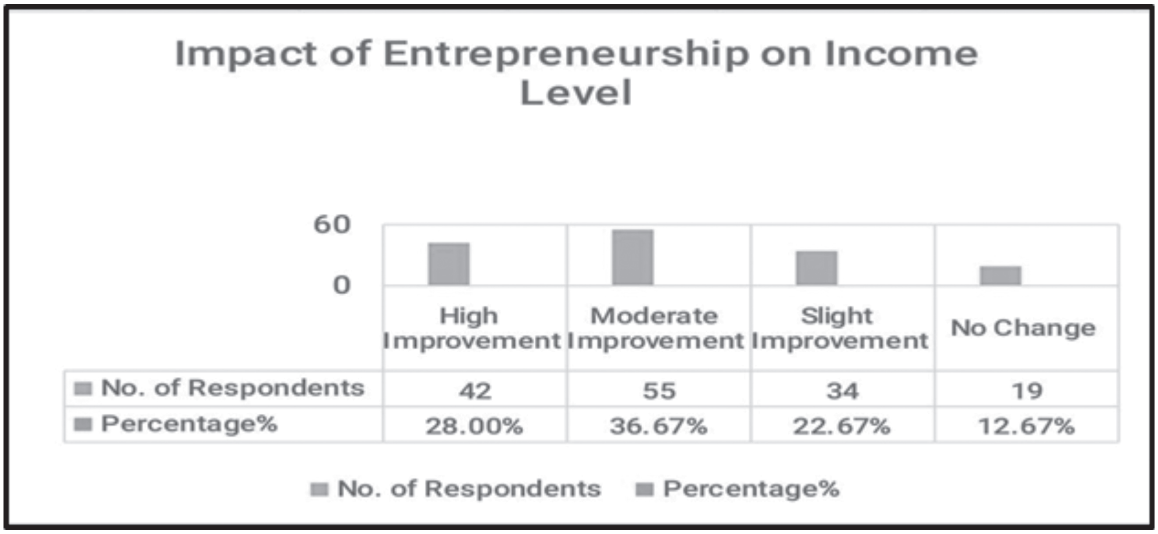

Source: Table 1.4 Converted to Chart *Fig,: 1.4

8. Findings of the Study: Women entrepreneurship is growing in India and many women are starting small businesses. Most women entrepreneurs are educated and use technology like social media for business growth. Government schemes and bank loans have helped women improve their income and social status. However, problems like lack of awareness, finance, training, and family responsibilities still create difficulties for women entrepreneurs.

9. Suggestions and Recommendations: The study shows that the government should increase awareness programs about women entrepreneurship schemes in the study area. Banks also should increase awareness programs for government schemes. To improve entrepreneurship in Bundi banks should provide easy loans at low cost interest rates. The government should provide the training programs in order to teach them business skills, marketing, and digital skills also. The government and NGOs also should improve market access for women entrepreneurship. Families and society should also support women entrepreneurship in the study area. This helps them in order to grow and extend their business in Bundi District.

10. Policy Implication: The study shows that strong government support is important for the growth of women entrepreneurship in Bundi district of Rajasthan . Awareness about government schemes, training programs, and financial support should be increased for women entrepreneurs. Skill development in marketing, business management, and digital technology can help women improve their businesses. Better market access, online platforms, mentorship, and support from banks and organizations are also needed for women's business growth.

11. Limitations of the Study: The study was based on a small sample size. It shows the findings may not represent all women entrepreneurs. Also the research was limited to selected areas and may not reflect all rural and urban areas. On the other hand, due to limited time, a long-term analysis could not be conducted. This study mainly used self-reported data. Limited availability of government reports and data may reduce the depth of the study. The government policies and digital technologies change fast.

12. Scope for Future Research: Future studies can examine women entrepreneurship in different rural and urban areas of Bundi District and compare their challenges and opportunities. Researchers can also study the role of digital technology, e-commerce, education, and government schemes in business growth. Further research may use interviews and case studies to better understand the experiences and success of women entrepreneurs.

13. Conclusion: The study shows that women entrepreneurs play an important role in Bundi District's economic and social development. Government support, financial help, and digital technology have helped many women grow their businesses, but challenges like lack of finance, training, and market access still exist. The study concludes that better policies, skill training, and technology support are needed to promote women entrepreneurship in Bundi District, Rajasthan.

References

1 Desai, V. (2009). *Dynamics of entrepreneurial development and management*. Himalaya Publishing House.

2 Global Entrepreneurship Monitor. (2021). *Global entrepreneurship monitor report 2020/2021*. GEM Consortium.

3 Government of India. (2020). *Women entrepreneurship platform: Annual report*. NITI Aayog.

4 Gupta, C. B., & Srinivasan, N. P. (2014). *Entrepreneurship development in India*. Sultan Chand & Sons.

5 Census of India. (2011). *Primary Census Abstract – Rajasthan*. Office of the Registrar General & Census Commissioner, Government of India.

6 Government of India. (2022). *Women Entrepreneurship Platform report*.

7 Government of India. (2023). *Annual report 2022–23*.

8 Gupta, P., & Verma, S. (2021). Role of government schemes in promoting women entrepreneurship in India. *International Journal of Management and Social Sciences*, *8*(3), 67–75.

9 International Labour Organization. (2020). *Women in business and management report*.

10 Kaur, H. (2019). Digital technology and women entrepreneurs in India. *International Journal of Business Studies*, *10*(1), 22–30.

https://doi.org/10.5281/zenodo.20295007 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका

शमी बरनवाल
नेट - इतिहास

सारांश (Abstract)

यह शोधपत्र भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में ब्रिटिश हुकूमत के विरुद्ध महिलाओं के अतुलनीय योगदान को प्रस्तुत करता है। इसमें विशेष रूप से उनके द्वारा किए गए कार्यों एवं उनके महत्व का विश्लेषण किया गया है। यह शोधपत्र महिला स्वतंत्रता सेनानियों की वीरता, साहस एवं राष्ट्रप्रेम की भावना को रेखांकित करता है और इस बात की भी पड़ताल करता है कि कैसे महिलाओं ने विभिन्न स्वतंत्रता आंदोलनों के दौरान पुरुषों के कंधे-से-कंधा मिलाकर आज़ादी की लड़ाई को एक जन-आंदोलन का रूप दिया।

प्रस्तावना

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान आजादी के जंग में पुरुषों के साथ महिलाओं ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यह स्वतंत्रता आंदोलन राजनीतिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए संघर्ष के साथ- साथ सामाजिक-सांस्कृतिक पुनर्जागरण का भी समय था। सामान्यतः युद्धों और संधियों के केंद्र में पुरुषों को ही रखा जाता है किंतु भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष इस मायने में अद्वितीय था, इसमें आधी आबादी की भागीदारी भी उतनी ही व्यापक और निर्णायक थी, जितनी पुरुषों की। 1857 की क्रांति से लेकर 1947 के स्वतंत्रता प्राप्ति तक भारतीय महिलाओं ने इस महायज्ञ में अपने प्राणों की आहुति दी। 19 वीं सदी में रानी लक्ष्मीबाई, बेगम हजरत महल और झलकारी बाई जैसी वीरांगनाओं ने युद्धभूमि में अंग्रेजों से लोहा लिया, वहीं 20वीं सदी में महात्मा गांधी के असहयोग, सविनय अवज्ञा और भारत छोड़ो आंदोलनों ने महिलाओं के लिए घर की चौखट को पार कर राष्ट्र सेवा के लिए सर्वस्व न्योछावर की प्रेरणा मिली। इनमें कस्तूरबा गांधी, सरोजिनी नायडू, कमला नेहरू और विजयलक्ष्मी पंडित आदि जैसी महिलाओं ने स्वतंत्रता आंदोलन का नेतृत्व किया और कई बार जेल की यातनाएं सहीं। स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं ने पर्दे से बाहर निकलकर विभिन्न आंदोलनों का नेतृत्व किया। इसमें शाही परिवारों की महिलाओं से लेकर साधारण ग्रामीण महिलाओं तक का योगदान था। महात्मा गांधी के आह्वान पर महिलाएं घरों से बाहर निकलीं और आंदोलनों को एक नई दिशा दीं।

शोध कार्यप्रणाली (Methodology)

इस शोध पत्र को तैयार करने के लिए निम्नलिखित स्रोतों का उपयोग किया गया है : प्राथमिक स्रोत (Primary Sources) जिसमें स्वतंत्रता सेनानियों के साक्षात्कार, संस्मरण, और राष्ट्रीय अभिलेखागार (National Archives of India) के दस्तावेज। द्वितीयक स्रोत (Secondary Sources) स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास पर लिखी पुस्तकें, शोध पत्रिकाएं (Journals), और ऐतिहासिक लेख।

उद्देश्य (Objective)

प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं के बहुआयामी योगदान का विश्लेषण करना और उनके द्वारा किए कार्यों को रेखांकित करना है। इसका उद्देश्य जिन महिला सेनानियों को इतिहास में उचित स्थान नहीं मिल सका, उनके बारे में जानकारी एकत्रित कर इतिहास में उचित स्थान दिलाना है और यह भी सुनिश्चित करना कि उनके इस संघर्ष ने आज की आधुनिक भारतीय महिला की सामाजिक- राजनीतिक स्थिति की नींव कैसे रखी।

स्वतंत्रता संघर्ष में महिलाओं की भूमिका

झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई : भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की प्रमुख नायिका। भारतीय इतिहास की एक ऐसी वीरांगना जिसने 1857 के प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ युद्ध का शंखनाद किया। डालहौजी की 'हड़प नीति' (Doctrine of Lapse) के पश्चात रानी लक्ष्मीबाई ने सिंहगर्जना करते हुए कहा था :

''मैं अपनी झाँसी नहीं दूँगी!''

1857 की क्रांति में अंग्रेजों से लड़ते हुए मात्र 29 वर्ष की आयु में वे वीरगति को प्राप्त हुईं। रानी की मृत्यु पर ब्रिटिश जनरल सर ह्यूरोज ने कहा था

''विद्रोहियों में यहाँ केवल एक ही 'मर्द' थी। (मुकुल,1930), (चन्द्र,1990), (कुमार,1993)

लक्ष्मीबाई के शौर्य और साहस को प्रतिबिंबित करती
सुभद्रा कुमारी चौहान की प्रसिद्ध कविता 'झाँसी की रानी'
आज भी हर भारतीय में राष्ट्रवाद की भावना जगा देती है :

**''सिंहासन हिल उठे राजवंशों ने भृकुटी तानी थी,
बूढ़े भारत में भी आई फिर से नयी जवानी थी,
चमक उठी सन सत्तावन में, वह तलवार पुरानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।''**

बेगम हजरत महल : अंग्रेजों ने अपनी 'हड़प नीति' (Doctrine of Lapse) और 'कुशासन' का आरोप लगाकर 1856 में अवध को ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिया और नवाब को कलकत्ता निर्वासित कर दिया गया। बेगम ने अपने नाबालिग बेटे बिरजिस कादिर को अवध का नवाब घोषित कर दिया और खुद उसकी संरक्षिका बनकर सत्ता की बागडोर अपने हाथों में ले ली। 1857 की क्रांति में अंग्रेजी सेना को कड़ी टक्कर दीं। उन्होंने महिलाओं को भी युद्ध के लिए प्रेरित किया। उनके दल में ऊदा देवी जैसी जांबाज महिला सेनानी शामिल थीं, जिन्होंने अकेले कई ब्रिटिश सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया था। ब्रिटिश सेनापति सर कॉलिन कैंपबेल ने मार्च 1858 में लखनऊ पर अधिकार कर लिया। रानी नेपाल की तराई में छिपकर लम्बे समय तक छापामार युद्ध करती रहीं।

इतिहास में उन्हें एक निडर और साहसी रानी के रूप में याद किया जाता है। (चन्द्र,1990), (कुमार,1993)

झलकारी बाई : झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई की नियमित सेना में महिला शाखा 'दुर्गा दल' की सेनापति थीं।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की एक ऐसी अद्वितीय और साहसी वीरांगना जिनका नाम इतिहास के पन्नों में अमर है। उनका चेहरा और कद-काठी रानी लक्ष्मीबाई से मिलता-जुलता था। इस समानता का उपयोग उन्होंने रानी की जान बचाने के लिए किया। मार्च 1858 में जब ब्रिटिश जनरल ह्यूरोज ने झाँसी के किले को चारों तरफ से घेर लिया तब झलकारी बाई ने रानी लक्ष्मीबाई का रुप धारण कर अंग्रेजों को ललकारा। ह्यूरोज और उसके सैनिक झलकारी बाई को ही असली 'रानी लक्ष्मीबाई' समझ बैठे जिससे असली रानी को सुरक्षित दूर निकलने का पर्याप्त समय मिल गया। जब झलकारी बाई को बंदी

बना लिया गया तो झाँसी के ही एक सैनिक ने पहचान लिया कि यह असली रानी नहीं, बल्कि झलकारी बाई हैं। जब जनरल ह्यूरोज ने उनसे पूछा कि उनके साथ क्या किया जाना चाहिए, तो झलकारी बाई ने गर्व से कहा- ''मुझे फाँसी दे दो।'' जनरल ह्यूरोज ने उनकी निडरता देखकर कहा था ''यदि भारत की एक प्रतिशत महिलाएँ भी इस लड़की की तरह बन जाएँ, तो अंग्रेजों को कल ही भारत छोड़ना पड़ेगा।'' (शर्मा, 2007)

मैडम भीखाजी कामा : भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की एक ऐसी प्रखर और निडर राष्ट्रवादी नेता थीं, जिन्हें 'भारतीय क्रांति की माता' (Mother of the Indian Revolution) कहा जाता है। उन्होंने न केवल भारत के भीतर बल्कि अंतरराष्ट्रीय मंच पर भारत की आजादी की आवाज बुलंद की। वे विदेशी धरती पर भारत का पहला राष्ट्रीय ध्वज फहराने वाली ऐतिहासिक शख्सियत हैं। 1907 में उन्होंने जर्मनी के स्टुटगार्ट शहर में आयोजित 'अंतरराष्ट्रीय सोशलिस्ट कांग्रेस' में भाग लिया। इस सम्मेलन में उन्होंने मंच पर खड़े होकर एक तिरंगा झंडा लहराया, जिसे उन्होंने और वीर सावरकर ने मिलकर डिजाइन किया था। झंडा फहराते हुए उन्होंने सिंहगर्जना की :

''यह भारत की स्वतंत्रता का ध्वज है। इसका जन्म हो चुका है। भारत के युवाओं के खून से यह पवित्र हो चुका है... मैं दुनिया भर के स्वतंत्रता प्रेमियों से अपील करती हूँ कि वे इस ध्वज का समर्थन करें।'' (गुप्ता, 2012)

लंदन में वे दादाभाई नौरोजी की निजी सचिव बनीं और ब्रिटिश शासन के खिलाफ भारतीयों को जागरूक करने लगीं। वहाँ उन्होंने 'पेरिस इंडियन सोसाइटी' की स्थापना की और 'वन्दे मातरम्' नामक एक क्रांतिकारी पत्रिका का संपादन भी किया। भारत सरकार ने उनके सम्मान में डाक टिकट जारी किया। भारतीय तटरक्षक बल (Indian Coast Guard) ने अपने एक जहाज का नाम 'आईसीजीएस भीखाजी कामा' रखा है। देश के कई शहरों के प्रमुख स्थानों और सड़कों के नाम उनके नाम पर रखा गया है।

प्रीतिलता वाडेदार : भारत के स्वतंत्रता संग्राम की एक महान क्रांतिकारी और स्वतंत्रता सेनानी थीं। उन्होंने ब्रिटिश शासन के खिलाफ लड़ते हुए अपने प्राणों की आहुति दे दी और आने वाली पीढ़ियों के लिए राष्ट्रवाद और वीरता का एक अप्रतिम उदाहरण पेश किया। कॉलेज के दिनों से ही उनके मन में देशभक्ति की भावना प्रबल थी। वह महान क्रांतिकारी सूर्य सेन (मास्टर दा) से बेहद प्रभावित थीं और उनके क्रांतिकारी संगठन 'इंडियन रिपब्लिकन आर्मी' (IRA) में शामिल हो गईं। उस दौर में किसी महिला का सक्रिय रूप से हथियारबंद क्रांतिकारी समूह का हिस्सा बनना एक असाधारण बात थी। 24 सितम्बर 1932 में अपने साथियों के साथ ब्रिटिश क्लब पर धावा बोलीं। पुलिस की गिरफ्त में आने पर उन्होंने साथियों की सुरक्षा के लिए 'पोटेशियम साइनाइड' खा लिया। आज भी उन्हें भारत की सबसे साहसी महिला क्रांतिकारियों में गिना जाता है। (चौधरी,2015)

बीना दास : भारत की स्वतंत्रता क्रांति की एक साहसी बेटी थीं, जिन्होंने अपनी जान की परवाह न करते हुए ब्रिटिश हुकूमत से लोहा लिया। 6 फरवरी 1932 को कोलकाता विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में बीना दास अपनी स्नातक की डिग्री लेने के बहाने बंगाल के तत्कालीन ब्रिटिश गवर्नर 'स्टैनली जैक्सन' पर मंच से भाषण देने के क्रम में लगातार 5 गोलियां चला दीं। किस्मत से गवर्नर जैक्सन बच गए। बीना दास पकड़ीं गयीं और उन पर मुकदमा चलाया गया। गिरफ्तारी के बाद उन्होंने निडर होकर कहा कि ''मैंने गवर्नर पर गोली इसलिए चलाई क्योंकि वह उस दमनकारी शासन के प्रतीक थे, जिसने मेरे देश को गुलाम बना रखा है और हमारे लोगों पर अत्याचार कर रहा है। मुझे अपनी जान की परवाह नहीं है, मैं अपने देश की आज़ादी चाहती हूँ।'' अदालत ने उन्हें 9 साल के कठोर कारावास की सजा सुनाई। भारत सरकार ने उनके योगदान के लिए 1960 में उन्हें 'पद्म श्री' से सम्मानित किया था। बीना दास का नाम इतिहास के पन्नों में स्वर्ण अक्षरों से लिखा गया है। (फोर्ब्स, 1999)

गांधीवादी आंदोलन में महिलाओं की भागीदारी

सरोजिनी नायडू : भारत की एक महान स्वतंत्रता सेनानी, प्रखर कवयित्री और कुशल राजनीतिज्ञ थीं। उन्हें उनकी

सुरीली कविताओं और प्रभावी भाषणों के कारण 'भारत कोकिला' (The Nightingale of India) कहा जाता है। वे बचपन से ही प्रतिभावान थीं। उनकी प्रमुख कविता कृतियाँ 'द गोल्डन थ्रेशोल्ड' (The GoldenThreshold),1905

'द बर्ड ऑफ टाइम' (The Bird of Time), 1912

स्वतंत्रता संग्राम में वे महात्मा गांधी की घनिष्ठ सहयोगी थीं। उन्होंने 1930 के नमक सत्याग्रह (दांडी मार्च) और 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में सक्रिय भूमिका निभाई और जेल भी गई। 1925 के कानपुर अधिवेशन में वे कांग्रेस की अध्यक्ष बनीं। (वे कांग्रेस की अध्यक्ष बनने वाली पहली भारतीय महिला थीं)। आजादी के बाद वे उत्तर प्रदेश की पहली महिला राज्यपाल बनीं। वे भारत में किसी भी राज्य की राज्यपाल बनने वाली पहली महिला थीं। 2 मार्च 1949 को लखनऊ में उनका निधन हुआ। (सेन,1966),(कौल,1977)

कस्तूरबा गांधी : भारत के स्वतंत्रता संग्राम की एक ऐसी मूक नायक थीं, जिन्होंने न केवल महात्मा गांधी के कदमों से कदम मिलाकर काम किया, बल्कि खुद भी अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति से आंदोलनों का नेतृत्व किया। उनकी भूमिका सिर्फ गांधी जी की पत्नी होने तक सीमित नहीं थी, वह अपने आप में एक साहसी स्वतंत्रता सेनानी और समाज सुधारक थीं। दक्षिण अफ्रीका में भारतीय विवाहों को अमान्य घोषित करने तथा दमनकारी कर के विरोध में पहला सत्याग्रह किया। उन्हें 3 महीने की कठोर कारावास की सजा दी गयी। भारत लौटने के बाद बिहार के चंपारण में नील की खेती करने वाले किसानों के हक की लड़ाई में भी सक्रिय भूमिका निभाई। महिलाओं को स्वच्छता, स्वास्थ्य और शिक्षा के प्रति जागरूक किया। असहयोग और सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान महिलाओं को विदेशी कपड़ों का बहिष्कार करने और खादी अपनाने के लिए प्रेरित किया। 9 अगस्त 1942 को जब गांधी जी और अन्य बड़े नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया तब कस्तूरबा ने जनसभा को संबोधित करने का फैसला किया। सभा स्थल पर पहुंचने से पहले ही उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और पुणे के आगा खां पैलेस में नजरबंद कर दिया गया। जेल में रहते हुए 22 फरवरी 1944 को उनका निधन हो गया। महात्मा गांधी ने अपनी आत्मकथा में स्वीकार किया है कि उन्होंने 'सत्याग्रह' (अहिंसक प्रतिरोध) का पहला पाठ कस्तूरबा से ही सीखा था।श कस्तूरबा गांधी केवल महात्मा गांधी की परछाई नहीं थीं बल्कि वह भारत के स्वतंत्रता संग्राम की वह रीढ़ थीं, जिन्होंने देश की लाखों महिलाओं को घर की दहलीज पार कर आजादी की लड़ाई में शामिल होने की प्रेरणा दीं। (नायर,2015), (चक्रवर्ती, 2020)

अरुणा आसफ अली : भारत की स्वतंत्रता संग्राम की एक निर्भीक क्रांतिकारी और राजनेता थीं। उन्हें 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान दिखाए गए अदम्य साहस के लिए श1942 के आंदोलन की वीरांगना कहा जाता है। 9 अगस्त 1942 को जब ब्रिटिश सरकार ने महात्मा गांधी सहित सभी बड़े नेताओं को गिरफ्तार कर लिया तब अरुणा आसफ अली ने बॉम्बे के ग्वालिया टैंक मैदान में तिरंगा फहराकर 'भारत छोड़ो आंदोलन' की औपचारिक शुरुआत की तथा गिरफ्तारी से बचने के लिए वे भूमिगत हो गईं। उन्होंने जयप्रकाश नारायण, अच्युत पटवर्धन और राम मनोहर लोहिया के साथ मिलकर गुप्त रूप से आंदोलन का नेतृत्व किया और 'इंकलाब' नामक पत्रिका का संपादन किया। 1942 उनके जीवन का सबसे ऐतिहासिक वर्ष रहा। 1958 में दिल्ली की प्रथम महिला मेयर बनीं। 29 जुलाई 1996 को उनका निधन हुआ। 1997 में मरणोपरांत देश का सर्वोच्च सम्मान 'भारत रत्न' से सम्मानित किया गया।(थॉमस,1997), (पंत, 2002)

उषा मेहता : डॉ. उषा मेहता केवल एक स्वतंत्रता सेनानी नहीं बल्कि भारत में श्वैकल्पिक मीडियाश और 'सिटिजन जर्नलिज्म' की अग्रदूत थीं। 14 अगस्त 1942 को जब महात्मा गांधी ने श्करो या मरोश का नारा दिया और सभी शीर्ष नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया, उन्होंने गुप्त रूप से 'कांग्रेस रेडियो' का संचालन किया ताकि अंग्रेजों से बचकर क्रांतिकारियों तक संदेश पहुँचाया जा सके। 22 वर्षीय छात्रा के रूप में उषा मेहता का साहस अद्वितीय था। बचपन से ही गाँधीवादी विचारों से प्रभावित थीं। प्रसारण के दौरान ही 12 नवंबर 1942 को पुलिस द्वारा पकड़ी गईं तथा यरवदा जेल में 4 साल की कठोर कैद की सजा हुई। जेल में क्रूर यातनाएं सहने के बाद भी उन्होंने अपने साथियों के नाम उजागर नहीं किए जो उनके अटूट राष्ट्रवाद को दर्शाता है। वे भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की अग्रणी वीरांगना थीं। आजादी के बाद उन्होंने मुंबई विश्वविद्यालय में राजनीति विज्ञान विभाग के अध्यक्ष के रूप में कार्य किया। 1998 में भारत सरकार द्वारा पद्म विभूषण से सम्मानित किया

गया। उनका जीवन यह सिद्ध करता है कि शारीरिक बल से बड़ा आत्मबल होता है। आज के युग में उनका साहस और मूल्य युवाओं के लिए प्रेरणास्रोत हैं। (बख्शी,1999)

कैप्टन लक्ष्मी सहगल : कैप्टन लक्ष्मी सहगल जिन्हें डॉ. लक्ष्मी स्वामीनाथन के नाम से भी जाना जाता है, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की एक क्रांतिकारी, स्वतंत्रता सेनानी और 'आज़ाद हिंद फ़ौज' (INA) की प्रमुख सैन्य अधिकारी थीं। वे पेशे से एक डॉक्टर थीं लेकिन देश की आज़ादी के लिए उन्होंने हथियारों को अपनाया। (फोर्ब्स,1996, पृ. 210)

1940 में वे सिंगापुर चली गईं, जहाँ उन्होंने गरीब भारतीय प्रवासियों और मजदूरों के लिए एक मुफ्त क्लिनिक खोला और उनका इलाज किया। 1942 में द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान जब जापानी सेना ने सिंगापुर पर कब्ज़ा कर लिया तब डॉ. लक्ष्मी ने घायल युद्धबंदियों की मदद की। 1943 में जब नेताजी सुभाष चंद्र बोस सिंगापुर आए तो डॉ. लक्ष्मी उनसे बेहद प्रभावित हुईं। नेताजी ने उन्हें 'रानी झाँसी रेजिमेंट' का कमांडिंग ऑफिसर बनाया और उन्हें 'कैप्टन' की रैंक दी। तब से वे देश भर में 'कैप्टन लक्ष्मी सहगल' के नाम से प्रसिद्ध हो गईं। (फोर्ब्स,1996, पृ. 210)

मई 1945 में ब्रिटिश सेना द्वारा उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और मार्च 1946 तक भारत में नजरबंद (House Arrest) रखा गया। जब उन्हें भारत लाया गया तो जनता ने उनका एक नायक की तरह स्वागत किया। (सहगल,1997, पृ. 45-50) 1947 में उन्होंने बांग्लादेश संकट (1971) के दौरान शरणार्थियों के लिए शिविर लगाए और भोपाल गैस त्रासदी (1984) के पीड़ितों का मुफ्त इलाज किया। 1998 में भारत सरकार ने उन्हें देश के दूसरे सबसे बड़े नागरिक सम्मान 'पद्म विभूषण' से सम्मानित किया। साल 2002 में वामपंथी दलों (Left Parties) ने उन्हें डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम के खिलाफ भारत के श्राष्ट्रपति पद का उम्मीदवारश बनाया था। 23 जुलाई 2012 को कानपुर में उनका निधन हुआ। (गुहा, 2007, पृ. 742)

मातंगिनी हाजरा : भारत के स्वतंत्रता संग्राम की एक बेहद साहसी और महान महिला क्रांतिकारी थीं। गाँधीवादी विचारों से जुड़े होने के कारण प्यार से उन्हें "Old Lady Gandhi" भी कहा जाता है। वे महात्मा गांधी के विचारों से बहुत प्रभावित थीं। जब गांधी जी ने असहयोग आंदोलन शुरू किया तो उन्होंने इसमें सक्रिय रूप से भाग लिया। उन्होंने गांधीवादी जीवनशैली अपनाई, खादी काता और सूत बुना।

सविनय अवज्ञा आंदोलन और नमक सत्याग्रह आंदोलन के दौरान उन्होंने बंगाल के मिदनापुर में नमक कानून तोड़ने के लिए आयोजित विरोध प्रदर्शनों और मार्चों में हिस्सा लिया। नमक कानून का उल्लंघन करने के कारण उन्हें ब्रिटिश सरकार द्वारा गिरफ्तार भी किया गया और उन्हें कुछ समय जेल में काटना पड़ा। जेल से छूटने के बाद भी उन्होंने ब्रिटिश करों (Tax) के खिलाफ विरोध प्रदर्शन जारी रखा। मातंगिनी हाजरा के जीवन का सबसे ऐतिहासिक और वीरतापूर्ण क्षण 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान आया जब उनकी उम्र लगभग 73 वर्ष थी। 29 सितंबर 1942 को उन्होंने मिदनापुर के तामलुक में लगभग 6,000 प्रदर्शनकारियों (जिनमें ज्यादातर महिलाएं थीं) के एक जुलूस का नेतृत्व किया। उनका उद्देश्य तामलुक पुलिस स्टेशन पर भारतीय तिरंगा फहराना था। जब जुलूस आगे बढ़ा तो ब्रिटिश पुलिस ने भीड़ पर गोलियां चलानी शुरू कर दीं। मातंगिनी हाजरा को एक के बाद एक तीन गोलियां लगीं। लेकिन अद्भुत साहस का परिचय देते हुए उन्होंने मरते दम तक तिरंगे झंडे को नीचे नहीं गिरने दिया और ष्वंदे मातरमष का नारा लगाते हुए देश के लिए अपने प्राण न्यौछावर कर दिए। (कौर, 1992, पृ. 234)

निष्कर्ष (Conclusion)

उपरोक्त अध्ययन और विश्लेषण के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि भारतीय स्वतंत्रता संग्राम केवल पुरुषों के शौर्य की गाथा नहीं था बल्कि यह भारत की नारी शक्ति के अप्रतिम साहस, त्याग और सांगठनिक क्षमता का भी जीवंत प्रमाण था। 1857 के सैन्य विद्रोह की चिनगारी से लेकर 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन तक महिलाओं ने हर मोर्चे पर अपनी उपस्थिति दर्ज कराई। उन्होंने यह साबित कर दिया कि वे मूक दर्शक नहीं बल्कि आंदोलन की रणनीतिकार और मार्गदर्शक भी हैं।

बहुआयामी भागीदारी : जहाँ एक ओर उन्होंने गांधी जी के आह्वान पर अहिंसक सत्याग्रहों, मद्यनिषेध और खादी प्रचार का नेतृत्व किया, वहीं दूसरी ओर आज़ाद हिंद फ़ौज (झांसी की रानी रेजीमेंट) और क्रांतिकारी गतिविधियों में बंदूक उठाकर सशस्त्र क्रांति का भी बिगुल फूंका। अंततः यह कहा जा सकता है कि आज का स्वतंत्र और लोकतांत्रिक भारत, जहाँ महिलाएं राजनीति, विज्ञान, सेना और व्यापार जैसे हर क्षेत्र में नेतृत्व कर रही हैं, उसकी नींव इसी स्वतंत्रता संग्राम के दौरान रखी गई थी। इन वीरांगनाओं ने न केवल देश को आज़ाद कराया, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए 'सशक्त भारतीय नारी' का एक नया ढांचा तैयार किया। इतिहास में उनके इस योगदान का सही मूल्यांकन करना केवल अतीत को याद करना नहीं, बल्कि भविष्य की नारीवादी चेतना को एक नई दिशा देना है।

संदर्भ (References)

सरकार, सुमित (1983), आधुनिक भारत (1885-1947), मैकमिलन, नई दिल्ली।

कुमार, आर. (1993), द हिस्ट्री ऑफ डूइंग : एन इलस्ट्रेटेड अकाउंट ऑफ मूवमेंट्स फॉर वीमेन्स राइट्स एंड फेमिनिज्म इन इंडिया (भारतीय महिला आंदोलन का इतिहास), काली फॉर वीमेन, नई दिल्ली।

चन्द्र, प्रो. बिपन (1990), आधुनिक भारत का इतिहास,

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (NCERT), नई दिल्ली।

फोर्ब्स, गेराल्डिन (1996), विमेन इन मॉडर्न इंडिया (Women in Modern India), कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 121-125। (स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी का विश्लेषण)

सहगल, लक्ष्मी (1997), ए मूनलाइट डेस्टिनीः माई डेज विद सुभाष चंद्र बोस एंड द आई.एन.ए. (A Moonlight Destiny: My Days with Subhas Chandra Bose and the INA), नई दिल्ली : हर-आनंद पब्लिकेशन्स, पृ. 45-50।

गुहा, रामचंद्र(2007), इंडिया आफ्टर गांधी (India After Gandhi), पेंगुइन बुक्स, पृ. 742।

कौर, मनमोहन (1992), विमेन इन इंडियाज फ्रीडम स्ट्रगल (Women in India's Freedom Struggle), स्टर्लिंग पब्लिशर्स, पृ. 234।

सावरकर, वी.डी. (1909), 1857 का स्वातंत्र्य समर,

प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली (हिंदी संस्करण) / राजपाल एंड संस।

वर्मा, वृंदावनलाल(1946), झांसी की रानी (उपन्यास), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।

ग्रोवर, बी. एल.(1997), Madame Cama: Bhikaiji Cama, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार।

बख्शी, एस. आर. (1999), Freedom Fighters of India: Dr- Usha Mehta

सरकारी अभिलेख (Archival Records)

The Secret Radio Station of 1942, (ऐतिहासिक अभिलेखागार का तकनीकी शोध), 2021.

भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार (National Archives of India & NAI), नई दिल्ली।

इंपीरियल गजेटियर ऑफ इंडिया (Imperial Gazetteer of India), क्लेरेंडन प्रेस (Clarendon Press), ऑक्सफोर्ड (ब्रिटिश सरकार के अधीन)।

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. गौरव नायक

for the paper titled

लोकाचार और शास्त्र के अंतर्संबंध : ग्रामीण भारत के सांस्कृतिक व्यवहार का विश्लेषण

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. रेखा कुमारी त्रिपाठी

अतिथि प्राध्यापिका

(हिंदी एवं अनुवाद विभाग)

हिंदी विश्वविद्यालय, हावड़ा

for the paper titled

संस्कृति और संवेदना : 'मेरे राम का मुकुट भीग रहा है' का मूल स्वर

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Uma Saini
Assistant Professor, Department of Education,
Institute of Advanced Studies In Education (Deemed to be) University,
Gandhi Vidya Mandir Sardarshahr.

for the paper titled

कृत्रिम बुद्धिमत्ता और साहित्य लेखन के प्राचीन एवं नूतन आयाम : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

Impact Factor
6.521

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. शिव दर्शन दुबे

for the paper titled

स्वर की अवधारणा (दार्शनिक दृष्टिकोण)

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. P. Srivalli
Lecturer In Sanskrit , Skr Govt. Degree College (W)
Rajamahendravaram, Andhra Pradesh

for the paper titled

भरतनाटयशास्त्रस्य वैशिष्टयम्

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights),
DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. सुशीला यादव
सहायक आचार्य, हिन्दी
बैजनाथ चौधरी राजकीय महिला महाविद्यालय,
नांगल चौधरी, जिला-महेन्द्रगढ़ (हरियाणा)

for the paper titled

रांगेय राघव के कथा साहित्य में उपनिवेशवाद

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

प्रा. डॉ. पवन नागनाथ एमेकर
के.बापूसाहेब पाटील एकंबेकर महाविघालय
हणेगाव ता.देगलूर जि.नांदेड महाराष्ट

for the paper titled

भारतीय संस्कृति और 'जड़े' कहानी का जीवन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

ज्योति कुमारी
शोधार्थी, इतिहास विभाग,
बी.आर. अंबेडकर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर

for the paper titled

तेभागा आंदोलन और फ्लड कमिशन : सिफारिशों से संघर्ष तक का सफर

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639
April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. दीपक शर्मा

शोध निर्देशक : (सहायक प्रोफेसर)

शिक्षा संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय

प्रियंका शर्मा

शोधकर्त्री : शिक्षा संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय

for the paper titled

राजस्थान के दक्षिणांचल कवियों का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

मेनका कुमारी साह
हिन्दी विभाग,
नागालैंड विश्वविद्यालय, कोहिमा

for the paper titled

‘तीसरी कसम’ कहानी : प्रेम का लोक वा लोक का प्रेम

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar ‘Rishi Verma’
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

अंगेश कुमार सिंह, जितेन्द्र कुमार

(शोधार्थी, हिन्दी)

वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय जौनपुर, उत्तर प्रदेश

डॉ. सर्वेश्वर प्रताप सिंह

(शोध निर्देशक)

वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय जौनपुर, उत्तर प्रदेश

for the paper titled

पाश्चात्य संस्कृति और भारतीय ज्ञान परंपरा : एक संक्षिप्त परिचय

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

Impact Factor
6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Vijata Kumari
Research Scholar,
Education Department ,M. J. P. Rohilkhand University Bareilly U. P.
Prof Preeti Khanna
Active Principal, Vardhaman College, Bijnor, Uttar Pradesh.

for the paper titled

STUDY OF THE LONELINESS AMONG SECONDARY LEVEL SCHOOL STUDENTS: AN EMERGENT CONCERN

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights),
DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Sanu Thomas
Assistant Professor,
Department of Hindi
Catholicate College, Pathanamthitta
Kerala

for the paper titled

विष्णु प्रभाकर की कहानियों में चित्रित आर्थिक अभाव

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights),
DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Rosy P. Varghese
Assistant Professor
Department of Hindi
Catholicate College, Pathanamthitta
Kerala

for the paper titled

बाल मन, साहित्य का संसार

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights),
DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

Impact Factor
6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

मोनिका
पीएच डी शोधार्थी
हिन्दी-विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ

for the paper titled

'वत्सला' खंड काव्य में यशोदा के मातृत्व की अभिव्यक्ति

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Tikaram Sarthi "Hasmukh"
Lecturer,
Govt. H.S.S. Churteli (Dabhara)
Dist-Sakti (Chhattisgarh)

for the paper titled

जिंदगी : अनुभव, संघर्ष और सौन्दर्य का काव्य
(मुकेश कुमार ऋषि वर्मा की कविता का एक अध्ययन)

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. जगदीश प्रसाद कड़वासरा
शोध निर्देशक : (सहायक प्रोफेसर)
कला संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय
मोहम्मद रमजान
शोधकर्ता : कला संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय

for the paper titled

मानवाधिकार का अवधारणात्मक विवेचन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights),
DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

नरेन्द्र कुमार वर्मा

(सहायक आचार्य)

राजस्थान शिक्षक प्रशिक्षण विद्यापीठ

शाहपुरा बाग जयपुर

for the paper titled

भाषा और संस्कृति का अन्तर्संबंध- भारतीय संदर्भ में

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Pulak chan Das
M.A. in Philosophy, B.Ed., NET
School Teacher (Assistant Teacher)

for the paper titled

ANALYSIS OF NYAYAS (MAXIMS) AS DEPICTED IN INDIAN PHILOSOPHICAL PRINCIPLES

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Ravindar Kumar
Assistant Professor
Faculty of Education
IASE (Deemed to be University)
Gandhi Vidya Mandir, Sardarshahar (Rajasthan)

for the paper titled

The Role of Artificial Intelligence in Educational Research

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

प्रो. रवि रंजन कुमार

प्रोफेसर, हिन्दी विभाग

नागालैंड विश्वविद्यालय, कोहिमा

for the paper titled

झारखंड की आदिवासी भाषाएँ : संकटग्रस्त विरासत और संरक्षण की रणनीतियाँ

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. बीरम देव

सहायक आचार्य, हिंदी

राजकीय कन्या महाविद्यालय, बूंदी

for the paper titled

हिंदी प्रवासी साहित्य का राजनैतिक और भौगोलिक आयाम

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

श्वेता कुमारी

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग

डॉ. लक्ष्मी कुमारी

सहायक प्राध्यापक

वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा, बिहार

for the paper titled

राजनीतिक संक्रमण के दौर में नेपाल और क्षेत्रीय भू-राजनीति

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

श्रीकांत सिंह

शोध निर्देशक, पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग,

कॉलेज ऑफ कॉमर्स आट्र्स एंड साइंस कॉलेज पटना, बिहार

राजन कार्तिकाय

शोधार्थी, पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय पटना बिहार

for the paper titled

सुरेन्द्र वर्मा के नाटकों में स्त्री-पुरुष-सम्बन्ध

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. अनु पाण्डेय

असिस्टेंट प्रोफेसर

श्री आई.जे.पटेल बीएड.कॉलेज, मोगरी- 388345, आनंद, गुजरात

for the paper titled

कृत्रिम बुद्धिमत्ता : अवधारणा से क्रांति तक शिक्षा और समाज के परिप्रेक्ष्य में

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. रिन्कू
सहायक प्राध्यापक, रक्षा अध्ययन विभाग
जे.पी.जी.सी. रादौर, यमुनानगर

for the paper titled

दक्षिण एशिया पर बाहरी शक्तियों का प्रभाव तथा क्षेत्रीय राजनीति

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

अभिजीत सिंह

शोधार्थी

दिल्ली विश्वविद्यालय

for the paper titled

जायसी का लोक

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

मलय गोप

शोधार्थी

हिन्दी विभाग

नागालैंड विश्वविद्यालय, कोहिमा

for the paper titled

मोहन राकेश का अनुवाद साहित्य : उपलब्धि और सीमाएँ

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. मनोज कुमार
सह-प्रोफेसर, हिंदी विभाग,
सत्यवती कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय

for the paper titled

समकालीन हिंदी कविता में सांप्रदायिकता

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

शुभम् दुबे
(शोध छात्र)
के.बी.पी.जी. कालेज मिरजापुर

for the paper titled

कलात्मक विरासत स्थापत्य, मूर्ति शिल्प एवं चित्रकला

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

Impact Factor
6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. राजेश शर्मा

आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

भंवर लाल शर्मा

पी.एच.डी. शोद्यार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

for the paper titled

उच्च माध्यमिक विद्यालय के शैक्षिक वातावरण का विद्यार्थियों की समस्या समाधान योग्यता एवं शैक्षिक उपलब्धियों के संबंध में अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. अनुराधा सिंह

सहायक आचार्या, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

हेमलता

पी.एच.डी. शोद्यार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

for the paper titled

राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व गुणों, पारिवारिक संस्कारों और शैक्षिक निष्पति के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. नीतू कौशल
(सहायक आचार्य), हिन्दी विभाग
पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला, पंजाब

for the paper titled

व्यथित नारी की अंतश्चेतना में निहित जिजीविषा का स्वर : 'मंजिल दर मंजिल'

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

ڈاکٹر پرویز اختر

سابق صدر شعبۂ اردو

گڈا کالج، گڈا (سدھو کانہو یونیورسٹی، دمکا)

for the paper titled

غیاث احمد گدی کی افسانہ نگاری کا ایک تنقیدی جائزہ

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

रत्ना सिंह

शोध छात्रा, हिंदी विभाग

म.गाँ.चि.ग्रा.वि.वि. चित्रकूट सतना (मध्य प्रदेश)

प्रो. ललित कुमार सिंह

अध्यक्ष, हिंदी विभाग, म.गाँ.चि.ग्रा.वि.वि. चित्रकूट सतना (मध्य प्रदेश)

for the paper titled

मुंशी प्रेमचंद के कथा साहित्य में किसान जीवन का यथार्थ

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

श्रीलक्ष्मी. एस. आर.
शोध छात्रा
महात्मा गांधी कॉलेज, तिरुवनंतपुरम

for the paper titled

किन्नर श्रापित नहीं है- 'श्रापित किन्नर' उपन्यास के संदर्भ में

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Chintu
Research Supervisor, (Assistant Professor),
PG Dept, Political Science, VKSU, Ara.
Jyoti Prakash
Research Scholar, PG Dept, Political Science, VKSU, Ara.

for the paper titled

INDIA'S TROUBLES IN A FRIENDLESS WORLD

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights),
DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. अनामिका जैन

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग

जैन कन्या पाठशाला पी.जी. कॉलेज, मुजफ्फरनगर

for the paper titled

भारतीय संविधान के आर्किटेक्ट : बाबासाहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Rakesh Joshi
Research Scholar,
Department of Public Administration
Uttarakhand Open University, Haldwani

for the paper titled

Healthcare Issues in the Hilly Regions of Kumaon Division, Uttarakhand: An analysis of Recent Protests

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Navneet Kaur
Phd Scholar, Fashion Designing
Roll no - 252730004
Assistant professor in Faculty of Visual and Performing Arts
Guru Kashi University

for the paper titled

Synthesising Sustainable and Conceptual Fashion: A Multidisciplinary Framework for Regenerative Design

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights),
DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Nida Sherwani
Research Scholar, School of Commerce and Management,
Career Point University, Kota, Raj., India
Dr. Sandeep Kumar
Associate Professor, School of Commerce and Management,
Career Point University, Kota, Raj., India

for the paper titled

A Multidimensional Study of Women Entrepreneurship Development in Bundi, Rajasthan: Economic, Social, Technological and Policy Perspectives

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights),
DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. नागेश्वर कुमार

सहायक प्राध्यापक, इतिहास विभाग

बी.एम.डी. कॉलेज दयालपुर, वैशाली

(बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय मुजफ्फरपुर)

for the paper titled

बिहार में महिला पुनर्जागरण और राष्ट्रीय आंदोलन : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. बिन्दु भूषण सिंह
पूर्व शोध अध्येता, विश्वविद्यालय इतिहास विभाग,
बी०आर०ए०बिहार विश्वविद्यालय मुजफ्फरपुर

for the paper titled

भारत में वामपंथी आंदोलन : उदय, विकास और समकालीन प्रासंगिकता

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. बिन्दु भूषण सिंह
पूर्व शोध अध्येता, विश्वविद्यालय इतिहास विभाग,
बी०आर०ए०बिहार विश्वविद्यालय मुजफ्फरपुर

for the paper titled

भारत में वामपंथी आंदोलन : उदय, विकास और समकालीन प्रासंगिकता

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639
April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

शमी बरनवाल

नेट - इतिहास

for the paper titled

सिंधु घाटी सभ्यता की नगर नियोजन प्रणाली वर्तमान शहरीकरण के संदर्भ में

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

शमी बरनवाल

नेट - इतिहास

for the paper titled

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights),
DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

भोला शंकर शर्मा

शोधार्थी कला व मानविकी विद्यालय भूगोल विभाग, कैरियर पॉइंट यूनिवर्सिटी कोटा राजस्थान

डॉ. प्रमोद कुमार जनोलिया

सह आचार्य कला व मानविकी विद्यालय भूगोल विभाग, कैरियर पॉइंट यूनिवर्सिटी कोटा राजस्थान

for the paper titled

सवाई माधोपुर जिले में जलवायु परिवर्तन का कृषि और भूमि उपयोग प्रतिरूप पर पड़ने वाले प्रभावों का एक विस्तृत भौगोलिक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. मधुकांत

(सूर पुरस्कार विजेता)

प्रज्ञा साहित्यिक मंच

211 एल, मॉडल टाउन, डबल पार्क, रोहतक

for the paper titled

समीक्षा : आज का द्रोण

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

शमी बरनवाल

नेट - इतिहास

for the paper titled

प्राचीन भारत में बौद्ध धर्म का सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रभाव : एक ऐतिहासिक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

शमी बरनवाल

नेट - इतिहास

for the paper titled

1857 की क्रांति : कारण, स्वरूप एवं परिणाम

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

संजय कुमार
शोधार्थी,
इतिहास विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

for the paper titled

चमार रेजिमेंट का इतिहास : सामाजिक न्याय, सैन्य चेतना और राष्ट्रवाद

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Anupama
Assistant Professor, Department of Hindi
Mount Carmel College, Autonomous,
#58, Palace Road, Abshot Layout,
Vasanth Nagar, Bangalore

for the paper titled

समाज और स्त्री के अंतर्संबंध : मैत्रेयी पुष्पा के साहित्य का आलोचनात्मक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. रघुवीर दान चारण

सीकर, राजस्थान

for the paper titled

इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यासों में पर्यावरण चेतना

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights),
DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. राधा वर्मा

सहायक आचार्य हिंदी

राजकीय महाविद्यालय कंडाघाट

सोलन-173215 (हि.प्र.)

for the paper titled

उदय प्रकाश की कविताओं में स्त्री विमर्श

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor
6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

राजु पासवान
शोधार्थी, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग,
जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार

for the paper titled

रजतरानी मीनू की कहानियों में अभिव्यक्त दलित स्त्रियों की व्यथा-कथा

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

राजु पासवान
शोधार्थी, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग,
जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार

for the paper titled

प्रेमचंद कृत कहानियों में नारी संवेदना

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July - September 2025, Vol. 12, Issue-3

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights),
DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

राजु पासवान
शोधार्थी, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग,
जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार

for the paper titled

भोजपुरी लोकगीतों में सामाजिक समरसता

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July - September 2024, Vol. 11, Issue-3

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

Impact Factor
6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

राजु पासवान
शोधार्थी, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग,
जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार

for the paper titled

कृष्णा सोबती के उपन्यासों में स्त्री पात्रों का मुक्ति संघर्ष

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

राजु पासवान
शोधार्थी, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग,
जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार

for the paper titled

'बकरी' नाटक में भ्रष्ट राजनीति का यथार्थ मूल्यांकन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October - December 2024, Vol. 11, Issue-4

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights),
DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

नीलम यादव

शोधार्थी - श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय हनुमानगढ़, राजस्थान

डॉ. सुरेश कड़वासरा

शोध निर्देशक, प्रोफेसर, हिंदी विभाग

डॉ. रश्मि सोनी

सह-शोध निर्देशक, सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग, श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय हनुमानगढ़, राजस्थान

for the paper titled

भारतीय स्त्री चिंतन और नारीवाद की वैदिक दृष्टि

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Salini. C
Associate Professor,
Dept of Hindi, Govt. College For Women,
Thiruvananthapuram, University of Kerala

for the paper titled

वैदिक कालीन संस्कृति एवं समाज : एक परिचय

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights),
DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

अलिशा बेगम एन

शोधार्थी

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा

त्याग राज नगर, चेन्नई

for the paper titled

उषाकिरण खान के उपन्यासों में चित्रित समाज में परिवर्तन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Prity Kumari
Research Fellow
Magadh University, Bodh Gaya

for the paper titled

Suicide Among Children Following Examination Failure: A Critical Analysis

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

धर्मेन्द्र कुमार पाटनवार

शोधार्थी (हिन्दी) अटल बिहारी बाजपेयी विश्वविद्यालय बिलासपुर छत्तीसगढ़

डॉ. अंजली शर्मा

शोध निदेशक (प्राचार्य)

वीरांगना अवन्ती बाई लोधी महाविद्यालय पथरिया जिला-मुंगेली (छत्तीसगढ़)

for the paper titled

दुर्गा प्रसाद पारकर के साहित्य में छत्तीसगढ़ी ग्रामीण जीवन के परिदृश्य

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights),
DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. बनुजा मेहेर

सहायक प्राध्यापक

स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग

पंचायत महाविद्यालय, बरगढ़, ओड़िशा

for the paper titled

डिजिटल पत्रकारिता का बदलता परिदृश्य : प्रभाव, चुनौतियाँ और भविष्य की संभावनाएँ

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor

Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'

M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

MA (Sanskrit), M. Ed. UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Simran Jaiswal
Research Scholar
Hindi Department
Presidency University, Kolkata

for the paper titled

गंगाप्रसाद विमल के उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ का बहुआयामी स्वरूप

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

April - June 2026, Vol. 13, Issue-2

Managing Editor
Dr. Mukesh Kumar 'Rishi Verma'
M.A., Vidya Vachaspati, F.H.R. (Human Rights), DCA, Certificate Course in Urdu.

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
MA (Sanskrit), M. Ed.
UGC NET/ JRF, Ph.D.

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**